अर्थशास्त्र ग्रंथमाला प्रथम पुष्प

संपत्ति का उपभोग

[द्रव्य के उपार्जन से उसका सदुपयोग अधिक महत्व-पूर्ण है]

(भारतवर्षीय हिन्दी अर्थशास्त्र-परिषद द्वारा
सपादित और स्वीकृत)

लेखक
दयाशंकर दुबे एम्० ए०, एल् एल्० बी०
अर्थशास्त्र अध्यापक प्रयाग विश्वविद्यालय
और
मुरलीधर जोशी एम्० ए०
रिसर्च-स्कालर, प्रयाग विश्वविद्यालय

प्रकाशक
साहित्य-मंदिर, दारागंज, प्रयाग

प्रथम बार] १९३४ [मूल्य १।)
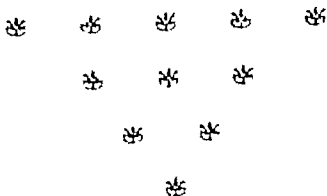
अपनी बात

अर्थशास्त्र-विषयक पुस्तकों के अध्ययन की आवश्यकता प्रत्येक पढ़े लिखे व्यक्ति को क्यों है यह प्रश्न यदि साधारणतया किसी ऐसे शिक्षित व्यक्ति से भी पूछ दिया जाय जिसे अर्थशास्त्र विषयक पुस्तकों के अध्ययन का सुअवसर न मिला हो, तो वह यकायक अस्थिर हो उठेगा। वह बहुत सोच-समझकर उत्तर देने का प्रयत्न करेगा। फिर भी अधिक स्वाभाविक यही है कि उसका उत्तर असन्तोष जनक ही हो। क्या आपने कभी सोचा है कि इसका कारण क्या है? बात यह है कि साधारण जन-समाज की यह धारणा सी बनी हुई है कि अर्थशास्त्र तो केवल कालेजों के विद्यार्थियों के अध्ययन का वस्तु है। और यह धारणा कितनी भ्रमात्मक है जरा सोचिये तो सही! सच पूछिये तो अर्थशास्त्र विषय का अध्ययन प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति के लिए अनिवार्य रूप से आवश्यक है। अर्थशास्त्र राष्ट्र की श्रीवृद्धि का मुख्य साधन है। अर्थ शास्त्र समाज की आन्तरिक शक्ति है उसको उत्पत्ति के लिए जागरण का बिगुल। परन्तु यह कितने खेद की बात है कि भारत की सर्वमान्य राष्ट्रभाषा हिन्दी का साहित्य अर्थशास्त्र विषयक पुस्तकों से अभी तक असम्पन्न बना हुआ है। चाहिये तो यह था कि इस विषय की पुस्तकें भारतवर्ष भर में राजभवनों से लेकर झोपड़ियों तक भरी पड़ी रहतीं; आवश्यकता तो इस बात की थी कि राष्ट्र के इस नव-निर्माणकाल में हमारे यहाँ के नागरिक और कृषक दोनों ही

का यह प्रत्यक्ष रूप हुआ। पर अप्रत्यक्ष रूप से भी वे हिन्दी की बहुत बड़ी सेवा कर रहे हैं। उन्होंने उत्साह दे देकर हिन्दी को कई अर्थशास्त्री प्रदान किये हैं। इस पुस्तक के संयुक्त लेखक श्रीमुरलीधरजी जोशी भी उन्हीं में से हैं। मुझे पूर्ण आशा है कि जोशीजी ने दुबेजी से इस विषय में जो दीक्षा पाई है, उससे हिन्दी का हित ही होगा।

दुबेजी में झूठी यश लिप्सा तो छू भी नहीं गयी है। प्रायः देखा जाता है कि महामान्य लेखक लोग ऐसी पुस्तकों के भी लेखक बनने के अधिकारी हो जाते हैं जिनका एक अक्षर भी उनका लिखा विवेचित किया अथवा बतलाया नहीं होता। सच पूछिये तो इससे हिन्दी का बड़ा अहित हो रहा है। परिश्रमी और अधिकारी लेखक इन स्वनाम धन्य लेखकों की महामाया में दबे पड़े रहते हैं और फिर कभी उभर नहीं पाते। परन्तु हमारे दुबेजी सहकारी लेखकों को प्रोत्साहन ही नहीं देते, वरन् उनके साथ बैठकर काम करते और उन्हें उस विषय में पारंगत बनाकर ही सन्तोष की सांस लेते हैं। इस पुस्तक के लेखन में भी दुबेजी ने यथेष्ट श्रम किया है।

प्रयाग-विश्वविद्यालय में गत पाँच वर्षों से बी० ए० (आनर्स) के अर्थशास्त्र विषय में परीक्षार्थी को एक प्रश्न-पत्र हिन्दी या उर्दू में अवश्य ही देने का जो प्रतिबन्ध है, उसके मूल में दुबेजी का ही प्रयत्न है। हिन्दी की उच्चकोटि की पत्रिकाओं में समय समय पर दुबेजी लेख भी लिखते रहते हैं। एक वाक्य में कहा जा सकता है कि हिन्दी में अर्थशास्त्र विषय के साहित्य निर्माण का कार्य ही दुबेजी के जीवन का मुख्य ध्येय है।

भूमिका

द्रव्य का सदुपयोग उतना सरल नहीं है जितना द्रव्य का प्राप्त करना। जब हम अपने और अपने आसपास के व्यक्तियों के खर्च के सम्बन्ध में गंभीरतापूर्वक विचार करते हैं तब हमको उक्त कथन की सत्यता का पता लगता है। द्रव्य से मनुष्य को जो शक्ति प्राप्त होती है उसका वह इच्छानुसार सदुपयोग या दुरुपयोग कर सकता है। उस शक्ति का सदुपयोग करने से वह अपने आप तथा अपने देश और समाज को बहुत लाभ पहुँचा सकता है। परंतु उसी शक्ति का दुरुपयोग करने से मनुष्य कभी कभी स्वयं अपने और समाज को भयंकर हानि पहुँचा देता है। संसार भर में व खासकर भारत में प्रति वर्ष असंख्य मनुष्य द्रव्य का दुरुपयोग कर जुआ, मुकदमेबाजी, विलासिता तथा मादक वस्तुओं के सेवन द्वारा अपने आप को बरबाद कर रहे हैं और देश को भारी हानि पहुँचा रहे हैं। इस बरबादी का एक प्रधान कारण द्रव्य के उपयोग-सम्बन्धी उचित ज्ञान का अभाव है। हिन्दी में इस विषय की पुस्तकों की बहुत कमी है। इसी कमी को कुछ अंश में दूर करने के उद्देश से यह पुस्तक लिखी गई है।

हम आशा करते हैं कि इस पुस्तक से इन्टरमीडियेट और बी० ए० के विद्यार्थियों तथा हिन्दी विश्वविद्यालय के मध्यमा परीक्षा के परीक्षार्थियों को इस विषय के समझने में सहायता मिलेगी।

यह पुस्तक मैंने और श्रीयुत मुरलीधरजी जोशी ने मिलकर

विषयानुक्रमणिका

पहला अध्याय—उपभोग का महत्व

दूसरा अध्याय—उपभोग-सम्बन्धी शब्दों का परिचय

तीसरा अध्याय—आवश्यकताएं

चौथा अध्याय—उपभोग और सन्तोष

पाँचवां अध्याय—उपयोगिता

छठा अध्याय—माँग

सातवाँ अध्याय—उपभोक्ता की बचत

आठवाँ अध्याय—उपभोग की वस्तुओं का विभाग

नवाँ अध्याय—माँग की माप

दसवाँ अध्याय—फ़िज़ूल-ख़र्ची

ग्यारहवाँ अध्याय—रहन-सहन का दरजा

बारहवाँ अध्याय—भारतवासियों का रहन सहन

तेरहवाँ अध्याय—रहन-सहन का वास्तविक दरजा

चौदहवाँ अध्याय—व्यापार और उपभोग

पन्द्रहवाँ अध्याय—मशीनें और उपभोग

सोलहवाँ अध्याय—भविष्य का उपभोग और बचत

सत्रहवाँ अध्याय—सहकारी उपभोक्ता-समितियाँ

अठारहवाँ अध्याय—दान धर्म

उन्नीसवाँ अध्याय—सदुपभोग और दुरुपभोग

सम्पत्ति का उपभोग

पहला अध्याय

उपभोग का महत्व

अर्थशास्त्र के पाँच मुख्य विभागों में से एक विभाग 'उपभोग' है। साधारणतः उपभोग का मतलब किसी वस्तु का भोग करना या सेवन करना होता है। परन्तु अर्थशास्त्र में इस शब्द का प्रयोग कुछ विशेषता से किया जाता है। उपभोग का अर्थ सेवाओं के और वस्तुओं के उस भोग से है जिससे उपभोक्ता की तृप्ति हो। अगर किसी वस्तु के सेवन करने से उपभोक्ता को संतोष न हो तो अर्थशास्त्र की दृष्टि से ऐसे भोग को उपभोग नहीं कहते हैं। अगर हम एक रोटी का टुकड़ा आग में डालकर जला डालें तो सांसारिक दृष्टि से उस वस्तु का उपभोग हो चुका, क्योंकि वह और किसी काम की न रही। परन्तु अर्थशास्त्र की दृष्टि से उस वस्तु का उपभोग नहीं हुआ; क्योंकि उससे उपभोक्ता की तृप्ति नहीं हुई। हर एक वस्तु में कुछ न कुछ उपयोगिता रहती है। जब हम उस उपयोगिता का इस प्रकार प्रयोग करें जिस प्रकार हमको उससे तृप्ति या संतोष हो, तभी हम वास्तव में उस वस्तु का उपभोग करते हैं। रोटी का टुकड़ा खाने से या आग में

का वास्तविक आरम्भ उपभोग में ही है। इसका कारण यह है कि प्रत्येक मनुष्य को नाना प्रकार की आवश्यकतायें होती हैं जिनकी वह तृप्ति करना चाहता है। कई एक आवश्यकतायें तो ऐसी होती हैं जिनकी पूर्ति उसको अपनी जान बचाने के लिए करनी पड़ती है, जैसे भोजन, वस्त्र, और निवास-स्थान। इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उसको श्रम और उद्योग करना पड़ता है। अपने उद्योग से या तो वह अपनी आवश्यकता की वस्तु स्वयं बना लेता है या दूसरी वस्तु बनाकर या बचा कर विनिमय से उस वस्तु को प्राप्त करता है। इससे यह प्रकट हो जाता है कि अर्थशास्त्र सम्बन्धी सब क्रियाओं का श्रीगणेश उपभोग ही में है। इन सब क्रियाओं का अन्त भी उपभोग में ही है, क्योंकि जब इच्छित वस्तु या सेवा को प्राप्त करके उसका उपभोग कर लिया और तृप्ति होगई, तब फिर उसके सम्बन्ध में और कुछ करने को नहीं रह जाता है।

प्रत्येक मनुष्य को उपभोग का महत्व जानने की आवश्यकता है। प्रत्येक उत्पादक व्यक्ति को कोई भी काम करने के लिए शक्ति और स्फूर्ति की आवश्यकता होती है। इनको प्राप्त करने के लिए उसको विशेष प्रकार के खाने पीने, पहनने की आवश्यकता होती है। अच्छी और पौष्टिक वस्तुओं का सेवन करने से मनुष्य की शक्ति और उत्साह में वृद्धि होती है और इसके विपरीत शराब पीने से या शक्ति ह्रास करने वाली अन्य वस्तुओं के सेवन करने से उलटा असर होता है। शक्ति क्षीण होने से

मनुष्य कम उपार्जन कर सकता है। इसका फल यह होता है कि उसको खाने को भी पूरा नहीं मिल पाता है। आधुनिक काल के नाना प्रकार की मिलावट की वस्तुओं में से अपने काम की असली वस्तुओं को छाँटकर उनका उपभोग, करने से प्रत्येक मनुष्य को सब से अधिक सन्तोष होता है, और ऐसा ही करने की उसको कोशिश करनी चाहिए।

वस्तुओं का उचित रीति से उपभोग करना सहल काम नहीं है। जिनका अपने मन पर पूरा अधिकार है वही वस्तुओं का उचित उपभोग कर सकते हैं। यह सच है कि द्रव्य का उपार्जन करना जितना सरल है उसका उचित उपभोग उतना ही कठिन है। आजकल के लोग प्राचीन काल के लोगों की तरह अपने सब आवश्यकीय वस्तुओं को स्वयं पैदा नहीं करते हैं। किसी भी काम को करके द्रव्य उपार्जन करते हैं और उस द्रव्य से अपनी आवश्यकीय वस्तुओं को मोल लेते हैं। लेकिन प्रत्येक मनुष्य यह नहीं जानता है कि उसको किस किस वस्तु की कितनी आवश्यकता है। अगर किसी मनुष्य को बीस रुपये देकर बाजार भेजिये कि वह अपनी जरूरत की वस्तुएँ मोल ले लेवे तो बाजार पहुँचकर वह मनुष्य ठीक ठीक निश्चय नहीं कर सकेगा कि वह कौन सी वस्तु ले। वह सोचेगा कि एक फाउन्टेन पेन खरीद या एक सूट सिलवाये, एक जोड़ी जूता खरीदे या प्राइमस स्टोव खरीदे, एक रुपये में सिनेमा देखे या उसको किसी भविष्य में आनेवाली आवश्यकता के लिए बचा रखे, इत्यादि

अनेक प्रकार के प्रश्न हमारे खरीदार के मन में उपस्थित होंगे। अक्सर ऐसा देखा गया है कि खरीददार विज्ञापनों के धोखे या मित्रों के बहकाने में आकर ऐसी वस्तुएँ खरीद लेता है जिनकी उपयोगिता उसको उतनी नहीं होती जितनी और वस्तुओं की होती है। कभी कभी खरीददार यह नहीं सोचता कि जो वस्तु वह खरीद रहा है उसके उपभोग का अंतिम परिणाम क्या होगा। इसलिये वह अपनी खराब आदत के कारण नशीली वस्तुएँ भी खरीद लेता है। इससे उसको अंत में हानि ही अधिक होती है। ऐसे लोगों को अपने द्रव्य की पूरी उपयोगिता नहीं मिलती। इसको प्राप्त करने के लिए मनुष्य को यह जानना चाहिए कि उसकी आवश्यकतायें क्या क्या हैं और कौन सी वस्तु कितनी खरीदने से उनकी सबसे अधिक तृप्ति हो सकती है। एक मनुष्य सोच समझकर खर्च कर बीस रुपये में इतनी उपयोगिता और सन्तोष प्राप्त कर सकता है जितना कि दूसरा मनुष्य पचास रुपये में भी प्राप्त नहीं कर सकता। इसका कारण यह है कि पहला मनुष्य उपभोग के महत्व को और उसके रहस्य को जानता है और दूसरा मनुष्य नहीं जानता।

हर एक उत्पादक या उत्पादक-संघ को भी उपभोग का विषय अच्छी तरह जानना चाहिए। उन लोगों को जानना चाहिए कि उपभोक्ता को किन किन चीज़ों की कितनी ज़रूरत हैं। व्यापारिक मंदी और घूम से संसार में जो हलचल होती है उसका एक

कारण यह भी है कि उत्पादक आवश्यकता से अधिक या कम पैदा करते हैं।

किसी भी देश की शक्ति उस देश के निवासियों की शक्ति पर निर्भर रहती है। जिस देश के लोग लाभदायक और पौष्टिक वस्तुओं का सेवन करते हैं और नशीली और अन्यान्य स्वास्थ्य को हानि पहुँचानेवाली वस्तुओं को त्याग देते हैं उस देश के लोग हृष्ट-पुष्ट, बलवान् और प्रवीण होते हैं। इससे विपरीत आचरण करनेवाले लोग कमज़ोर, रोगी और आलसी होते हैं। देश की समृद्धि और रक्षा पहले प्रकार के लोगों से ही हो सकती है।

उपर्युक्त वर्णन से उपभोग का महत्व भली भाँति विदित होता है। इस पुस्तक में इसी महत्वपूर्ण विषय पर अर्थशास्त्र की दृष्टि से विचार किया जायगा।

दूसरा अध्याय

उपभोग सम्बन्धी शब्दों का परिचय

उपभोग सम्बन्धी विवेचन करने के पहले कुछ पारिभाषिक शब्दों का अर्थ जान लेना बहुत आवश्यक है। इसलिए इस अध्याय में कुछ ऐसे शब्दों का अर्थशास्त्र की दृष्टि से विवेचन किया जायगा जो उपभोग के विषय को प्रतिपादन करने में काम में आते हैं।

वस्तु'—अर्थशास्त्र में उन चीजों को 'वस्तु' कहते हैं जिससे मनुष्य को तृप्ति होती है। इनमें से कुछ चीजें ऐसी होती हैं जिनको हम देख सकते हैं, छू सकते हैं और विनिमय कर सकते हैं जैसे किताब, लकड़ी, मोटर इत्यादि। कुछ ऐसी हैं जिनको हम देख नहीं सकते हैं जैसे मित्रता, प्रसिद्धि इत्यादि। पहिले प्रकार की वस्तुएं भौतिक कहलाती हैं और दूसरे प्रकार की अवैयक्तिक कहलाती हैं। कुछ वस्तुएँ विनिमयसाध्य होती हैं और कुछ अविनिमयसाध्य।

सम्पत्ति'—लौकिक व्यवहार में किसी मनुष्य की सम्पत्ति से उसका रुपया, जेवर, मकान, जमीन इत्यादि बहुमूल्य वस्तुओं का बोध होता है, और सम्पत्तिवान मनुष्य वही कहलाता है जिसके पास ऐसी वस्तुएँ बहुतायत से हों। लेकिन अर्थशास्त्र में

केवल इन्हीं चीजों को सम्पत्ति नहीं कहते। इस शब्द का प्रयोग अधिक उदारता से किया जाता है। अर्थशास्त्र में उन सब वस्तुओं को सम्पत्ति कहते हैं जो उपयोगी हों और विनिमय साध्य हों। उदाहरण के लिए हवा को लीजिये। यह उपयोगी है लेकिन विनिमय-साध्य नहीं। इसलिए इसकी गणना सम्पत्ति में नहीं हो सकती। लेकिन किसी व्यवसाय की (समृद्धि) प्रसिद्धि उपयोगी भी है और विनिमय-साध्य भी है। इसका क्रय-विक्रय हो सकता है। इसलिए यह वस्तु सम्पत्ति में शामिल की जा सकती है। कई एक अर्थशास्त्रज्ञों का कहना है कि किसी वस्तु की सम्पत्ति में गणना होने के लिए यह आवश्यक है कि उसकी संख्या परिमित हो और वह श्रम से प्राप्त हो सके।

उपयोगिता'—उपयोगिता किसी वस्तु का वह गुण है जिससे उस वस्तु की चाहना होती है। इसका सम्बन्ध मन से होता है। इसलिए हम किसी वस्तु की उपयोगिता का वर्णन किसी माप या तौल से नहीं कर सकते। चूँकि प्रत्येक मनुष्य के मन में कुछ न कुछ भिन्नता होती है इसलिए किसी एक खास वस्तु की उपयोगिता प्रत्येक मनुष्य को बराबर नहीं होती। किसी वस्तु का मूल्य तै करने में लोग उस वस्तु की उपयोगिता का विचार अवश्य करते हैं।

यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि हम किसी वस्तु विशेष को उत्पन्न या नष्ट नहीं कर सकते। हम केवल उपयोगिता

उत्पन्न कर सकते हैं। उदाहरण के लिए कुर्सी को लीजिये। बढ़ई ने अपने औजारों की मदद से लकड़ी का रूपान्तर करके उसमें लकड़ी से ज्यादा उपयोगिता ला दी है। लकड़ी उसने उत्पन्न नहीं की। इसी प्रकार काम में आते आते कुर्सी की उपयोगिता नष्ट होती जाती है। कुर्सी टूट जाती है लकड़ी पड़ी रहती है, लेकिन कुर्सी काम की नहीं रह जाती है।

मूल्य,—इस शब्द का व्यवहार दो प्रकार से किया जाता है। कभी कभी मूल्य शब्द का प्रयोग उपयोगिता के अर्थ में भी किया जाता है। जैसे हम कहते हैं कि अमुक वस्तु बहुमूल्य है। लेकिन यह अर्थ गौण है। अर्थशास्त्र में इस प्रकार क मूल्य क लिए हम उपयोगिता शब्द का उपयोग करते हैं।

मूल्य शब्द का प्रधान अर्थ विनिमय-मूल्य होता है। जब हम किसी वस्तु के बदले में एक दूसरी वस्तु को लेते हैं तो दूसरी वस्तु का परिमाण पहली वस्तु का मूल्य कहलाता है। जैसे अगर हम एक गाय क बदले तीन बकरियाँ ले लें तो उस गाय का मूल्य तीन बकरियाँ हुआ। यह व्यावहारिक मूल्य भी कहलाता है। इस मूल्य की नींव उपयोगिता में होती है क्योंकि जब किसी मनुष्य की दृष्टि में तीन बकरियों की उपयोगिता एक गाय से अधिक या कम से कम उसके बराबर न हो और उसका होश हवास दुरुस्त हो तो, तो वह गाय के बदले तीन बकरियाँ कभी न लेगा।

कीमत,—किसी वस्तु का द्रव्य क रूप में मूल्य उसकी

क़ीमत है। जैसे पहले उदाहरण में एक गाय का मूल्य तीन बकरियाँ कहा है। अगर हम कहें कि गाय का मूल्य ६०) रु० है तो ६०) रु० गाय की (या तीन बकरियों की भी) क़ीमत हो गई। पहले जमाने में जब रुपया-पैसा विनिमय का माध्यम नहीं था तब वस्तुओं की अदल बदल से काम किया जाता था। लेकिन इससे बहुत असुविधा होती थी। इस असुविधा को दूर करने के लिए रुपया पैसा एक ऐसा विनिमय का माध्यम निकाला गया जो सब लोगों को रुचिकर है और जिससे वस्तुओं के क्रय विक्रय में बहुत सुविधा हो गई है। आजकल के व्यवहार और व्यवसाय में किसी भी वस्तु का मूल्य द्रव्य में ही प्रकट किया जाता है।

द्रव्य —यह वस्तु जो विनिमय का माध्यम हो, द्रव्य कहलाता है। इससे विनिमय बड़ी आसानी से हो सकता है। प्राचीन काल में जब कि द्रव्य का प्रादुर्भाव नहीं हुआ था तब मनुष्यों को अपनी आवश्यकीय वस्तुओं का प्राप्त करने में बड़ी दिक्कत होती थी। उनको किसी ऐसे आदमी को ढूंढ़ना पड़ता था जिसके पास उसकी आवश्यकीय वस्तुएं हों और जिसको उसकी वस्तुओं की आवश्यकता हो। अब द्रव्य के माध्यम से लोग अपनी वस्तुओं के बदले में द्रव्य प्राप्त करके, फिर द्रव्य के विनिमय से अपनी आवश्यकीय वस्तुओं को प्राप्त करते हैं। आजकल संसार में धात्विक और कागज़ी द्रव्य दोनों का ही चलन है।

धात्विक द्रव्य के सिक्के एक खास वस्तु के बने होते हैं। उनका वजन और उनकी शक्ल भी किसी मुल्क की सरकार द्वारा निश्चित रहती है। कागजी द्रव्य का सञ्चालन भी सरकार ही करती है। अधिकतर कागजी द्रव्य विनिमय-साध्य होते हैं अर्थात् सरकार कागजी द्रव्य के बदले धात्विक द्रव्य देने का वादा करती है। कोई कोई कागजी द्रव्य अत्यधिक परिमाण में चलाये जाने के कारण विनिमय-साध्य नहीं भी होते।

तीसरा अध्याय

आवश्यकताएँ

जैसा कि हम पहले बतला आये हैं उपभोग द्वारा हमारी आवश्यकताओं की तृप्ति होती है। इसलिए इस अध्याय में आवश्यकताओं पर ही विचार किया जाता है। आवश्यकता मनुष्य की उस इच्छा को कहते हैं जिसको पूरा करने के लिए वह परिश्रम करता है। बाजार में कई एक वस्तुओं को देखकर उनको खरीदने और उपभोग करने की इच्छा होती है। लेकिन अगर हम उन वस्तुओं को प्राप्त करने का उद्योग न करें तो यह केवल कोरी इच्छा ही रह जाती है। किसी आवश्यकता की तृप्ति के लिए उद्योग करना निहायत जरूरी है।

प्राचीन काल से ही मनुष्यों को अनेक वस्तुओं की आवश्यकता रही है। जिस समय लोग वन में जंगली जानवरों के समान रहते थे उस समय भी उन लोगों को अपने प्राण की रक्षा के लिए जल, वायु, अन्न इत्यादि की आवश्यकता थी। जैसे-जैसे सभ्यता में वृद्धि होती गई लोगों की आवश्यकताएँ भी बढ़ती गईं। जब आग का आविष्कार हुआ तब मनुष्यों को नाना प्रकार के भोजनों की आवश्यकता हुई। इसी प्रकार एक आवश्यकता के बाद दूसरी आवश्यकता प्रकट होती गई, भोजन की आवश्यकता की तृप्ति के बाद वस्त्रों की आवश्यकता हुई। फिर रहने के लिए

मकान की आवश्यकता प्रतीत होने लगी। इन सब की तृप्ति के बाद विशेष प्रकार के भोजन, उत्तम वस्त्र, जेवर और विशाल भवन की आवश्यकतायें होती गईं। इसके बाद सवारियों की, शस्त्रों की, संगीत, मित्रता इत्यादि आवश्यकतायें भी प्रकट हुईं। सारांश यह है कि ज्यों ज्यों सभ्यता बढ़ती गई, और पुरानी आवश्यकताओं की तृप्ति होती गई, त्यों त्यों नई आवश्यकतायें उनके स्थान पर आती गईं, यहाँ तक कि अब उनकी संख्या अपरिमित हो गई।

आवश्यकता और उद्योग का गहरा सम्बन्ध है। जैसे जैसे मनुष्य की आवश्यकता बढ़ती जाती है वह उनकी तृप्ति के लिए उद्योग करता रहता है। आरम्भ में यही क्रम चलता है लेकिन कभी कभी उद्योग से भी नई आवश्यकतायें उत्पन्न हो जाती हैं। कई एक मनुष्य किसी खास आवश्यकता की तृप्ति के लिए ही उद्योग और परिश्रम नहीं करते। वे लोग अपनी फुरसत का समय आलस्य में नहीं बिता देते वरन् विज्ञान, साहित्य इत्यादि का मनन करते हैं। इससे ये लोग नयी नयी बातों का आविष्कार करते हैं। इन आविष्कारों की सहायता से नयी नयी वस्तुयें बनायी जाती हैं और मनुष्यों को इन वस्तुओं की भी आवश्यकता प्रतीत होती है।

आवश्यकताओं के लक्षण

आवश्यकतायें अपरिमित हैं। इनका कोई अन्त नहीं है। कोई भी कैसा ही धनवान् मनुष्य यह नहीं कह सकता कि उसकी

सब आवश्यकताओं की तृप्ति हो गई है, क्योंकि ज्यों ही एक आवश्यकता की तृप्ति होती है त्यों ही दूसरी, उसके स्थान पर, आ खड़ी होती है। आवश्यकताओं की वृद्धि होने से ही सभ्यता की भी उन्नति होती है।

आवश्यकताएँ अपरिमित तो हैं, लेकिन यदि यथेष्ट साधन हों तो मनुष्य की प्रत्येक आवश्यकता की किसी एक समय में पूर्ति हो सकती है। उदाहरण के लिए एक भूखे आदमी को लीजिए। उसको भोजन की आवश्यकता है, लेकिन उसके भोजन की भी एक सीमा है। पांच रोटियों से उसका पेट भर जाता है और उसको उस वक्त फिर रोटियों की आवश्यकता नहीं रहती। इसी प्रकार किसी एक आवश्यकता का यथेष्ट साधन रहने से किसी खास समय में तृप्ति हो सकती है। कहा जाता है कि कई एक इच्छाएँ ऐसी हैं जिनकी पूर्ति नहीं हो सकती, जैसे धन की इच्छा, अधिकार की इच्छा, बड़प्पन की इच्छा इत्यादि। लेकिन ये इच्छाएँ मिश्रित इच्छाएँ हैं। ये एक एक इच्छा नहीं हैं। धन की इच्छा देखने में तो एक ही इच्छा है, लेकिन इसके अन्तर्गत उस धन द्वारा प्राप्त होनेवाली अनेक वस्तुओं की इच्छा छिपी रहती है।

किसी आवश्यकता की तृप्ति के एक से अधिक साधन होते हैं जिनमें आपस में प्रतियोगिता रहती है। जैसे धूम्रपान की आवश्यकता तम्बाकू, सिगरेट, सिगार, बीड़ी इनमें से किसी से भी शान्त हो सकती है। इसी से ये चीजें एक दूसरे का स्थान ग्रहण

करने की कोशिश करती है। दुर्भिक्ष के समय ग़रीब लोग गेहूँ की रोटी के बदले चना, मकुआ इत्यादि की रोटी खाते हैं। इसी प्रकार आजकल रेलगाड़ी और मोटर-लारियों में आपस में प्रतियोगिता बढ़ रही है।

कई एक आवश्यकताएँ ऐसी होती हैं जो आपस में एक दूसरे की पूरक होती हैं। जैसे इक्के के साथ घोड़े की या टैनिस के बल्लों के साथ गेंदों की आवश्यकता परस्पर पूरक हैं। ये आवश्यकताएँ साथ ही साथ चलती हैं।

जब हम किसी आवश्यकता की पूर्ति करते रहते हैं तो फिर वह आवश्यकता स्वाभाविक-सी हो जाती है। जैसे कोई मनुष्य किसी के बहकाने से शराब पीले, तो फिर बाद को उसको शराब का व्यसन होजाता है और वह फिर पूरा पियक्कड़ बन जाता है। उसको शराब पीने की आदत ऐसी ज़बरदस्त हो जाती है कि वह आसानी से उस आदत को छोड़ नहीं सकता। इसी प्रकार और आवश्यकताओं का भी अभ्यास पड़ जाता है। इस अभ्यास पर मनुष्यों का रहन-सहन का दर्जा भी निर्भर रहता है। आवश्यकताओं के घटने-बढ़ने या और प्रकार के परिवर्तन से रहन-सहन के दर्जे में भी घट-बढ़ होता रहता है।

चौथा अध्याय

उपभोग और सन्तोष

सब लोगों को यह मान्य है कि मनुष्य का परम उद्देश्य सब से अधिक सुख और सन्तोष प्राप्त करना है। वह प्राप्त सुख की वृद्धि के लिए और दुःख को टालने या कम करने के लिए सदैव उद्योग किया करता है।

यहाँ पर यह प्रश्न उठता है कि सुख क्या है और दुःख क्या है। नैय्यायिकों ने सुख-दुःख को अन्तर्वेदना (feeling) बतलाकर कहा है कि "अनुकूल वेदनीयं सुखं" अर्थात् जो वेदना हमारे अनुकूल है वह सुख है और "प्रतिकूल वेदनीयं दुःखम्" अर्थात् जो वेदना हमारे प्रतिकूल है वह दुःख है। मनुष्य की अनेक इच्छाएँ और आवश्यकताएँ होती हैं। जब उसकी इन आवश्यकताओं की तृप्ति हो जाती है तो उसको सन्तोष मिलता है और वह सुख की वेदना का अनुभव करता है। इसके विपरीत जब उसकी आवश्यकताओं की तृप्ति नहीं होती तो उसको असन्ताप होता है और उसको दुःख की वेदना होती है। उदाहरण के लिए भोजन करने से मन को जो तृप्ति होती है उसे सुख कहते हैं और भोजन न मिलने से उसको जो कष्ट होता है उसको दुःख कहते हैं।

पिछले अध्याय में यह बतलाया गया है कि मनुष्य की आवश्यकतायें अपरिमित हैं। जैसे ही एक आवश्यकता की पूर्ति हुई शीघ्र ही दूसरी आवश्यकता उसका स्थान ग्रहण कर लेती है। हमको यह भी मालूम है कि आवश्यकताओं की तृप्ति से ही मनुष्य को सुख और सन्तोष मिलता है। ऐसी दशा में यह बात स्वयं सिद्ध है कि किसी भी मनुष्य को पूर्ण सुख कभी नहीं मिल सकता है। उसकी कुछ न कुछ आवश्यकतायें ऐसी बनी रहेंगी जिसके तृप्त न होने से उसको असन्तोष और दुःख होगा। इसके अतिरिक्त, पाये हुए सुख से भी मनुष्य की तृप्ति नहीं होती है। मनुष्य एक ही प्रकार के सुख से सदा तृप्त नहीं रहता। चूंकि उसको प्रति दिन नये नये सुख नहीं मिल सकते हैं, इसलिये उसको सदा असन्तोष ही बना रहता है।

अब यह प्रश्न उपस्थित होता है कि ऐसी दशा में मनुष्य का कर्तव्य क्या है? मनुष्य का पूर्ण सन्तोष मिलना असम्भव है क्या इसलिये सब काम धन्धों को छोड़ कर जङ्गलों में भटक कर संन्यासी हो जाना चाहिये, या सन्तोष और असन्तोष का विचार छोड़ कर अपने आप इच्छा, तृष्णा और वासना का दास बन कर उनको स्वाधीनता खो देनी चाहिये?

आजकल यह बात मानी जाती है कि आवश्यकताओं की वृद्धि से ही सभ्यता की वृद्धि हुई है। जैसे जैसे मनुष्य की आवश्यकतायें बढ़ती गई और वह उनकी तृप्ति के लिए उद्योग करता गया वैसे वैसे सभ्यता की वृद्धि होती गई। इसी प्रकार उद्योग

करते रहने से नई प्रकार की आवश्यकताएँ उत्पन्न होती हैं और उनकी तृप्ति के लिए साधन निकाले जाते हैं। इससे यह बात प्रकट होती है कि आवश्यकताओं का बढ़ाने में ही मनुष्य की उन्नति होती है, और यह बात निर्विवाद है कि उन्नति से मनुष्य को सुख और सन्तोष होता है।

अगर ध्यानपूर्वक देखा जाय तो मालूम हो जाता है कि आवश्यकताओं को एकदम मर्यादा से बाहर बढ़ा देने से अधिकतम सन्तोष नहीं होता है। यहाँ पर यह कहने का मतलब नहीं है कि सब प्रकार का असंतोष निन्द्य है। उस इच्छा के मूलगत असंतोष को निन्दनीय नहीं कहा जा सकता जो आदेश करता है कि मनुष्य को अपनी वर्तमान स्थिति में पड़े पड़े सड़ना नहीं चाहिये परन्तु यथाशक्ति अधिकाधिक सुधार करके अपने को और समाज को उन्नति की ओर ले जाना चाहिए। यही वह असन्तोष है जिससे सभ्यता की उन्नति होती आई है। लेकिन वह असन्तोष निन्दनीय है जिससे लोग किसी वस्तु को पाने के लिये रात दिन हाय-हाय करते रहें, और उसके न मिलने पर रोया करें और शिकायतें करें।

तृष्णा और असन्तोष की सुव्यवस्थित मर्यादा बाँधना एकदम असम्भव नहीं है। हाँ, इसके लिए एक विशेष शक्ति की आवश्यकता होती है जिसको मनोनिग्रह कहते हैं। जो मनुष्य अधिकतम सन्तोष और सुख पाना चाहता है उसको अपने मन को और इन्द्रियों को वश में करना अत्यन्त आवश्यक है। अगर हम अपने को तृष्णा और कामना में बढ़ायें तो हमारे असन्तोष की कोई

सीमा न होगी। अगर कोई गरीब किसान जिसको सदा पेट की हाय लगी रहती है एक मोटर गाड़ी रखने की प्रबल तृष्णा करता रहे, सदा उसी ध्यान में मग्न रहे तो शायद ही वह सुख और सन्तोष प्राप्त कर सकता है। इसके प्रतिकूल अगर वह अपने मन को वश में करके सोचे कि इस समय ऐसी अवस्था में मोटर गाड़ी की इच्छा करना उसे उचित नहीं है क्योंकि इस इच्छा की तृप्ति करना उसकी शक्ति के बाहर की बात है, इसलिए उसको उचित है कि उन वस्तुओं का संग्रह करने का और उपभोग करने का प्रयत्न करे जो उसके सामर्थ्य के भीतर है, तो इससे उसको अधिक सुख और सन्तोष प्राप्त होगा।

इससे यह प्रकट हो जाता है कि मनुष्य को अधिकतम सुख और सन्तोष प्राप्त करने के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि वह अपनी आवश्यकताओं को मर्यादित करे। इसके साथ ही साथ उसको अपनी फ़िज़ूल और हानिदायक इच्छाओं का दबाना चाहिए। अगर स्वास्थ्य और बुद्धि को हानि पहुँचाने वाली इच्छाओं का दमन न किया गया तो परिणाम में मनुष्य को सुख नहीं मिल सकता है।

भारतवर्ष में प्राचीन काल में अनेक महात्मा हो गये हैं जिन्होंने मनोनिग्रह तथा इन्द्रिय निग्रह द्वारा अपनी आवश्यकताओं को अपने वश में करके और मर्यादित करके परम सुख, सन्तोष और शान्ति पायी है। प्राचीन काल में ही क्यों इस समय परम पूज्य महात्मा गांधी इसके जीते जागते उदाहरण हैं।

लेकिन पाश्चात्य सभ्यता के संसर्ग में आने से भारतवर्ष के लोग भी भौतिक सभ्यता पर विश्वास करने लगे हैं। इन लोगों ने अपनी आवश्यकताओं का बहुत ही अधिक विस्तार कर दिया है। यह भी आज-कल भारतवर्ष में अशान्ति और असन्तोष की लहर का एक प्रधान कारण है। देश को शान्त, सन्तुष्ट और समृद्धिशाली बनाने के लिए आवश्यक है कि यहाँ के निवासी मनोनिग्रह तथा इन्द्रियनिग्रह द्वारा अपने को तृष्णा और वासना की शृङ्खलाओं से मुक्त करके, उनको अपने वश में करके सुखी और सन्तुष्ट बनें। उनको सादगी की तरफ विशेष ध्यान देना चाहिए। सादा जीवन और उच्च विचार का ध्येय ही आर्थिक दृष्टि से भी सर्वोत्तम है।

अध्याय पांचवाँ

उपयोगिता

उपयोगिता की एकाई—इस अध्याय में उपयोगिता सम्बन्धी कुछ शब्दों और नियमों का विवेचन किया जाता है। दूसरे अध्याय में यह बतलाया जा चुका है कि उपयोगिता का उपभोग करनेवाले व्यक्ति से घनिष्ठ सम्बन्ध है। किसी वस्तु की उपयोगिता भिन्न भिन्न मनुष्यों को भिन्न भिन्न होती है। उसी वस्तु की उपयोगिता किसी एक मनुष्य के लिये भिन्न भिन्न परिस्थितियों में भिन्न भिन्न होती है। इसलिये भिन्न भिन्न मनुष्यों की उपयोगिता की तुलना साधारणतः नहीं की जा सकती, और न किसी एक मनुष्य के लिये भिन्न भिन्न परिस्थितियों में वस्तुओं की तुलना ही की जा सकती है। हम केवल किसी एक समय में, जब कि किसी एक मनुष्य की परिस्थिति में परिवर्तन नहीं होता, उसकी भिन्न भिन्न वस्तुओं से प्राप्त होनेवाली उपयोगिता का अन्दाजा लगाकर तुलना कर सकते हैं। किसी वस्तु के उपभोग करने से सन्तोष प्राप्त होता है। इसी सन्तोष का अंदाजा लगा कर हम वस्तुओं की उपयोगिता का अंदाजा लगाते हैं। इस तुलना के लिये यह मान लिया जाता है कि किसी एक खास वस्तु के उपभोग से जो सन्तोष प्राप्त होता है वह एक के बराबर है और

उसकी उपयोगिता भी एक है। अब अन्य वस्तुओं के उपभोग से प्राप्त सन्तोष की तुलना इस प्रथम वस्तु के उपभोग से प्राप्त संतोष से की जाती है और इसीके अनुसार उनकी उपयोगिता बतलाई जाती है। मान लीजिये कि किसी मनुष्य ने एक समय एक केला और एक आम खाया। आमों के उपभोग से उसे जुड़ सन्तोष प्राप्त हुआ, वह केला के उपभोग से प्राप्त सन्तोष से करीब चौगुना था। अब यदि हम मान लें कि एक केला की उपयोगिता उसे एक है तो एक आम की उपयोगिता उसे चार होगी। इसी प्रकार यदि एक रोटी खाने से उसे उस समय जो सन्तोष हुआ उसकी मात्रा एक केला के उपभोग से प्राप्त सन्तोष से दसगुनी है तो एक रोटी की उपयोगिता उसे दस होगी। अब यदि दूसरी रोटी खाने से उसे जो सन्तोष प्राप्त हुआ वह एक केला के उपभोग से प्राप्त सन्तोष से पाँचगुना है तो दूसरी रोटी की उपयोगिता उसे पाँच होगी। यहाँ एक केला की उपयोगिता एक मानी गयी है, यही उस समय सब वस्तुओं की उपयोगिता की तुलना करने के लिये उपयोगिता की एकाइ है और एक केला के उपभोग से प्राप्त सन्तोष से अन्य वस्तुओं के उपभोग से प्राप्त सन्तोष की तुलना करके ही अन्य वस्तुओं की उपयोगिता की मात्रा बतलाई गई है। जब कभी किसी एक मनुष्य के लिए वस्तुओं की उपयोगिता की तुलना की जाती है तब उस तुलना के लिये उपयोगिता की कोई एकाइ मान ली जाती है और उस समय सब वस्तुओं की उपयोगिता का अनुमान इसी एकाई के अनुसार लगाया जाता है,

परन्तु यह हमेशा ध्यान में रखना चाहिये कि भिन्न भिन्न तुलनाओं के लिये उपयोगिता की इकाई भिन्न भिन्न रहती है। यदि एक समय वस्तुओं की उपयोगिता की तुलना करने के लिये एक मनुष्य को एक केला के उपभोग से प्राप्त संताप का एक के बराबर मान लिया गया और उसकी उपयोगिता एक मान ली गई तो किसी अन्य समय उसी मनुष्य की वस्तुओं की उपयोगिता जानने के लिये यह आवश्यक नहीं है कि एक केला की उपयोगिता इस समय भी एक मान ली जाय। दोनों समय में एक केला की उपयोगिता बराबर भी न होगी क्योंकि मनुष्य की परिस्थिति के अनुसार केला की उपयोगिता भी भिन्न हो जायगी। प्रत्येक तुलना के लिये उपयोगिता का कोई इकाई मान ली जाती है और उसी के अनुसार उस समय सब वस्तुओं की उपयोगिता के परिमाण का अंदाजा लगाया जाता है।

वस्तुओं की इकाई—वस्तुएं साधारणतः दो प्रकार की होती हैं। कुछ वस्तुएं तो ऐसी होती हैं जिनको विभाजित करने में उनका मूल्य कम नहीं होगा, जैसे यदि हम दस तोले का सोना का एक टुकड़ा लें और उसका एक एक तोले के दस टुकड़े करें तो एक तोले वाले दसों टुकड़ों का मूल्य दस तोले के टुकड़े के बराबर होगा। इस प्रकार की अन्य वस्तुएं हैं गेहूं, चावल, दाल, कपड़ा, चाँदी, लोहा, इत्यादि। कुछ वस्तुएं ऐसी हैं जिनको विभाजित करने से मूल्य में बहुत कमी आ जाती है जैसे यदि हम किसी कुर्सी के चार टुकड़े कर डाले तो चारों टुकड़ों का

उसकी उपयोगिता भी एक है। अब अन्य वस्तुओं के उपभोग से प्राप्त सन्तोष की तुलना इस प्रथम वस्तु के उपभोग से प्राप्त संतोष से की जाती है और इसीके अनुसार उनकी उपयोगिता बतलाई जाती है। मान लीजिये कि किसी मनुष्य ने एक समय एक केला और एक आम खाया। दोनों के उपभोग से उसे कुछ सन्तोष प्राप्त हुआ, वह केला के उपभोग से प्राप्त सन्तोष से करीब चौगुना था। अब यदि हम मान लें कि एक केला की उपयोगिता उस एक है तो एक आम की उपयोगिता उस चार होगी। इसी प्रकार यदि एक रोटी खाने से उसे उस समय जो सन्तोष हुआ उसकी मात्रा एक केला के उपभोग से प्राप्त सन्तोष से दसगुनी है तो एक रोटी की उपयोगिता उसे दस होगी। अब यदि दूसरी रोटी खाने से उसे जो सन्तोष प्राप्त हुआ वह एक केला के उपभोग से प्राप्त सन्तोष से पाँचगुना है तो दूसरी रोटी की उपयोगिता उसे पाँच होगी। यहाँ एक केला की उपयोगिता एक मानी गयी है, यही उस समय सब वस्तुओं की उपयोगिता की तुलना करने के लिये उपयोगिता की एकाई है और एक केला के उपभोग से प्राप्त सन्तोष से अन्य वस्तुओं के उपभोग से प्राप्त सन्तोष की तुलना करके ही अन्य वस्तुओं की उपयोगिता की मात्रा बतलाई गई है। जब कभी किसी एक मनुष्य के लिए वस्तुओं की उपयोगिता की तुलना की जाती है तब उस तुलना के लिए उपयोगिता की कोई एकाई मान ली जाती है और उस समय सब वस्तुओं की उपयोगिता का अनुमान इसी एकाई के अनुसार लगाया जाता है,

परन्तु यह हमेशा ध्यान में रखना चाहिये कि भिन्न भिन्न तुलनाओं के लिये उपयोगिता की एकाई भिन्न भिन्न रहती है। यदि एक समय वस्तुओं की उपयोगिता की तुलना करने के लिय एक मनुष्य को एक केला के उपभोग से प्राप्त सतोष को एक क बराबर मान लिया गया और उसकी उपयोगिता एक मान ली गइ तो किसी अन्य समय उसी मनुष्य की वस्तुओं की उपयोगिता जानने के लिये यह आवश्यक नहीं है कि एक केला की उपयोगिता इस समय भी एक मान ली जाय। दोनों समय में एक केला की उपयोगिता बराबर भी न होगी क्योंकि मनुष्य की परिस्थिति के अनुसार केला की उपयोगिता भी भिन्न हो जायगी। प्रत्येक तुलना के लिये उपयोगिता की कोई एकाइ मान ली जाती है और उसी के अनुसार उस समय सब वस्तुओं की उपयोगिता क परिमाण का अंदाजा लगाया जाता है।

वस्तुओं की एकाई—वस्तुएं साधारणत दो प्रकार की होती हैं। कुछ वस्तुएं तो ऐसी होती हैं जिनको विभाजित करने मे उनका मूल्य कम नहीं होगा, जैसे यदि हम दस तोले का सोने का एक टुकड़ा लें और उसका एक एक तोल क दम टुकड़े करें तो एक तोल वाले दसों टुकड़ों का मूल्य दस तोल के टुकड़ क बराबर होगा। इस प्रकार की अन्य वस्तुएं हैं गेहूं, चावल, दाल, कपड़ा, चाँदी, लोहा, इत्यादि। कुछ वस्तुए ऐसी हैं जिनको विभाजित करने म मूल्य में बहुत कमी आ जाती है जैस यदि हम किसी कुर्सी के चार टुकड़े कर डाले तो चारों टुकड़ों का

मूल्य कुर्सी के मूल्य के बराबर न होगा। इस प्रकार की अन्य वस्तुएं हैं मकान, पुस्तक, छाता, कमीज, गाय, बैल, घोड़ा इत्यादि।

जिन वस्तुओं का मूल्य विभाजित करने से कम नहीं होता उनकी इकाई भिन्न भिन्न तुलना के लिए भिन्न भिन्न होती है। जैसे एक सेर गेहूँ, एक मन गेहूँ इत्यादि। गेहूँ का जब बड़े परिमाण में तौलना होता है तो मन का उपयोग किया जाता है। कम परिमाण के लिये सेर ही से काम लिया जाता है। सेर का तौल भी भारत के भिन्न भिन्न भागों में भिन्न भिन्न है। कहीं एक सेर १०० रुपये के वजन के बराबर है तो कहीं ८० रुपये के बराबर और कहीं २८ रुपये के बराबर। परन्तु किसी एक समय में तुलना के लिए एक ही प्रकार के सेर का उपयोग किया जाता है। अन्य देशों में गेहूँ के तौल के लिए टन, हंडरवट, पाउंड इत्यादि का उपयोग होता है। कपड़े का मापने के लिए गज का उपयोग होता है। सोना तौलने के लिए तोला, माशा और रत्ती का उपयोग होता है।

जिन वस्तुओं को विभाजित करने से मूल्य में कमी होती है उनकी इकाई एक रहती है जैसे एक मकान, एक गाय, एक पुस्तक, एक कुर्सी इत्यादि।

सीमांत उपयोगिता—यदि किसी मनुष्य के पास दस सेर गेहूँ हों तो दसवें सेर की उपयोगिता दस सेर गेहूँ की सीमांत उपयोगिता मानी जायगी। किसी वस्तु के किसी परिमाण की

सीमांत उपयोगिता उस वस्तु की अन्तिम एकाई की उपयोगिता को कहते हैं। सीमांत उपयोगिता और कुल उपयोगिता में बहुत अन्तर है। दस सेर गेहूँ की कुल उपयोगिता दसों सेर गेहूँ की उपयोगिता के योग के बराबर होगी, जबकि उसकी सीमांत उपयोगिता केवल दसवें सेर की उपयोगिता के बराबर होगी। यदि किसी मनुष्य के पास एक ही सेर गेहूँ हो तो उसकी सीमांत उपयोगिता और कुल उपयोगिता एकसी होगी। परन्तु जैसे जैसे वस्तु का परिमाण बढ़ता जायगा सीमांत उपयोगिता और कुल उपयोगिता में भी अन्तर बढ़ता जायगा।

सीमांत-उपयोगिता-ह्रास नियम—अगर हम किसी वस्तु के परिमाण का एक ही समय में क्रमश उपभोग करते रहें तो उसकी सीमांत-उपयोगिता क्रमश कम होती जाती है। यह एक मनुष्य का स्वभाव ही है कि जब उसके पास किसी वस्तु के परिमाण की वृद्धि होती जाती है तो उसकी चाह उस वस्तु के लिए कम होती जाती है। इसी प्रकार एक ही समय एक ही वस्तु के उपभोग करने से उस वस्तु की चाह कम होती जाती है और उस वस्तु के अधिक सेवन करने से उसकी उपयोगिता भी कम होती जाती है। जैसे पहिला अमरूद खाने से किसी मनुष्य को बहुत आनन्द प्राप्त होगा और उसको उस अमरूद में बहुत उपयोगिता दीखेगी। मान लीजिए यह उपयोगिता ३० के बराबर है। दूसरा अमरूद खाने से उसको कुछ कम तृप्ति होगी। इस अमरूद की उपयोगिता शायद

मूल्य कुर्सी के मूल्य के बराबर न होगा। इस प्रकार की अन्य वस्तुएं हैं मकान, पुस्तक, घोड़ा, कमोज, गाय, बैल, माला इत्यादि।

जिन वस्तुओं का मूल्य विभाजित करने से कम नहीं होता उनकी इकाई भिन्न भिन्न तुलना के लिये भिन्न भिन्न होती है। जैसे एक सेर गेहूँ, एक मन गेहूँ इत्यादि। गेहूँ का जब बड़े परिमाण में तौलना होता है तो मन का उपयोग किया जाता है। कम परिमाण के लिये सेर ही से काम लिया जाता है। सेर का तौल भी भारत के भिन्न भिन्न भागों में भिन्न भिन्न है। कहीं एक सेर १०० रुपये के वजन के बराबर है तो कहीं ८० रुपये के बराबर और कहीं २८ रुपये के बराबर। परन्तु किसी एक समय में तुलना के लिये एक ही प्रकार के सेर का उपयोग किया जाता है। अन्य देशों में गेहूँ के तौल के लिये टन, हंडरवेट, पाउंड इत्यादि का उपयोग होता है। कपड़े का मापने के लिये गज का उपयोग होता है। सोना तौलने के लिये तोला, माशा और रत्ती का उपयोग होता है।

जिन वस्तुओं को विभाजित करने से मूल्य में कमी होती है उनकी इकाई एक रहती है जैसे एक मकान, एक गाय, एक पुस्तक, एक कुर्सी इत्यादि।

सीमांत उपयोगिता—यदि किसी मनुष्य के पास दस सेर गेहूँ हों तो दसवें सेर की उपयोगिता दस सेर गेहूँ का सीमांत उपयोगिता मानी जायगी। किसी वस्तु के किसी परिमाण की

सीमांत उपयोगिता उस वस्तु की अन्तिम इकाई की उपयोगिता को कहते हैं। सीमांत उपयोगिता और कुल उपयोगिता में बहुत अन्तर है। दस सेर गेहूँ की कुल उपयोगिता दसों सेर गेहूँ की उपयोगिता के योग के बराबर होगी, जबकि उसकी सीमांत उपयोगिता केवल दसवें सेर की उपयोगिता के बराबर होगी। यदि किसी मनुष्य के पास एक ही सेर गेहूँ हो तो उसकी सीमांत उपयोगिता और कुल उपयोगिता एकसी होगी। परन्तु जैसे जैसे वस्तु का परिमाण बढ़ता जायगा सीमांत उपयोगिता और कुल उपयोगिता में भी अन्तर बढ़ता जायगा।

सीमांत-उपयोगिता-ह्रास नियम—अगर हम किसी वस्तु के परिमाण का एक ही समय में क्रमशः उपभोग करते रहें तो उसकी सीमांत उपयोगिता क्रमशः कम होती जाती है। यह एक मनुष्य का स्वभाव ही है कि जब उसके पास किसी वस्तु के परिमाण की वृद्धि होती जाती है तो उसकी चाह उस वस्तु के लिए कम होती जाती है। इसी प्रकार एक ही समय एक ही वस्तु के उपभोग करने से उस वस्तु की चाह कम होती जाती है और उस वस्तु के अधिक सेवन करने से उसकी उपयोगिता भी कम होती जाती है। जैसे पहिला अमरूद खाने से किसी मनुष्य को बहुत आनन्द प्राप्त होगा और उसको उस अमरूद में बहुत उपयोगिता दीखेगी। मान लीजिए यह उपयोगिता ३० के बराबर है। दूसरा अमरूद खाने से उसको कुछ कम तृप्ति होगी। इस अमरूद की उपयोगिता शायद

उसको २५ के बराबर होगा। इसी प्रकार तीसरे, चौथे और पाँचवे अमरूदों को खाने से उसको क्रमशः कम तृप्ति प्राप्त होती जायगी। इसलिए इन अमरूदों की उपयोगिता क्रमशः घटती जायगी। मान लीजिए तीसरे, चौथे, पाँचवें और छठे अमरूद की उपयोगिता उसके लिए २०, १५, १० और ५ के बराबर है। इन ६ अमरूदों से उसकी इच्छा पूरी हो जाती है। लेकिन मान लीजिए कि वह मित्रों के दबाव से एक और सातवाँ अमरूद भी खा लेवे, तो उसको उससे कुछ भी उपयोगिता प्राप्त न होगी क्योंकि उसकी तृप्ति छः अमरूदों से हो चुकी थी। इसलिए इस सातवें अमरूद की उपयोगिता उसके लिए शून्य हुई। लेकिन अगर वह जबरदस्ती एक और आठवाँ अमरूद भी खा लेवे तो शायद उसके पेट में कुछ गड़बड़ होकर उसको उपयोगिता के बदले कुछ अनुपयोगिता मिलने की सम्भावना हो। मान लीजिए कि आठवें अमरूद का उसके लिये अनुपयोगिता ५ अर्थात् —५ उपयोगिता है।

यहाँ पर यह बात ध्यान में रखने के योग्य है कि किसी वस्तु के अधिक परिमाण में सेवन करने से कुल उपयोगिता नहीं घटती परन्तु सीमान्त उपयोगिता ही घटती है। कुल उपयोगिता तो बढ़ती जाती है जब तक कि पूर्ण तृप्ति प्राप्त न हो जाए, लेकिन इसके बढ़ने का अनुपात कम होता जाता है। इस अमरूदवाले उदाहरण में एक अमरूद खाने से उपभोक्ता को ३० उपयोगिता मिली और दो अमरूद खाने से ३०+२५=५५

उपयोगिता मिली सो कि दो अमरूदों की कुल उपयोगिता हुई। लेकिन पहिले अमरूद से उपभोक्ता को ३० सामांत उपयोगिता थी लेकिन दो अमरूद खाने में सामांत उपयोगिता २५ हो गई।

निम्नलिखित कोष्ठक में ऊपर लिखे अनुसार अमरूदों की उपयोगिता दी जाती है —

अमरूद	उपयोगिता	सीमान्त उपयोगिता	कुल उपयोगिता
पहिला	३०	३०	३०
दूसरा	२५	२५	५५
तीसरा	२०	२०	७५
चौथा	१५	१५	९०
पांचवां	१०	१०	१००
छठा	५	५	१०५
सातवां	०	०	१०५
आठवां	-५	-५	९५

इस कोष्ठक से यह स्पष्ट मालूम हो जाता है कि ज्यों ज्यों अधिक अमरूद खाये जायेंगे उनकी सीमांत उपयोगिता कम होती जावेगी, लेकिन कुल उपयोगिता तब तक बढ़ती जावगी जब तक किसी वस्तु को उपयोग से अधिकतम तृप्ति प्राप्त न हो जाय। इसके बाद अनुपयोगिता होने से कुल उपयोगिता भी घट जावेगी। लेकिन ऐसी अवस्था बहुत ही कम पाई जाती है जब कि मनुष्य किसी वस्तु का इतना परिमाण में सेवन करे कि उसको अनुपयोगिता मिलने लगे क्योंकि जैसा आगे बतलाया जावेगा हर एक मनुष्य अपने द्रव्य को किसी एक वस्तु पर उतना ही खर्च करेगा जिससे उसको कम से कम

उसको ५ के बराबर होगी। इसी प्रकार तीसरे, चौथे और पाँचवें अमरूदों के खाने में उसको क्रमशः कम तृप्ति प्राप्त होती जायगी। इसलिए इन अमरूदों की उपयोगिता क्रमशः घटती जायगी। मान लीजिए तीसरे, चौथे, पाँचवें और छठे अमरूद की उपयोगिता उसके लिए २०, १५, १० और ५ के बराबर है। इन ६ अमरूदों से उसकी इच्छा पूर्ण हो जाती है। लेकिन मान लीजिए कि वह मित्र के दबाव में एक और सातवाँ अमरूद भी खा जाये, तो उसको उससे कुछ भी उपयोगिता प्राप्त न होगी क्योंकि उसकी तृप्ति अमरूदों से हो चुकी थी। इसलिए इस सातवें अमरूद की उपयोगिता उसके लिए शून्य हुई। लेकिन अगर वह जबरदस्ती एक और आठवाँ अमरूद भी ठूँस ले तो शायद उसके पेट में कुछ गड़बड़ होकर उसको उपयोगिता के बदले कुछ अनुपयोगिता मिलने की सम्भावना हो। मान लीजिए कि आठवें अमरूद की उसके लिए अनुपयोगिता ५ अर्थात् —५ उपयोगिता है।

यहाँ पर यह बात ध्यान में रखने के योग्य है कि किसी वस्तु के अधिक परिमाण में उपभोग करने से कुल उपयोगिता नहीं घटती परन्तु सीमान्त उपयोगिता घटती है। कुल उपयोगिता तो बढ़ती जाती है जब तक कि पूर्ण तृप्ति प्राप्त न हो जाय लेकिन उसके बढ़ने का अनुपात कम होता जाता है। इस अमरूदवाले उदाहरण में एक अमरूद खाने में उपभोक्ता को ३० उपयोगिता मिली और दो अमरूद खाने से ३०+२५=५५

उपयोगिता मिली जो कि दो अमरूदों की कुल उपयोगिता हुई। लेकिन पहिले अमरूद से उपभोक्ता को ३० सीमांत उपयोगिता थी लेकिन दो अमरूद खाने से सीमांत उपयोगिता २५ हो गई।

निम्नलिखित कोष्ठक में ऊपर लिखे अनुसार अमरूदों की उपयोगिता दी जाती है —

अमरूद	उपयोगिता	सीमान्त उपयोगिता	कुल उपयोगिता
पहिला	३०	३०	३०
दूसरा	२५	२५	५५
तीसरा	२०	२०	७५
चौथा	१५	१५	९०
पांचवां	१०	१०	१००
छठा	५	५	१०५
सातवां	०	०	१०५
आठवां	–५	–५	९५

इस कोष्ठक से यह स्पष्ट मालूम हो जाता है कि ज्यों ज्यों अधिक अमरूद खाये जायेंगे उनकी सीमांत उपयोगिता कम होती जावेगी, लेकिन कुल उपयोगिता तब तक बढ़ती जावगी जब तक किसी वस्तु को उपयोग से अधिकतम तृप्ति प्राप्त न हो जाये। इसके बाद अनुपयोगिता होने से कुल उपयोगिता भी घट जावगी। लेकिन ऐसी अवस्था बहुत ही कम पाई जाती है जब कि मनुष्य किसी वस्तु का इतना परिमाण में सेवन करे कि उसको अनुपयोगिता मिलने लगे क्योंकि जैसे आगे बतलाया जावेगा हर एक मनुष्य अपने द्रव्य को एक वस्तु पर उतना ही खर्च करेगा जिससे उसको

उस द्रव्य की उपयोगिता के बराबर उपयोगिता मिले। हाँ अगर कोई वस्तु बिना मूल्य मिल जाय और मनुष्य को अपने स्वास्थ्य का कुछ भी ख्याल न हो तो वह अधिकतम तृप्ति मिलने पर भी खाता जाय।

पिछले पृष्ठ पर दिए हुए अंकों का रेखा चित्र नीचे दिया गया है। इससे सीमांत उपयोगिता ह्रास नियम और स्पष्ट हो जाता है।
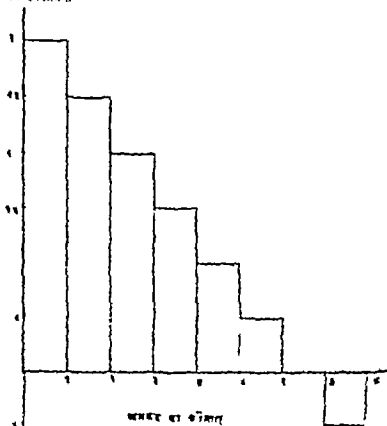
इस रेखा चित्र में खम्भों की ऊंचाई अमरूदों की सीमांत उपयोगिता बतलाती है। इस चित्र से यह स्पष्ट मालूम होता है कि ज्यों ज्यों अधिक अमरूद खाये गये प्रत्येक की सीमांत उपयोगिता घटती गई और खम्भों की ऊंचाई भी कम होती गई यहाँ तक कि सातवें अमरूद की उपयोगिता बतलानेवाले खम्भ की ऊंचाई कुछ नहीं है और आठवें का खम्भ नीचे चला गया है जिससे यह मालूम होता है कि आठवें अमरूद से अनुपयोगिता प्राप्त हुई। इस चित्र में इन खम्भों का क्षेत्रफल कुल उपयोगिता बतलाता है। यदि हमें चार अमरूदों की कुल उपयोगिता मालूम करना हो तो पहिले, दूसरे, तीसरे और चौथे खम्भों के क्षेत्रफलों को जोड़ देने से यह आसानी से मालूम हो जायगी।

सीमांत-उपयोगिता-ह्रास नियम को अधिक स्पष्ट करने के लिए हम एक ऐसे वस्तु का एक और उदाहरण लेते हैं जो कि छोटे से छोटे परिमाण में ली जा सकती है। नीचे के कोष्ठक और रेखाचित्र में एक परिवार के एक महीने के लिये १० सेर चीनी की सीमांत उपयोगिता और कुल उपयोगिता दिखलाई गई है।

सेर	सीमान्त उपयोगिता	कुल उपयोगिता
पहिला	५५	५५
दूसरा	५०	१०५
तीसरा	४५	१०५
चौथा	४०	१९०
पांचवां	३५	२२५
छठा	३०	२५५
सातवां	२५	२८०
आठवां	२०	३००
नवां	१५	३१५
दसवां	१०	३२५
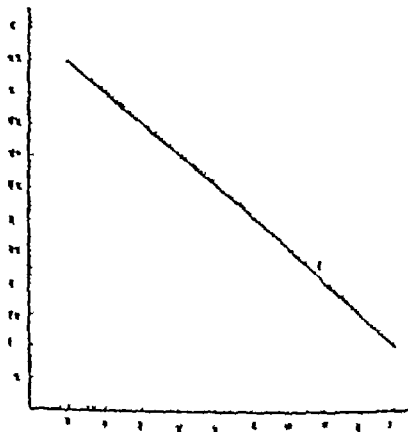
जैसे पहिले रेखाचित्र में प्रत्येक अमरूद की उपयोगिता दिखलाई गई थी उसी प्रकार इस रेखाचित्र में भी प्रत्येक सेर चीनी की उपयोगिता दिखलाई गई है। किन्तु पहिले रेखाचित्र में उपयोगिता स्तम्भ के रूप में दिखलाई गई है और इस रेखाचित्र में उपयोगिता एक रेखा द्वारा दिखलाई गई है। यह एक रेखा

नीचे को गिरती जा रही है जिससे यह सूचित होता है कि प्रत्येक सेर चीनी की उपयोगिता घटती जा रही है ।
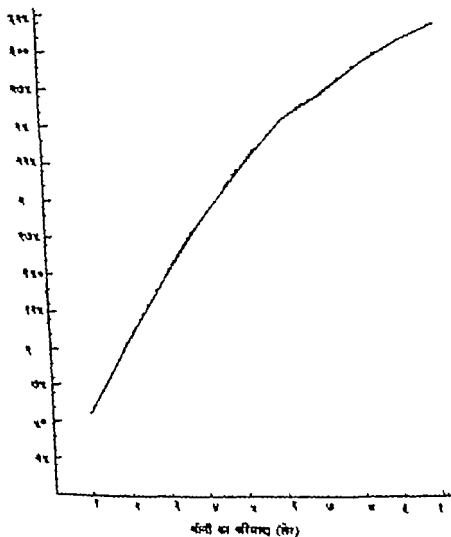
पिछले पृष्ठ पर दिए हुए रेखाचित्र में १० सेर चीनी की कुल उपयोगिता दिखलाई गई है।

इस रेखा चित्र से यह स्पष्ट हो जाता है कि किसी वस्तु के अधिक परिमाण में सेवन करने से कुल उपयोगिता बढ़ती है क्योंकि हम देखते हैं कि कुल-उपयोगिता रेखा सदा है ऊँची उठती जा रही है।

इस उपयोगिता ह्रास नियम में यह बात मान ली गई है कि वस्तु का उपभोग किसी खास स्वभाव के मनुष्य द्वारा किसी खास समय में और खास परिस्थिति में हुआ है। अगर कोई मनुष्य एक अमरूद सुबह, एक दोपहर को और एक शाम को खाये तो सम्भव है कि प्रत्येक अमरूद की उपयोगिता उसको बराबर मालूम हो। लेकिन पहिले, दूसरे और तीसरे अमरूद खाने में बहुत समय का अन्तर हो गया है इसलिये यह नियम यहाँ लागू नहीं होता है। इसी प्रकार परिस्थिति और स्वभाव का भी इस नियम में प्रभाव पड़ता है। यह कहा जाता है कि शराब ज्यों ज्यों ज्यादा पी जाती है त्यों त्यों उसको अधिक पीने की इच्छा होती है। इसलिये पहिले प्याले से दूसरे प्याले की उपयोगिता अधिक मालूम होती है इत्यादि। लेकिन यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि शराब पीने के बाद उस मनुष्य के होश हवास दुरुस्त नहीं रहते हैं इसलिये उसकी स्थिति पहिले की सी नहीं रहती है। इसीलिये इस असाधारण दशा में उसको अधिक शराब पीने से अधिक उपयोगिता मालूम होती है।

इस नियम के सम्बन्ध में एक आक्षेप यह भी है कि अगर कोई वस्तु का बहुत सूक्ष्म परिमाण में उपभोग किया जाय तो पहिले उसकी सीमान्त उपयोगिता में ह्रास के बदले वृद्धि होती है। अगर हम अमरूद की बहुत ही छोटी छोटी फाँकें करके खांय तो शायद चार पांच फाँक तक सीमांत उपयोगिता की वृद्धि हो और दस बारह फांक तक सीमांत उपयोगिता बराबर रहे, लेकिन किसी एक सीमा के बाद फिर उपयोगिता ह्रास नियम लागू हो जावेगा।

कुछ बाहरी दिखावट और फैशन की चीजें ऐसी होती हैं जिनके परिमाण में वृद्धि होने पर भी उनकी उपयोगिता में वृद्धि होती है। अगर दो धनी लोगों के पास एक एक मोटर कार हो और उनमें से एक मनुष्य एक और मोटर कार खरीद ले तो उसको दूसरी मोटर कार से अधिक सन्तोष मालूम पड़ता है और दूसरी मोटर की उपयोगिता पहिली से अधिक मालूम पड़ती है क्योंकि दो मोटर होने से वह अपने को पड़ोसी से श्रेष्ठ समझने लगता है।

इसी प्रकार कुछ ऐसी दुष्प्राप्य और अप्राप्य वस्तुएँ हैं जिनकी वृद्धि से उपयोगिता में बहुत वृद्धि हो जाती है। उदाहरण के लिये मान लीजिए कि किसी मनुष्य के पास एक बड़ा बहुमूल्य हीरा है। अगर उसको मालूम हो जाय कि ऐसा ही हीरा एक और किसी के पास है तो उसको खरीदने के लिए वह पहिले हीरे की अपेक्षा बहुत अधिक मूल्य देने को तैयार हो

जायगा क्योंकि अगर एक के बजाय उसके पास दो हीरा हो जायें तो वह पहिले की अपेक्षा बहुत बड़ा आदमी समझा जायगा। इसलिए दूसरे हीरे से उसको पहिले हीरे की अपेक्षा अधिक उपयोगिता मिलेगी।

द्रव्य की सीमान्त-उपयोगिता—द्रव्य के विषय में भी सीमान्त उपयोगिता ह्रास नियम लागू होता है। ज्यों ज्यों कोई मनुष्य धनवान होता जाता है त्यों त्यों उसके द्रव्य की उपयोगिता कम होती जाती है। उदाहरण के लिए एक ऐसे मनुष्य को लीजिए जिसकी आमदनी ५०) रु० माहवार से १००) रु० माहवार हो गई है। जब तक उसकी आमदनी ५०) रु० माहवार थी तब तक वह तीन सेर घी माहवार खरीदता था, लेकिन जब उसकी आमदनी १००) रु० महीना हो गई तो वह उसी भाव पर महीने में ५ सेर खरीदने लगा। इससे प्रकट हो जाता है कि आमदनी बढ़ जाने से रुपये की सीमान्त उपयोगिता में कमी होगा। इसके विपरीत जब आमदनी कम होती जाती है, तो द्रव्य की सीमान्त उपयोगिता बढ़ती जाती है। जब माह के आरम्भ में विद्यार्थियों के पास रुपया आते हैं तो पहिले वे दिल खोल कर खर्च करते हैं, लेकिन जब माह के अन्त में रुपया खतम होने को आता है तो फिर वे गम्भीर कर खर्च करते हैं। इसका कारण यही है कि माह के आरम्भ में अधिक रुपया होने से रुपये की सीमान्त उपयोगिता कम होती है, और जैसे २ रुपया कम होता जाता है बाकी रुपयों की सीमान्त उपयोगिता बढ़ती जाती है

यहाँ तक कि अन्तिम रुपये की उपयोगिता बहुत हो जाती ।

गरीब आदमी का द्रव्य का सीमान्त उपयोगिता धनवान् आदमी से अधिक होती है। अगर एक आदमी की आमदनी २०) रु० महीना हो और दूसरे की १०००) रु० हो तो गरीब आदमी के बीसवें रुपये की उपयोगिता अमीर आदमी के हजारहवें रुपये से अधिक होगी। इसलिये गरीब आदमी का बीसवाँ रुपया खर्च करने के लिए अधिक उपयोगिता की आवश्यकता होगी बनिस्बत अमीर आदमी को हजारहवाँ रुपया खर्च करने के।

आय का उपयोगिता बहुत धीरे धीरे घटती है। इसका कारण यह है कि द्रव्य एक ऐसी वस्तु है जिससे अनेक प्रकार की वस्तुएँ प्राप्त हो सकती हैं। इसलिये ज्यों ज्यों आय में वृद्धि हो और उससे उपभोग की नयी वस्तुएँ खरीदी जायं तो इस आय की वृद्धि से सीमान्त उपयोगिता में बहुत कम ह्रास होगा। द्रव्य को एक वस्तु मानने के बजाय उसको कई वस्तुओं का समुच्चय समझना चाहिये। अगले पृष्ठ पर दिये हुए कोष्ठक और रेखाचित्र में यह दिखलाया गया है कि द्रव्य की सीमान्त उपयोगिता बहुत धीरे धीरे किस प्रकार कम होती है।

मासिक आय	सीमान्त उपयोगिता
४०) रुपया	१००
४५) "	९८
५०) "	९६
५५) "	९४
६०) "	९२
६५) "	९०
७०) "	८८
८०) "	८४
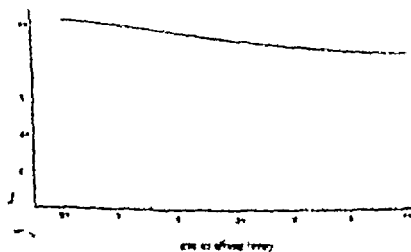
इस रेखा चित्र में वह रेखा बहुत ही धीरे धीरे नीची होती चली जा रही है। इससे यह मालूम होता है कि जैसे जैसे धन मनुष्य

की मासिक आय बढ़ती गई वैसे वैसे उस आय की सीमान्त उपयोगिता धीरे धीरे घटती गई ।

सम-सीमांत उपयोगिता नियम—प्रत्येक मनुष्य चाहता है कि वह अपने द्रव्य को इस प्रकार खर्च करे कि जिससे उसको अधिकतम उपयोगिता प्राप्त हो। यही कारण है कि लोगों को प्रायः यह समस्या हल करनी पड़ती है कि कौनसी वस्तु किस समय और कितनी खरीदनी चाहिए । लोग अपने मन में एक वस्तु की उपयोगिता की तुलना दूसरे वस्तु की उपयोगिता से करते हैं, और उस वस्तु को खरीदते हैं जिसकी उपयोगिता उनको सब से अधिक मालूम हो। अब चूंकि मनुष्य को विविध वस्तु की विविध संख्या में आवश्यकता होती है, और सीमांत उपयोगिता ह्रास नियम के अनुसार प्रत्येक वस्तु को अधिक परिमाण में खरीदने से क्रमशः सीमांत उपयोगिता कम होती जाती है, इसलिए साधारण मनुष्य को यह निश्चय करने में कठिनता प्राप्त होती है कि वह कौन कौन सी वस्तु कितनी कितनी खरीद कि जिससे उसको अपने द्रव्य से अधिकतम उपयोगिता प्राप्त हो। इसी बात का विवेचन अर्थशास्त्र में सम-सीमांत उपयोगिता नियम में किया जाता है। इस नियम का यह मतलब है कि अधिकतम उपयोगिता प्राप्त करने के लिए प्रत्येक उपभोक्ता अपनी आय को विविध वस्तुओं में इस प्रकार विभाजित करे कि उसको प्रत्येक वस्तु पर खर्च किये अन्तिम व्यय से करीब करीब बराबर उपयोगिता प्राप्त हो । इसको अपने द्रव्य से अधिकतम

उपयोगिता तभी प्राप्त हो सकती है जब कि प्रत्येक वस्तु पर खर्च किये गये अन्तिम सिक्के से समान मात्रा में उपयोगिता मिले। यह नियम आसानी से सिद्ध किया जा सकता है।

निम्नलिखित कोष्टक में यह दिखलाया गया है कि यदि कोई मनुष्य गेहूँ, चावल, कपड़ा और पानी पर अपनी आय खर्च करता तो क्रमशः प्रत्येक रुपये से उसको कितनी उपयोगिता प्राप्त होगी।

रुपया	प्राप्त उपयोगिता			
	गेहूँ से	चावल से	कपड़े से	पानी से
पहला	१००	८०	९०	५०
दूसरा	८०	६०	५०	४०
तीसरा	६०	४०	७०	३०
चौथा	५०	३०	३०	२०
पाँचवाँ	४०	२०	१७	१५
छठा	३०	१२	१०	१०
सातवाँ	२०	१०	६	५
आठवाँ	१५	५	३	३
नवाँ	१०	३	२	१
दसवाँ	५	०	१	०

इस कोष्ठक से यह पता लगता है कि यह मनुष्य पहिला रुपया गेहूँ पर खर्च करके १०० उपयोगिता प्राप्त करता है, दूसरा रुपया खर्च करने से जो गेहूँ मिलता है उसकी उपयोगिता ८० है। यदि वह अपना रुपया चावल पर खर्च करता है तो उसे ८० उपयोगिता मिलती है और दूसरा रुपया चावल

पर खर्च करने से उसे ६० उपयोगिता प्राप्त होती है। [illegible]
कि इस मनुष्य के पास ८ रुपये हैं और वह [illegible]
वस्तुओं पर खर्च करना चाहता है। वह इन [illegible] वस्तुओं
पर इस प्रकार खर्च करेगा जिससे [illegible] अधिकतम उप-
योगिता प्राप्त हो, इसलिये वह पहिला रुपया गेहूँ [illegible]
करेगा, दूसरा रुपया वह कपड़े पर खर्च करेगा, परन्तु [illegible]
पर खर्च किये जाने वाला प्रथम रुपया होगा और उससे [illegible]
९० उपयोगिता मिलेगी। तीसरा और चौथा रुपया वह गेहूँ [illegible]
चावल पर खर्च करेगा, दोनों से उसे बराबर उपयोगिता प्राप्त [illegible]
वह पाँचवा रुपया कपड़े पर खर्च करके ७० [illegible]
प्राप्त करेगा। छठवाँ, सातवाँ और आठवाँ रुपया वह गेहूँ [illegible]
और चीनी पर बराबर खर्च करके बराबर उपयोगिता प्राप्त
करेगा। इस प्रकार रुपया खर्च करने पर उस मनुष्य को [illegible]
उपयोगिता मिलेगी।

अन्तिम रुपया खर्च करने से प्राप्त उपयोगिता क्रमशः ६०, ६० और ६० है। इससे यह सिद्ध होता है कि उसने अधिकतम उपयोगिता प्राप्त करने के लिए सम-सीमान्त उपयोगिता नियम का पालन किया। वस्तुओं के खरीदने के लिए प्रत्येक बुद्धिमान मनुष्य इसी नियम का पालन करता है।

हम यह पहिले समझा आए हैं कि रुपये की भी सीमान्त उपयोगिता होती है और वह बहुत धीरे धीरे घटती है। मान लीजिए कि उपर्युक्त उदाहरण में उस मनुष्य को रुपये की सीमान्त उपयोगिता ३० है तो वह मनुष्य गेहूँ पर ६ रुपये खर्च करने को तैयार हो जायगा; यदि वह सातवाँ रुपया खर्च करेगा तो उसके बदले में जो गेहूँ मिलेगा उसकी उपयोगिता केवल २० ही रहेगी। रुपये की उपयोगिता उसे ३० है इसलिए वह सातवाँ रुपया गेहूँ पर खर्च करने को राजी नहीं होगा। इसी प्रकार वह चावल पर चार रुपये, कपड़े पर चार रुपये और चीनी पर तीन रुपये खर्च करने को राजी होगा। इस तरह वह प्रत्येक वस्तु पर खर्च किये हुए अन्तिम रुपये से प्राप्त उपयोगिता को अपने रुपये की उपयोगिता के बराबर बनाकर समसीमान्त उपयोगिता नियम का पालन करेगा। पृष्ठ ३८ पर दिये हुए कल्पित उपयोगिता सम्बन्धी अङ्कों को अगले पृष्ठ पर दिये हुए रेखा चित्र में गेहूँ, चावल, कपड़ा, चीनी और द्रव्य की रेखाओं द्वारा दिखलाया गया है।
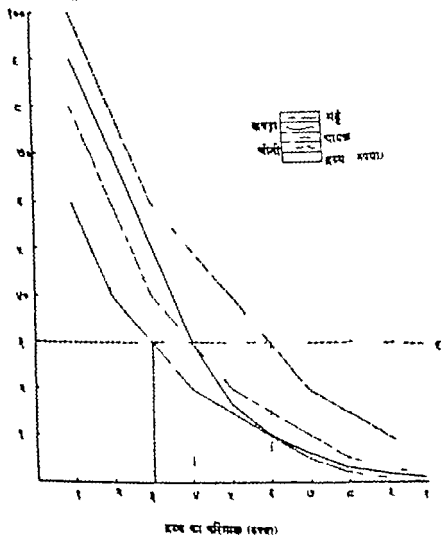
इस रेखाचित्र से यह स्पष्ट रूप से मालूम होता है कि वह मनुष्य प्रत्येक वस्तु पर कितने रुपये खर्च करेगा। जिस

बिंदु पर द्रव्य की रेखा किसी वस्तु की रेखा पर मिलती है उसी बिंदु से उस पर व्यय किये गए द्रव्य का परिमाण मालूम हो जाता है। इस रेखाचित्र से भी यही पता लगता है कि वह मनुष्य चीनी पर चार रुपये, चावल पर चार रुपये, कपड़े पर चार रुपये और गेहूँ पर ६ रुपये व्यय करेगा। इस प्रकार अन्य वस्तुओं के उपयोगिता-सम्बन्धी अङ्क प्राप्त करके भी रेखाएँ खींचकर यह बतलाया जा सकता है कि कोई भी मनुष्य अधिकतम उपयोगिता प्राप्त करने के लिए प्रत्येक वस्तु पर कितना रुपया किसी समय व्यय करेगा।

इस नियम से यह नहीं समझ लेना चाहिये कि जब कोई मनुष्य आवश्यक वस्तुओं को खरीदने के लिए बाजार जाता है तो वह इन वस्तुओं के उपयोगिता की तालिका अपने साथ बनाकर ले जाता है या वह बाजार में जाकर इसी प्रकार की कोई तालिका बनाता है। परन्तु फिर भी हम देखते हैं कि सब इस नियम का उपयोग अवश्य करते हैं। खरीदते समय वह अपने मन में प्रत्येक वस्तु पर अन्तिम रुपया व्यय करके प्राप्त होने वाली उपयोगिता की तुलना करता है और जब सभी वस्तुओं की इस प्रकार की उपयोगिता बिलकुल बराबर हो जाती है तब वह असमंजस में पड़ जाता है और यह निश्चय नहीं कर पाता कि किसको खरीदा जाय और किसको न खरीदा जाय। यदि उसके पास उस समय दोनों को खरीदने के लिए काफी द्रव्य

न हो तो ऐसी दशा में समसीमान्त उपयोगिता नियम का पालन स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

इस नियम के सम्बन्ध में हमें यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि प्रत्येक मनुष्य भविष्य के लिये कुछ न कुछ इन्तजाम करना चाहता है। इसके लिये उसको अपनी वर्तमान आवश्यकताओं में काट छाँट करके भविष्य के लिए द्रव्य का संरक्षण करना पड़ता है। उसको इस समय के आवश्यकीय पदार्थों की उपयोगिता की भविष्य में खरीद आनेवाले पदार्थों की उपयोगिता से तुलना करनी पड़ती है जिससे वह भविष्य के लिये द्रव्य बचा कर रखे। लेकिन भविष्य के अनिश्चित होने के कारण मनुष्य को भविष्य में खरीदी जानेवाली वस्तुओं की उपयोगिता का अन्दाज लगाना बहुत मुश्किल होता है।

इस नियम में समय का विशेष ख्याल रखना पड़ता है। जिन वस्तुओं को खरीदने के लिए हम एक वस्तु की उपयोगिता को अन्य वस्तुओं की उपयोगिताओं से तुलना करते हैं, यह तुलनात्मक काम एक ही समय में होना चाहिये। समय के बदल जाने से वस्तुओं की उपयोगिताओं में भी भिन्नता आ सकती है। आज हमको पहिले रुपये से गेहूँ खरीदने में सौ और कपड़ा खरीदने में ९० उपयोगिता मिलने से हम पहिले रुपये से गेहूँ खरीद लें। लेकिन अगर हम यह रुपया आज खर्च न करके कल के ऊपर उठा रखें तो सम्भव है कि दूसरे दिन हमको प्रथम रुपया खर्च करने से गेहूँ से केवल ९० उपयोगिता ही प्राप्त हो और हम

उस रुपये से कपड़ा ही खरीदें। इसलिए यह ध्यान में रखना चाहिए कि जब हम सममीमान्त उपयोगिता नियम के अनुसार व्यय करने के लिए वस्तुओं की उपयोगिताओं की तुलना करते हैं तो यह तुलना एक समय विशेष के लिए ही लागू हो सकती है। दूसरे समय के लिए इसको नये सिर से तुलना करनी पड़ती है।

सूचना—व्यावहारिक जीवन में सम सीमान्त उपयोगिता नियम का बहुत महत्व है। प्रत्येक व्यक्ति को भिन्न भिन्न मदों पर व्यय करते हुए इसी नियम के अनुसार चलना आवश्यक होता है। इस पुस्तक के विषय से [illegible] बाहर [illegible] विस्तार यहाँ नहीं किया गया।

छठा अध्याय

मांग

इच्छा, आवश्यकता, और मांग इन तीन शब्दों का प्रयोग अर्थशास्त्र में भिन्न भिन्न अर्थ में होता है, यद्यपि साधारण व्यवहार में इन विशेषताओं पर कुछ अधिक ध्यान नहीं दिया जाता।

इच्छा शब्द का विस्तार बहुत बड़ा है। आवश्यकता और मांग इसके अन्तरगत हैं। एक बच्चा बाजार में बहुत सी चीजें देखता है और उनके लिए उसका जी ललचाता है। हम कहते हैं कि बच्चे को उन वस्तुओं का लेने की इच्छा है, लेकिन हम यह नहीं कह सकते हैं कि बच्चे को उन वस्तुओं की आवश्यकता है अथवा मांग है। आवश्यकता वह इच्छा है जिसमें इच्छित वस्तु को प्राप्त करने के लिये मनुष्य प्रयत्न करने के लिये प्रेरित होता है, और उस वस्तु को प्राप्त करके उसकी तृप्ति होती है। जिस इच्छा को पूर्ण करने के लिये मनुष्य उद्योग करने को बाधित नहीं होता है वह क्षणस्थायी इच्छा पानी के बुलबुलों की तरह पैदा होती और नाश होती रहती है।

किसी वस्तु की मांग से अभिप्राय उस वस्तु के उस परिमाण से होता है, जिसको कोई मनुष्य, किसी खास समय में, किसी निश्चित कीमत पर खरीदने को तैयार हो। उदाहरण के लिए मान लीजिए कि उपरोक्त बच्चे को उसके पिता ने कुछ आना दिया। उसने बाजार आकर नारंगियां देखीं। उसकी नारंगी खाने की इच्छा हुई। पूछने पर उसे मालूम हुआ कि एक नारंगी की कीमत दो पैसा है। उस लड़के ने दो नारंगियां खरीद लीं। अब यहां पर हम कह सकते हैं कि लड़के की नारंगी की मांग थी और हम उस मांग को इस प्रकार कहते हैं कि अगर नारंगी की कीमत दो पैसा है तो उस लड़के की उस समय, उस कीमत पर दो नारंगियों की मांग है। मांग और कीमत का बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। बिना कीमत के मांग हो ही नहीं सकती। अर्थशास्त्र के अनुसार हम नहीं कह सकते हैं कि अमुक व्यक्ति की ५०० नारंगियों की मांग है जब तक हम नारंगी की कीमत उसके साथ न जोड़ें। हम कह सकते हैं कि अगर नारंगियों की दर दो रुपया सैकड़ा हो तो किसी मनुष्य की मांग उस समय पांच सौ है।

मांग का नियम—जब किसी वस्तु की कीमत घट जाती है तो उस वस्तु की मांग बढ़ जाती है, और जब उसकी कीमत बढ़ जाती है तो उसकी मांग घट जाती है बशर्ते कि अन्य सब बातें पूर्ववत रहें। मांग का घटना बढ़ना साधारणतया कीमत के क्रमशः घटने बढ़ने पर निर्भर रहता है। जब बाजार में एक

नारंगी मिले तो हम शायद दो नारंगी खरीदें, लेकिन एक पैसे की एक नारंगी मिलने पर हम चार खरीद लेंगे।

मांग का नियम सीमान्त-उपयोगिता-ह्रास नियम और सम-सीमान्त उपयोगिता नियम से निकला है। जब हम किसी वस्तु को अधिक अधिक परिमाण में खरीदते हैं तो क्रमशः उस वस्तु की उपयोगिता कम होती जाती है। पहिली नारंगी से दूसरी नारंगी की उपयोगिता कम होगी, तीसरी की दूसरी से कम होगी और इस प्रकार दसवीं की बहुत ही कम होगी। इसलिये हम शायद पहिली नारंगी के लिए एक आना देने को तय्यार हो जावें लेकिन दसवीं के लिए एक आना कभी नहीं देंगे। शायद जब दुकानदार एक पैसे में एक नारंगी दे तो हम दस खरीद लें। जब वह दो पैसे की एक देगा तो हम शायद पाँच ही खरीदें। अब हम कह सकते हैं कि जब नारङ्गियों की क़ीमत एक आना फी नारङ्गी हो तो हमारी मांग एक नारङ्गी है, जब उसकी क़ीमत दो पैसा फी नारङ्गी हो तो हमारी मांग पाँच है और जब एक पैसा फी नारङ्गी हो तो हमारी मांग दस नारंगियां हैं। यहां पर स्पष्ट हो गया कि जैसे जैसे नारंगियों की क़ीमत घटती गई वैसे वैसे मांग बढ़ती गई।

अब हमें यह देखना है कि मांग के नियम का सम-सीमान्त उपयोगिता नियम से क्या सम्बन्ध है। पिछले अध्याय में बतलाया जा चुका है कि अधिकतम तृप्ति प्राप्त करने के लिए मनुष्य इस प्रकार खर्च करता है जिससे कि प्रत्येक खरीदे

गये पदार्थ पर खर्च किये द्रव्य की अन्तिम इकाई से प्राप्त उपयोगिता बराबर हो। जब हम दो वस्तुओं का परस्पर विनिमय करते हैं तो अदलाबदली बन्द हो जाती है जब बदले में मिलने वाली वस्तु की सीमांत उपयोगिता बदले में दिये जाने वाली वस्तु की सीमांत उपयोगिता से कम होने लगती है। यह आवश्यक है कि दोनों की उपयोगिता करीब करीब बराबर हो। अगर हम एक फाउन्टेन-पेन के बदले एक किताब लें तो हमारे लिए किताब की उपयोगिता फाउन्टेन-पेन से अधिक, या कम से कम बराबर अवश्य होगी। इसी प्रकार जब हम एक आम में एक नारङ्गी खरीदते हैं तो उस नारङ्गी की उपयोगिता हमारे लिए कम से कम एक आम की उपयोगिता के बराबर अवश्य होनी चाहिये। अगर एक आम की उपयोगिता एक नारंगी की उपयोगिता से अधिक है तो कोई भी विचारवान मनुष्य उस दाम पर नारंगी न खरीदेगा। अगर एक नारंगी की उपयोगिता एक आम की उपयोगिता से अधिक हो तो मनुष्य तब तक नारंगियां खरीदेगा—अगर उसके पास खरीदने का द्रव्य हो—जब तक नारंगियों की उपयोगिता (उपयोगिता-ह्रास नियम के अनुसार) घटते घटते एक आम की उपयोगिता के बराबर न हो जाये अर्थात् वह मनुष्य इतनी नारंगियाँ खरीदेगा जब तक नारंगियों की सीमांत उपयोगिता और एक आम की उपयोगिता सम न हो जाय। यह बात पृष्ठ ४९ पर दी हुई तालिका से स्पष्ट हो जायेगी।

नारङ्गियाँ	नारङ्गियों पर खर्च किये गये प्रत्येक आने से प्राप्त उपयोगिता सब कि कीमत		
	एक आना की नारङ्गी है	दो पैसा की नारङ्गी है	एक पैसा की नारङ्गी है
पहिली	१००	१९०	२४०
दूसरी	९०		
तीसरी	८०	१००	
चौथी	७०		
पाँचवीं	५५	९५	१५५
छठीं	४०		
सातवीं	३०	५०	
आठवीं	२०		
नवीं	१५	२७	४५
दसवीं	१२		
ग्यारहवीं	१०	१८	
बारहवीं	८		

इस कोष्ठक का मतलब इस प्रकार है। किसी आदमी को पहिली नारंगी की उपयोगिता १००, दूसरी की ९०, और तीसरी को ८० इत्यादि है। यह सीमान्त उपयोगिता ह्रास नियम के अनुसार घटती जाती है। अब एक नारंगी की कीमत एक आना है तो नारंगी पर खर्च किये गये पहिले आने से प्राप्त उपयोगिता १००, दूसरे से ९०, तीसरे से ८० इत्यादि होती है। अब यदि नारंगी का भाव गिर कर दो पैसा की नारंगी हो जाय तो एक

थी तो मांग ८ थी, जब क़ीमत घट कर दो पैसा हो गई तो मांग घट कर ४ हो गई, और जब कीमत एक आना हुई तो मांग केवल एक रह गई।

मांग के नियम के ये शब्द "बशर्ते कि अन्य सब बातें पूर्ववत रहें" बड़े महत्व के हैं। यह नियम किसी निश्चित समय और परिस्थिति पर निर्भर है। जैसे गर्मी के दिनों में नारङ्गी की उप योगिता जाड़ों की अपेक्षा अधिक होती है। इसलिये यह मुमकिन है कि गरमियों में एक आने की नारङ्गी के भाव पर हम दो या तीन नारंगियां ख़रीद लें और जाड़ों में इस भाव पर एक भी न ख़रीदें। जब किसी मनुष्य की आमदनी अचानक घट जाती है तो द्रव्य की सीमांत उपयोगिता उसके लिये कम हो जाती है। यदि उपर्युक्त मनुष्य की द्रव्य की सीमांत उपयोगिता १०० से घट कर ४५ हो जाय तो वह ऊपर दिये गए कोष्ठक के अनुसार एक आने की नारङ्गी की कीमत पर ५ नारङ्गियें, दो पैसे कीमत पर ८ नारङ्गियें और एक पैसा कीमत पर १२ नारङ्गियें ख़रीदेगा।

माग की सारिणी और मांग की रेखा

अगर हम किसी कोष्ठक म भिन्न भिन्न क़ीमतों पर किसी वस्तु की भिन्न भिन्न माग का परिमाण दर्शायें तो हम उसे उस वस्तु का मांग की सारिणी कहते हैं। हम यह जानते हैं कि वस्तु की क़ीमत

के घटने बढ़ने पर उसकी मांग भी क्रमशः बढ़ती और घटती है। जब हम इस भाव को किसी तालिका द्वारा प्रकट करते हैं तो उसको उस वस्तु की मांग की सारिणी कहते हैं। प्रत्येक मनुष्य की प्रत्येक वस्तु के लिए प्रत्येक काम के लिए भिन्न भिन्न मांग की सारिणी होती है। नीचे एक मनुष्य की घी की मासिक मांग की सारिणी का नमूना दिया जाता है।

क़ीमत	घी की मासिक मांग
५) प्रति सेर	२ सेर
३) "	४ "
२) "	६ "
१) "	१० "
॥) "	१२ "
।) "	१४ "

इस मांग की सारिणी को जब ग्र[illegible] द्वारा प्रकट [illegible] जाता है तो उसको "मांग क[illegible]" क[illegible] उपरोक्त मांग की सारिणी का ग्र[illegible] पृष्ठ पर [illegible] जाता है।

इस रेखाचित्र में क ख रखा को मांग की रेखा कहते हैं। इस रखाचित्र स मालूम होता है कि जब घी की क़ीमत २) प्रति सेर थी तो उसकी मांग ६ सेर थी। जब घी की क़ीमत १) प्रति सेर हो गई तो उसकी मांग १० सेर तक बढ़ गई। मांग की इस वृद्धि को मांग का प्रसार कहते हैं। इससे मांग का नियम सिद्ध होता है।

के घटने बढ़ने पर उसकी *मांग* भी क्रमश बढ़ती और घटती है। जब हम इस बात को किसी तालिका द्वारा प्रकट करते हैं तो उसको उस वस्तु की *मांग* की सारिणी कहते हैं। प्रत्येक मनुष्य की प्रत्येक वस्तु के लिये प्रत्येक काम के लिए भिन्न भिन्न *मांग* की सारिणी होती है। नीचे एक मनुष्य की घी की मासिक *मांग* की सारिणी का नमूना दिया जाता है।

क़ीमत	घी की मासिक *मांग*
५) प्रति सेर	२ सेर
३) "	४ "
२) "	६ "
१) "	१० "
॥) "	१२ "
।) "	१४ "

इस *मांग* की सारिणी का जब रेखाचित्र द्वारा प्रकट किया जाता है तो उसको "*मांग* का रेखा चित्र" कहते हैं। उपरोक्त *मांग* की सारिणी का रेखा-चित्र अगले पृष्ठ पर दिया जाता है।

इस रेखाचित्र में क ख रेखा को मांग की रेखा कहते हैं। इस रेखाचित्र से मालूम होता है कि जब घी की क़ीमत २) प्रति सेर थी तो उसकी मांग ६ सेर थी। जब घी की क़ीमत १) प्रति सेर हो गई तो उसकी मांग १० सेर तक बढ़ गई। मांग की इस वृद्धि को मांग का प्रसार कहते हैं। इससे मांग का नियम सिद्ध होता है।

के घटने बढ़ने पर उसकी माँग भी क्रमशः बढ़ती और घटती है। जब हम इस बात को किसी तालिका द्वारा प्रकट करते हैं तो उसको उस वस्तु की माँग की सारिणी कहते हैं। प्रत्येक मनुष्य की प्रत्येक वस्तु के लिये प्रत्येक काम के लिए भिन्न भिन्न माँग की सारिणी होती है। नीचे एक मनुष्य की घी की मासिक माँग की सारिणी का नमूना दिया जाता है।

क़ीमत	घी की मासिक माँग
५) प्रति सेर	२ सेर
३) "	४ "
२) "	६ "
१) "	१० "
॥) "	१२ "
।) "	१४ "

इस माँग की सारिणी का जब रेखाचित्र द्वारा प्रकट किया जाता है तो उसको "माँग का रेखा चित्र" कहते हैं। उपरोक्त माँग की सारिणी का रेखा-चित्र अगले पृष्ठ पर दिया जाता है।

स हिस्से में २०,००० व्यक्ति हैं तो कुल समाज के घी की मासिक मांग की सारिणी इस प्रकार होगी —

कीमत प्रति सेर	समाज की मांग (सेरों में)			
	अ	ब	स	कुल
१०)	१००० +	० +	० =	१०००
८)	२००० +	५००० +	० =	७,०००
६)	४००० +	१०,००० +	२०,००० =	३४,०००
५)	६००० +	१५,००० +	४०,००० =	६१,०००
४)	८००० +	२५,००० +	६०,००० =	९३,०००
३)	१०,००० +	३५,००० +	८०,००० =	१२५,०००
२)	१२,००० +	४०,००० +	१००,००० =	१५२,०००
१)	१५,००० +	५०,००० +	१२०,००० =	१८५,०००

कुल समुदाय की मांग की सारिणी का रेखाचित्र, प्रत्येक हिस्सों के रेखाचित्रों को जोड़ कर बनाया जा सकता है, या यह जनसमुदाय की सारिणी के अङ्कों से भी उसी प्रकार बनाया जा सकता है जिस प्रकार एक मनुष्य की मांग की रेखा का चित्र बनाया जा चुका है।

मांग की प्रबलता और शिथिलता—जब हम किसी परिस्थिति के कारण उसी कीमत पर पहिले की अपेक्षा अधिक परिमाण में उस वस्तु को खरीदते हैं या उससे अधिक कीमत पर उतना ही या अधिक परिमाणों में उस वस्तु को खरीदते हैं

समाज के मांग की सारिणी—अगर हम किसी समुदाय के प्रत्येक व्यक्ति की (किसी वस्तु की) मांग की सारिणी का योग कर तो हमको उस जन-समुदाय की मांग की सारिणी प्राप्त हो सकती है। लेकिन यह बहुत मुश्किल काम है क्योंकि प्रत्येक मनुष्य की मांग की सारिणी का प्राप्त करना मुमकिन नहीं है। इससे एक आसान तरीका और है यह इस प्रकार है —

(१) समाज का वार्षिक आय के अनुसार भिन्न भिन्न भागों में विभाजित कीजिये जैसे २०) रु० से ५०) रु० मासिक आमदनी तक का प्रथम भाग इत्यादि।

(२) हर एक भाग में परिवारों की संख्या ढूंढ निकालिये।

(३) प्रत्येक भाग से एक औसत परिवार को छांट निकालिये और इस प्रत्येक परिवार की किसी वस्तु की मांग की सारिणी बना लीजिये।

(४) प्रत्येक भाग के औसत परिवार की मांग की सारिणी को उस भाग के कुल परिवारों की संख्या से गुणा करके प्रत्येक भाग के मांग की सारिणी प्राप्त कर लीजिये।

(५) सब भागों की मांग की सारणी जोड़ कर कुल समाज की मांग की सारिणी बना लीजिये।

मान लीजिये कि किसी एक काल्पनिक समाज में १६००० व्यक्ति हैं जिनमें से अ हिस्से में १०००, ब हिस्से में ५००० और

इस रेखाचित्र के अनुसार द्रव्य के बढ़ जाने से या और किसी कारण से मांग की रेखा म म' से बदल कर न न' हो गई। यहाँ पर यह स्पष्ट है कि वह मनुष्य पहिले ०क कीमत पर जिस वस्तु को ०प परिमाण में खरीदता था, अब उसी कीमत पर ०प' परिमाण में खरीदने लगता है। यह भी स्पष्ट है कि वह ०प

तो हमारी मांग उस वस्तु के लिए बढ़ जाती है। इस प्रकार मांग के बढ़ने को मांग की प्रबलता कहते हैं। लेकिन जब कीमत कम होने से मांग बढ़े तो उसे मांग का प्रसार कहते हैं। जब कोई वस्तु फैशन में आजाती है या मनुष्य की आदत बदल जाती है किसी वस्तु की उपयोगिता बढ़ जाती है तो उस वस्तु की मांग प्रबल हो जाती है। इसी प्रकार किसी मनुष्य की आमदनी बढ़ जाने से भी किसी वस्तु की मांग का परिमाण उसी कीमत पर बढ़ जाता है। इसको भी मांग की प्रबलता कहते हैं। किसी वस्तु की मांग की प्रबलता उस वस्तु की क़ीमत बढ़ने का एक कारण होता है। परन्तु मांग का प्रसार क़ीमत के कम होने का फल है।

इसी प्रकार से इसके विपरीत मांग की शिथिलता किसी वस्तु के फैशन से बाहर चले जाने से या मनुष्य की आदत बदलने पर किसी वस्तु की उपयोगिता घट जाने से या आमदनी में कमी हो जाने से होती है। ऐसी स्थिति में कोई मनुष्य उसी क़ीमत पर पहिले की अपेक्षा कम खरीदता है या क़ीमत घट जाने पर भी उतनी ही या उससे कम परिमाण में उस वस्तु को खरीदता है। इसमें मांग की घटी से यह भिन्नता है कि मांग की घटी क़ीमत बढ़ने से होती है, लेकिन मांग की शिथिलता से क़ीमत में कमी होने की सम्भावना रहती है। अगले पृष्ठ पर दिये हुए रेखाचित्रों में मांग की प्रबलता और शिथिलता दिखाई जाती है।

वस्तु का परिमाण

इस रेखाचित्र के अनुसार द्रव्य के बढ़ जाने से या और किसी कारण से मांग की रेखा म म' से बदल कर न न' हो गई। यहाँ पर यह स्पष्ट है कि यह मनुष्य पहिले ०क कीमत पर जिस वस्तु को ०प परिमाण में खरीदता था, अब उसी कीमत पर ०प' परिमाण में खरीदने लगता है। यह भी स्पष्ट है कि यह ०प

परिणाम का ०क' पर अर्थात् पहिले से अधिक क़ीमत पर खरीदता है। इसको मांग का प्रबलता कहते हैं।
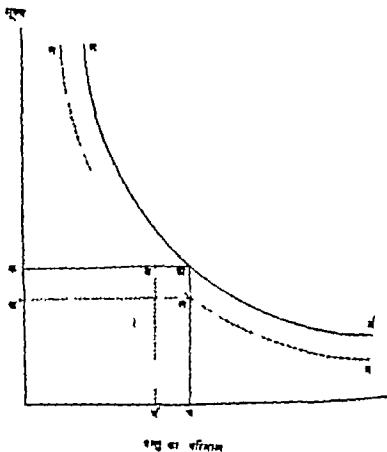
इसी प्रकार इस रेखाचित्र में जब किसी कारण से उसकी मांग की रेखा म म' से बदल कर न न' हो जाती है तो वह पहिली क़ीमत पर पहिले से कम परिमाण में वस

वस्तु को खरीदता है। अर्थात् वह ०प के बदले केवल ०प' खरीदता है। और ०प परिमाण को पहिले से कम क़ीमत ०क' पर खरीदने को तैयार होता है। इसको मांग की शिथिलता कहते हैं। किसी मनुष्य की आमदनी कम हो जाने के कारण अथवा किसी वस्तु के फैशन से निकल जाने के कारण उसकी मांग शिथिल हो जाती है। वस्तु की मांग शिथिल हो जाने से उसका मूल्य कम हो जाता है और उसके उत्पत्ति के परिमाण में भी कमी हो जाती है।

सातवाँ अध्याय

उपभोक्ता की बचत

पिछले अध्याय में यह सूचित किया जा चुका है कि बहुधा किसी वस्तु का संपादन से हमको अधिक उपयोगिता मिलती है बनिस्बत उस वस्तु पर खर्च किये गये द्रव्य की उपयोगिता के। अर्थात् वस्तु का संपादन से हम नफे में रहते हैं, हमें उपयोगिता में कुछ बचत होती है। अर्थशास्त्र की दृष्टि में इस बचत का बहुत बड़ा महत्त्व है। इसलिये इस अध्याय में इसी विषय का विवेचन किया जाता है।

मान लीजिये कोई आदमी जङ्गल की राह जा रहा है। उसको बहुत भूख लगी है। उसकी भूख इतनी प्रबल है कि वह थोड़े से भोजन के लिए उसके पास जो कुछ है सब देने को तैयार है। जाते जाते उसको एक आम का पेड़ मिलता है। वह एक आम तोड़ कर खाता है। उससे उसको बहुत तृप्ति होती है। उस तृप्ति के बदले उसको आम तोड़ने में जो थोड़ा सा श्रम हुआ वह कुछ भी नहीं मालूम होता है। इसके बाद वह दूसरा आम तोड़ कर खाता है इससे उसको पहले की अपेक्षा कुछ कम तृप्ति होती है और श्रम कुछ अधिक

मालूम देता है। इसी प्रकार तीसरे, चौथे, पाँचवें आम में क्रमशः उसकी तृप्ति कम होती जाती है और उसका श्रम अधिक मालूम पड़ता है। यहाँ तक कि जब वह आठवां आम तोड़ कर खा लेता है तो उसको बहुत कम तृप्ति होती है, और वह सोचने लगता है कि अब उसको नवां आम तोड़ने के लिए श्रम करना चाहिये या नहीं। उसको मालूम देता है कि नवें आम को खाने से उसको तृप्ति तो शायद कुछ हो भी या न हो लेकिन तोड़ने में उसके थके हुए शरीर को कष्ट अवश्य बहुत अधिक होगा। इसलिये वह निश्चय करता है कि अब अधिक परिश्रम करने के बदले कुछ देर आराम कर लेना अधिक उपयोगी होगा।

अगर हम सूक्ष्म दृष्टि से देखें तो हमको मालूम हो जायेगा कि पहला आम खाने से उसको बहुत अधिक तृप्ति हुई और बहुत कम श्रम, दूसरे से कुछ कम तृप्ति और कुछ अधिक श्रम हुआ इत्यादि। अब अगर हम आम खाने से उसकी वास्तविक तृप्ति का अन्दाजा करना चाहें तो हम प्रत्येक आम से प्राप्त की गई उपयोगिता (तृप्ति) में से उसको प्राप्त करने के लिये किये गये श्रम को घटा कर मालूम कर सकते हैं। जैसे, अगर पहिले आम से उसको १०० उपयोगिता प्राप्त होती है और १० उपयोगिता के बराबर श्रम होता है तो उसको १००—१०=९० वास्तविक (Net) उपयोगिता मिलती है। यह उसके एक प्रकार का लाभ अथवा बचत है। इसी बचत को अर्थशास्त्र में 'उपभोक्ता की

किसी वस्तु की हम इस प्रकार की मांग की पूरी सारिणी नहीं बना सकते। हम यह नहीं जानते कि यदि पांच रुपया सेर गेहूं हो तो कोई व्यक्ति कितना गेहूं प्रति मास खरीदेगा, क्योंकि गेहूं की इतनी अधिक कीमत कभी भी नहीं रही। इसी प्रकार, हम यह भी नहीं कह सकते कि यदि एक पैसे का पांच सेर गेहूं बिकने लगे तो कोई व्यक्ति कितना गेहूं खरीदेगा क्योंकि गेहूं की इतनी कम क़ीमत भी कभी नहीं रही। इसलिये हम किसी भी वस्तु की मांग की पूरी सारिणी नहीं बना सकते। इसी कारण उपभोक्ता की बचत को द्रव्य में सही आंकना मुश्किल हो जाता है।

उपभोक्ता की बचत मापने के लिये हमको यह बात मान लेनी पड़ती है कि उपभोक्ता अपने द्रव्य का एक छोटा अंश किसी एक वस्तु पर खर्च करता है। क्योंकि अगर कोई अपनी आमदनी का एक बहुत बड़ा अंश किसी एक वस्तु में खर्च कर दे तो उसके द्रव्य की सीमान्त उपयोगिता में बहुत अधिक बदलाव हो जाता है जिससे किसी वस्तु पर खर्च किये द्रव्य की उपयोगिता जान लेना कठिन हो जाता है इसलिये उपभोक्ता की बचत का अन्दाज़ा लगाना भी बहुत मुश्किल हो जाता है। अगर हम किसी एक वस्तु पर अपने कुल द्रव्य का एक छोटा सा अंश खर्च करें तो उससे द्रव्य की सीमान्त उपयोगिता में अधिक बदलाव नहीं होता, और उपभोक्ता की बचत मापने में भी कुछ सुगमता हो जाती है।

अगर हम समाज की उपभोक्ता की बचत मापना चाहें तो

हमको यह मान लेना पड़ता है कि भिन्न भिन्न मनुष्यों को बरा बर द्रव्य स समान तृप्ति मिलती है। परन्तु वास्तव में ऐसा होता नहीं है। प्रत्येक मनुष्य के स्वभाव, आचरण और परि स्थितियों की भिन्नता क कारण समान द्रव्य स एक सी तृप्ति नहीं मिलती है।

उपभोक्ता की बचत का अन्तर

यद्यपि हम किसी मनुष्य को किसी वस्तु म प्राप्त हुए पूर्ण उपभोक्ता की बचत को ठीक ठीक नहीं माप सकते, क्योंकि उसकी पूरी मांग की सारिणी बनाना मुमकिन नहीं है, फिर भी हम यह जान सकते हैं कि किसी वस्तु की क़ीमत के घटने अथवा बढ़ने मे उपभोक्ता की बचत में क्या फ़र्क पड़ जाता है। नीचे के कोष्ठक में किसी मनुष्य की चावल की मांग की सारिणी दी जाती है।

मूल्य	(चावल की मांग)
५) रु० प्रति मन	२० मन
४॥) ,, ,, ,,	२१ ,,
४) ,, ,, ,,	२२ ,,

इस कोष्ठक स हमको यह मालूम नहीं होता कि पहिले मन, दूसरे मन, तीसरे मन चावल के लिये यह मनुष्य कितना रुपया दे सकता था। इसलिये हम यह नहीं कह सकते कि २०

मन चावल के लिए वह मनुष्य कितना रुपया दे सकता है बजाय इसके कि वह उससे वञ्चित रहता। मान लीजिये कि वह 'क' के बराबर रुपया २० मन चावल खरीदने के लिए दे देगा। चावल का मूल्य अब ५) रु० फी मन है तब वह २०×५=१०० रु० खर्च करता है। इसलिए ५) रु० फी मन मूल्य पर उपभोक्ता की बचत क – १०० रु० होती है।

अब मूल्य घट कर ४॥) रु० प्रति मन हो जाता है तो वह २१ मन चावल खरीद लेता है। इस मूल्य पर उसका कुल व्यय ९४॥) रु० के बराबर है। इस मूल्य पर उसने १ मन अधिक चावल खरीदा है इसलिए उसको इस २१वें मन से कम से कम ४॥) रु० के बराबर उपयोगिता अवश्य मिली होगी। इसलिए ४॥) रु० फी मन मूल्य पर उपभोक्ता की बचत = क+४॥) रु० – ९४॥) होती है इसलिए जब मूल्य ५) रु० से ४॥) रु० मन हो गया तो उपभोक्ता की बचत का अन्तर [क+४॥)–९४॥)]–[क–१००)]=१०) हो जाता है।

अब हम यह कह सकते हैं कि जब चावल का मूल्य ५) रु० मन से घट कर ४॥) रु० मन हो जाता है तो उस मनुष्य की उपभोक्ता की बचत का अंतर १०) रु० के बराबर हो जाता है।

इसी प्रकार जब चावल का मूल्य ४) रु० मन हो जाता है तो उस पर कुल खर्च २२×४=८८ रु० होता है। हम यह जानते हैं कि २१वें मन चावल पर वह मनुष्य कम से कम ४॥) रु० और २२वें मन चावल पर ४) खर्च करने को तैयार है। इस प्रकार

वह २२ मन चावल पर क+४॥)+४) खर्च कर सकता है, परन्तु वास्तव में वह ८८) ही खर्च करता है। इसलिए ३) रु० फी मन मूल्य पर उपभोक्ता की बचत क+४॥)+४)—८८ रु० होती है।

इसलिए जब मूल्य ५) रु० फी मन से घटकर ४) रु० फी मन हो जाता है तो उपभोक्ता की बचत का अंतर [क+४॥)+४)—८८)]—[क—१००)] = २०॥) हो जाता है।

और जब मूल्य ४॥) रु० फी मन से घट कर ४) रु० फी मन होता है तो उपभोक्ता की बचत का अंतर

[क+४॥)+४)—८८]—[क+४॥)—९४॥)] = १०॥) हो जाता है।

इसी प्रकार हम कह सकते हैं कि जब चावल का मूल्य ४) रु० मन से ५) रु० मन हो जाय तो उपभोक्ता की बचत में २०॥) रु० हानि होती है।

किसी भी वस्तु की कीमत के घट बढ़ से किसी मनुष्य की उपभोक्ता की बचत का अन्तर द्रव्य में इसी प्रकार आसानी से निकाला जा सकता है। इसके मालूम करने के लिये हमको माँग की पूरी सारणी की जरूरत भी नहीं पड़ती है।

उपभोक्ता की बचत का परिमाण तथा वस्तु का दाम (
घटने बढ़ने से उपभोक्ता की बचत का अन्तर रेखाचित्र द्वारा
भी बतलाया जा सकता है। नीचे दिये हुए रेखाचित्र में गग मग'
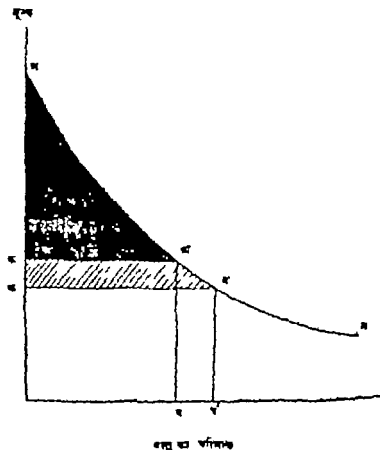
वस्तु का परिमाण

से किसी मनुष्य की किसी वस्तु की मांग मालूम होती है। य
उस वस्तु की कीमत ०क रहती है तो वह ०प परिमाण खरीद
है उस समय उसको जो उपभोक्ता की बचत होती है वह घग

म क ब क बराबर है। अब उस वस्तु की कीमत ०क से ०क' तक कम हो जाती है तो उस वस्तु की मांग का परिमाण ०प' तक बढ़ जाता है। इस कीमत पर उपभोक्ताकी बचत म क ब से क्षेत्रफल के बराबर होती है। इस वस्तु की कीमत ०क स ०क' कम होने पर उपभोक्ता की बचत म जो अन्तर होता है अर्थात् जो वृद्धि होती है वह क्षेत्रफल क क' ब ब के बराबर है। इसी प्रकार किसी वस्तु की मांग की रेखा प्राप्त होने पर उसका किसी भी कीमत पर उपभोक्ता की बचत का परिमाण या कीमत में घट बढ़ होने पर उपभोक्ता की बचत का अन्तर आसानी से निकाला जा सकता है।

उपभोक्ता की बचत का महत्व

अर्थशास्त्र में उपभोक्ता की बचत का बहुत महत्व है। यदि हम वस्तुओं के मूल्य क घट बढ़ का उपभोक्ताओं पर प्रभाव जानना चाहते हों तो हम उपभोक्ता की बचत क अन्तर का अन्दाजा लगाना पड़ता है। वस्तुओं क मूल्य में घट बढ़ कई कारणों से होती है। कभी कभी सरकार द्वारा वस्तुओं पर आयात निर्यात कर अथवा उत्पत्ति कर लगा दिये जाते हैं। इससे उन वस्तुओं का मूल्य बढ़ जाता है। इस प्रकार क कर लगाने से उपभोक्ताओं को कितनी हानि हुई इसका अन्दाजा लगाने क लिये उपभोक्ता की बचत क अन्तर का अन्दाजा लगाया जाता है। प्रत्येक अर्थ सचिव को वस्तुओं पर कर इस प्रकार स लगाना चाहिये जिससे कर क रूप म आमदनी तो

अधिक से अधिक हो और उपभोक्ताओं की बचत में कमी कम से कम हो। कभी कभी देश में द्रव्य के परिमाण की वृद्धि होने से अथवा अत्यधिक कागजी मुद्रा के प्रचार से प्रायः सब वस्तुओं के मूल्य में वृद्धि हो जाती है। इस मूल्य वृद्धि का उपभोक्ताओं पर प्रभाव का अन्दाजा लगाने के लिये भी उपभोक्ता की बचत के अन्तर का अन्दाजा लगाया जाता है।

उपभोक्ता की बचत से हमको यह भी मालूम हो सकता है कि कोई भी मनुष्य अपनी परिस्थितियों से कितना लाभ या हानि उठा रहा है। जब हम किसी मनुष्य का एक समय से दूसरे समय की अथवा किसी एक दर्जे के मनुष्यों की दूसरे दर्जे के उसी दर्जे के मनुष्यों की आर्थिक अवस्था की तुलना करें तो हमको उपभोक्ता की बचत पर भी उचित ध्यान देना चाहिए। अगर और चीजें समान रहें, और किसी मनुष्य को एक समय से दूसरे समय में अधिक उपभोक्ता की बचत हो तो दूसरे समय उसकी आर्थिक अवस्था पहले समय से अच्छी समझी जावेगी।

आठवाँ अध्याय

उपभोग की वस्तुओं का विभाग

संसार में सब से पहले मनुष्य को अपने शरीर को बनाये रखने की फ़िक्र रहती है। अंधा, अपाहिज कैसा ही मनुष्य क्यों न हो वह अपने चर्म अस्थि निर्मित शरीर का नाश होने से बचाने का सदा प्रयत्न किया करता है। इसलिए उपभोग के पदार्थों में मुख्य स्थान उन पदार्थों को दिया जाता है जो शरीर और प्राण को साथ रखने के लिये ज़रूरी होते हैं। इन पदार्थों को जीवन रक्षक पदार्थ कहते हैं। इन पदार्थों में जल, अन्न, वस्त्र, मकान इत्यादि शामिल हैं। लेकिन केवल जीवन-रक्षा के लिए ये पदार्थ साधारण दर्जे के हो सकते हैं, जिनसे किसी मनुष्य का निर्वाह मात्र हो सके। जीवन-रक्षक पदार्थों की क़ीमत बढ़ जाये या घट जाये लेकिन शरीर की रक्षा के लिए इन वस्तुओं का ख़रीदना अनिवार्य होता है। इसलिये जैसे जैसे जीवन-रक्षक पदार्थों की क़ीमत बढ़ती जाती है वैसे वैसे उन पर किया गया कुल ख़र्च बढ़ता जाता है क्योंकि माँग उस अनुपात में कम नहीं होती है।

दूसरे प्रकार के उपभोग के पदार्थ निपुणता-दायक पदार्थ कहलाते हैं। ये वे पदार्थ हैं जिनके सेवन करने से मनुष्य की

कार्य करने की शक्ति बढ़ती है। उसके शरीर में बल उत्साह और स्फूर्ति पैदा होती है। शरीर निरोग रहता है। जीवन-रक्षक पदार्थों में भी ये गुण रहते हैं। परन्तु उनका वर्गीकरण अलग कर देने से निपुणतादायक पदार्थों में जीवन-रक्षक पदार्थ सम्मिलित नहीं किये जाते। कुछ जीवन-रक्षक पदार्थ अधिक मात्रा में और अच्छे दरजे के होने पर निपुणता दायक पदार्थ कहलाने लगते हैं। जैसे साधारण भोजन करने से, फटा पुराना कपड़ा पहनने से तथा टूटी फूटी झोपड़ी में रहने से भी मनुष्य जिन्दा तो रह सकता लेकिन उसकी तन्दुरुस्ती अच्छी नहीं रहती। शरीर रोगी और निर्बल हो जायगा, और काम करने की शक्ति क्षीण होती जायगी। लेकिन अगर उसको भरपेट पुष्टिकारक भोजन दिया जाय, जैसे अच्छा अन्न, घी, दूध, फल इत्यादि और स्वच्छ वस्त्र पहनने को दिये जायें, रहने के लिए अच्छा हवादार मकान दिया जाये, व्यायाम, स्नान, पुस्तकालय इत्यादि का उसके लिए प्रबन्ध किया जाय तो वह पुरुष हृष्ट-पुष्ट, नीरोग, निपुण और तन्दुरुस्त होगा। काम करने के लिए बल और उत्साह बढ़ेगा इसलिए उसका काम भी अच्छा होगा। निपुणता-दायक पदार्थों में जितना खर्च किया जाता है उसका फल उससे कहीं अधिक मिलता है। जीवन के बढ़ने पर निपुणता-दायक पदार्थों की मांग में भी अधिक कमी नहीं होती इसलिए इन पदार्थों पर भी, जीवनरक्षक पदार्थों के समान खर्च पड़ता जाता है जैसे जैसे इनके मूल्य में वृद्धि होती है।

उपभोग के पदार्थों के तीसरे विभाग में आराम की वस्तुएँ

की जाता है। इन वस्तुओं के उपभोग से शरीर को सुख और आराम तो मिलता है और निपुणता भी बढ़ती है, लेकिन जितना खर्च इन पर किया जाता है उस अनुपात में उससे कार्य कुशलता नहीं बढ़ती है। जैसे किसी गरीब मनुष्य के लिए धोती, कुर्ता और चप्पल निपुणता दायक पदार्थ हैं लेकिन अगर वह बढ़िया कमीज, कोट का उपयोग करे तो ये वस्तुएं उसके लिए आराम की वस्तुएं कही जावेंगी। इनसे उनकी निपुणता भले ही बढ़े लेकिन उतनी नहीं बढ़ेगी जितना इसमें खर्च हो जावेगा। इसी प्रकार से गरीब किसान के लिये साइकिल, घड़ी, पक्का मकान, इत्यादि भी आराम की वस्तुओं में शामिल किये जा सकते हैं।

चौथे प्रकार के उपभोग की वस्तुएं विलासिता की वस्तुएं कहलाती हैं। इन वस्तुओं के सेवन करने से इन पर किये गये खर्च की अपेक्षा इनसे बहुत कम निपुणता अथवा कार्य-कुशलता प्राप्त होती है। कभी कभी तो इन वस्तुओं के उपभोग से कार्य कुशलता की बढ़ने की अपेक्षा ह्रास होने लगता है। ऐसी वस्तुओं के उदाहरण हैं खूब बढ़िया आलीशान अट्टालिकायें, बहुत क़ीमती भड़कीले वस्त्र, शराब इत्यादि। विलासिता की वस्तुओं को सेवन करने से शरीर आलसी सा हो जाता है। काम करने को जी नहीं करता है। शराब इत्यादि के सेवन से तो मनुष्य की कार्य-कुशलता बिलकुल क्षीण होने की सम्भावना रहती है। विलासिता की वस्तुओं की क़ीमत में थोड़ा सा बदलाव होने से ही इनकी मांग में बहुत बदलाव हो जाता है। इसलिये जैसे

जैसे इनकी क़ीमत बढ़ती है वैसे ही इन पर कुछ खर्च बढ़ जाता है।

उपभोग के पदार्थों का एक और विभाग है। इस विभाग में वे वस्तुएँ हैं जो कि जीवन-रक्षा अथवा आराम इत्यादि के लिए आवश्यक नहीं हैं, लेकिन समाज के दबाव से, लोक-निन्दा के भय से अथवा रीति-रस्म, आचार-व्यवहार तथा आदत पड़ जाने के कारण ये वस्तुएँ भी आवश्यक होने लगती हैं। इन वस्तुओं को "कृत्रिम आवश्यकताओं की वस्तुएँ" कहते हैं। जन्मोत्सव, विवाह इत्यादि उत्सवों में खर्च, तथा शराब, तम्बाकू, गांजा, चरस इत्यादि पर खर्च। चूँकि इन वस्तुओं की क़ीमत बढ़ जाने अथवा घट जाने से भी ये वस्तुएँ करीब करीब उसी परिमाण में खरीदी जाती हैं, इसीलिए आमदनी के बढ़ने पर इनपर होने वाला खर्च भी बढ़ जाता है।

यह बात ध्यान में रखने के योग्य है कि उपभोग की वस्तुओं के ये विभाग एक दूसरे से बिलकुल भिन्न नहीं हैं। वास्तव में इनका वर्गीकरण उपभोक्ताओं की परिस्थितियों के अनुसार समझा जाता है। हम यह नहीं कह सकते हैं कि अमुक वस्तुएँ सब के लिए सदा जीवन-रक्षक पदार्थ हैं, और कुछ वस्तुएँ विलासिता की अथवा आराम की वस्तुएँ हैं इत्यादि। कोई भी वस्तु अपने आप से किसी भी वर्ग में शामिल नहीं की जा सकती है। किसी वस्तु को कौन से वर्ग में रक्खा जाए इस बात को जानने के लिए हमको बहुत सी और बातें भी ध्यान में रखना

पड़ती हैं। मनुष्यों की प्रकृति, आदत, फ़ैशन, जल-वायु, देश काल, वस्तुओं की क़ीमत तथा मनुष्यों की आर्थिक अवस्था से वस्तुओं के वर्गीकरण में भिन्नता आ जाती है।

कई वस्तुएं ऐसी होती हैं जो कि वस्तुतः विलासिता की वस्तुएं अथवा आराम की वस्तुएं हैं, लेकिन उनका बार बार उपयोग करने से उन वस्तुओं के उपभोग की आदत पड़ जाती है। इसलिए वे कृत्रिम आवश्यकता की वस्तुओं में गिनी जाने लगती हैं। उदाहरणार्थ चाय अथवा तम्बाकू को लीजिये। जिन लोगों को इन वस्तुओं का व्यसन पड़ जाता है उनसे अगर उनके सम्बन्ध में पूछा जाय तो वे कहते हैं कि उन वस्तुओं को सेवन किए बिना वे जी नहीं सकते हैं। भोजन ठीक वक्त पर मिले न मिले इसकी परवाह नहीं लेकिन तम्बाकू, शराब इत्यादि उनको अवश्य मिलनी चाहिए। कई मनुष्यों की शारीरिक अवस्था ऐसी होती है कि एक वस्तु जो दूसरे मनुष्य को नुक़सान पहुँचाती है, उनको लाभदायक होती है।

एक डाक्टर के लिए मोटरकार आवश्यक प्रतीत होती है क्योंकि उसकी सहायता से वह कम समय में बहुत से मरीजों को देख सकता है, लेकिन यूनीवर्सिटी के प्रोफेसर के लिए मोटर कार आराम या विलासिता की ही वस्तु समझी जायगी।

एक अमीर आदमी के लिए आलीशान महल, बिजली का लैम्प, पर्दे इत्यादि आराम की वस्तुएं हों लेकिन एक ग़रीब किसान के लिए ये वस्तुएं एकदम विलासिता की वस्तुएं समझी

आयेंगी।

समय के बदलाव से, फ़ैशन के बदलाव से तथा रहन सहन के दर्जे के बदलाव से कोई वस्तु एक समय विलासिता की वस्तु दूसरे समय आराम की वस्तु और किसी समय जीवन-रक्षक वस्तु भी समझी जाती है।

किसी वस्तु की क़ीमत के घटने बढ़ने से भी उस वस्तु के वर्गीकरण में भिन्नता आ जाती है। अगर कोई कपड़ा ६) रु० गज़ के हिसाब से बिकता हो तो वह किसी मनुष्य के लिए विलासिता की वस्तु समझी जाती है, अगर ३) रु० गज़ हो जाये तो आराम की वस्तु, १) रु० गज़ में निपुणतादायक वस्तु तथा ।।) आने गज़ में जीवन-रक्षक वस्तु समझी जा सकती है।

रेखाचित्र द्वारा वस्तुओं का भेद

अगले पृष्ठ पर दिये हुए रेखाचित्र में तीन वस्तुओं की माँग की रेखाएं दी गई हैं। न न' रेखा आवश्यक वस्तु की माँग बताती है। भ भ' रेखा से आराम की वस्तु तथा म म' रेखा से विलासिता की वस्तु की माँग मालूम होती है। इस रेखाचित्र में यह दिखलाया गया है कि जब तीनों वस्तुओं की क़ीमत ० क से ०क' तक बढ़ती है तो प्रत्येक वस्तु की माँग में कितनी कमी होती है। आवश्यक वस्तु की माँग में कमी ज ज', आराम की वस्तु की माँग में कमी ठ ठ' और विलासिता की वस्तु की माँग में कमी प प' है। इस चित्र से पता लगता है कि परिमाण ज ज' सब से
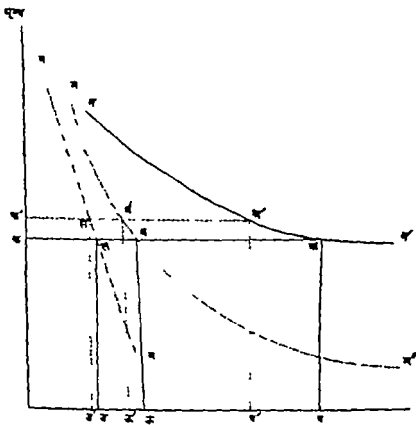
कम और प प' सब से अधिक है इससे यह सिद्ध होता है कि वस्तुओं की कीमत वृद्धि होने से विलासिता की वस्तुओं की माग में सबसे अधिक कमी और आवश्यक वस्तुओं की मांग में सब से कम कमी होती है।

नवाँ अध्याय

माँग की लोच

माँग के नियम के सम्बन्ध में हम बतला चुके हैं कि साधारणतः जब किसी वस्तु की कीमत घट जाती है तो उसकी माँग बढ़ जाती है, और जब उसकी कीमत बढ़ जाती है तो उसकी माँग घट जाती है अर्थात् कीमत में कुछ परिवर्तन होने से माँग में भी परिवर्तन हो जाता है, यह माँग का एक गुण है। माँग के इस गुण को अर्थशास्त्र में "माँग की लोच" कहते हैं। जब कीमत में थोड़ा सा परिवर्तन होने से—कीमत के कुछ बढ़ने से अथवा कुछ घटने से—किसी वस्तु की माँग में अधिक परिवर्तन हो जाता है—माँग अधिक घट जाती अथवा बढ़ जाती है—तो उस वस्तु की माँग लोचदार कही जाती है।

उपयोगिता ह्रास नियम के अनुसार ज्यों ज्यों किसी वस्तु का अधिक अधिक संग्रह हमारे पास होता जाता है त्यों त्यों—अगर और सब बातें पूर्ववत् रहें—उस वस्तु की चाह कम होती जाती है। कई वस्तुएं ऐसी होती हैं जिनका अधिक संग्रह होने पर चाह बड़ी तेजी से कम हो जाती है। ऐसी अवस्था में अगर उस वस्तु की कीमत कुछ घट जाय तो उसकी माँग में बहुत कम

वृद्धि होगी। इसके विपरीत अगर उस वस्तु की क़ीमत बढ़ जाय तो भी मांग में कुछ अधिक क्षति न होगी। इस वस्तु के लिए हम कह सकते हैं कि इसकी मांग में लोच कम है। लेकिन अगर किसी वस्तु की चाह बहुत बार बार कम होती जाये तो उस वस्तु की क़ीमत थोड़ी सी घट जाने पर उसकी मांग बहुत बढ़ जायेगी, और क़ीमत के थोड़ा बढ़ जाने पर मांग भी बहुत कम हो जायेगी। ऐसी अवस्था में हम कह सकते हैं कि उस वस्तु की मांग में लोच अधिक है।

जब कि क़ीमत में कुछ बदलाव होने से मांग में बहुत बद लाव—अधिक वृद्धि अथवा अधिक क्षति—हो जाता है तो मांग अधिक लोचदार कही जाती है। परन्तु जब क़ीमत में थोड़ा सा बदलाव होने पर मांग में कम बदलाव—कम वृद्धि अथवा कम क्षति—होता है तो मांग कम लोचदार कही जाती है।

मांग की लोच क़ीमत के साथ साथ बदलती रहती है। साधारणतः किसी एक दर्जे के मनुष्यों के लिए किसी वस्तु की मांग की लोच ऊंची क़ीमत पर अधिक, मध्यम क़ीमत पर उससे कुछ कम होती है। और ज्यों ज्यों क़ीमत घटती जाती है और तृप्ति बढ़ती जाती है त्यों त्यों मांग की लोच कम होती जाती है, यहां तक कि एक ऐसा अवसर आ जाता है कि जब मांग में लोच बिलकुल नहीं रहती। यहां पर यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि प्रत्येक दर्जे के मनुष्यों के लिये ऊँची, मध्यम और कम क़ीमत अलग २ होती हैं। दो रुपया सेर घी धनी मनुष्यों के

लिए कम क़ीमतवाला, मध्यम श्रेणी के मनुष्य के लिए मध्यम क़ीमत वाला और निर्धन श्रेणी के मनुष्य के लिए ऊँची क़ीमत वाला हो सकता है। इसलिए किसी वस्तु को ऊँचा, मध्यम और कम क़ीमत किसी ख़ास श्रेणी के मनुष्यों के सम्बन्ध में ही समझनी चाहिए।

भिन्न २ वस्तुओं के लिए मांग की लोच भी भिन्न २ होती है। हम ऊपर बतला चुके हैं कि भिन्न २ श्रेणी के मनुष्यों के लिए एक ही वस्तु की मांग का लाच भिन्न २ होती है। भिन्न २ वस्तुओं की मांग की लाच भिन्न २ श्रेणी के मनुष्यों के लिए जानने के लिए नीचे कुछ उदाहरण दिये जाते हैं।

पहिले हम विलासिता की उन वस्तुओं को लेते हैं जिनकी क़ीमत बहुत अधिक है जैसे मोटर कार। अगर मोटर कार की क़ीमत ३०००) रु० से घट कर २५००) रु० हो जाय तो बहुत से धनी लोगों में उसकी मांग बढ़ जायगी। इसलिए मोटर कार की मांग धनी लोगों में लोचदार हुई। लेकिन मध्यम श्रेणी के और निर्धन लोगों के लिए इसकी मांग बिना लोच की ही रही। क्योंकि क़ीमत घट जाने पर भी उनके लिए यह क़ीमत इतनी ऊँची है कि वे लोग मोटर नहीं ख़रीद सकते हैं।

अब विलासिता की उन वस्तुओं को लीजिए जिनकी क़ीमत बहुत अधिक नहीं है जैसे घड़ी। अगर घड़ी की क़ीमत २०) रु० से घट कर १०) रु० हो जाय तो बहुत से मध्यम श्रेणी के लोगों की मांग घड़ियों के लिए बढ़ जावेगी। इसलिए घड़ियों की

मांग मध्यम श्रेणी के मनुष्यों के लिए लोचदार कही जावेगी। लेकिन क़ीमत के कम होने से धनी लोगों की मांग कुछ ज्यादा न बढ़ जावेगी क्योंकि वे लोग २०) रु० क़ीमत पर ही अपनी तृप्ति के योग्य घड़ियां खरीद चुके होंगे। इसी प्रकार एक किसान के लिए क़ीमत कम होने पर भी घड़ियों की मांग बिना लोच की रहेगी, क्योंकि १५) रु० भी घड़ी के लिए उसके लिए ऊँची क़ीमत है।

इसी प्रकार से हम कह सकते हैं कि विलासिता की वे वस्तुएँ जिनकी क़ीमत बहुत कम है, उनकी मांग की लोच बहुत धनी लोगों के लिए बहुत कम, मध्यम श्रेणी के लोगों के लिए उससे कुछ अधिक और निर्धन श्रेणी के लोगों के लिए बहुत अधिक होती है।

साधारणतः यह कहा जाता है कि जीवन रक्षक पदार्थों की मांग की लोच विलासिता की वस्तुओं की लोच से बहुत कम होती है। लेकिन जीवनरक्षक पदार्थों की मांग की लोच भी लोगों की सम्पन्नता पर निर्भर रहती है। अमेरिका, इंगलैंड इत्यादि मुल्कों में गरीब लोगों को भी जीवन रक्षक पदार्थ पर्याप्त परिमाण में मिल जाते हैं। इसलिए वहां इन वस्तुओं की क़ीमत में अगर कुछ कमी हो भी गई तो गरीब लोग भी इन वस्तुओं का उपभोग पहिले से बहुत अधिक परिमाण में नहीं करते, इसलिए इन जीवनरक्षक पदार्थों की मांग की लोच इन मुल्कों में बहुत कम होती है। लेकिन भारतवर्ष ऐसे देश में जहाँ

कि अधिकांश लोगों का दिन भर में एक समय भी पेट भर भोजन नहीं मिलता है, आवश्यक पदार्थों की भी मांग में प्राय होती है। अगर इनकी क़ीमत कम हो जावे तो मांग कुछ ज़रूर बढ़ जाती है।

जो वस्तुएं जीवन रक्षा के लिए अनिवार्य नहीं हैं उनकी मांग साधारणतः लोचदार होती है, जैसे कि अच्छा वस्त्र, अच्छा मकान, उपन्यास इत्यादि।

जब किसी मनुष्य को किसी वस्तु के सेवन करने का अभ्यास हो जाता है तो उस वस्तु की मांग की लोच और वस्तुओं की मांग की लोच से कम हो जाती है। इसका कारण यह है कि वह वस्तु उसके आवश्यक पदार्थों में शामिल हो जाती है। और हम बतला चुके हैं कि जीवनरक्षक तथा आवश्यक पदार्थों की मांग और वस्तुओं की लोच से कम होती है। जिन लोगों को चाय का अभ्यास हो गया है, उन लोगों के लिए चाय एक आवश्यक पदार्थ हो गया है। अगर चाय की क़ीमत एक आना फ़ी प्याला से पाँच पैसा फ़ी प्याला हो जाय तो भी वे लोग एक प्याला सुबह और एक प्याला सायंकाल अवश्य ही पियेंगे।

लोच की माप—अगर क़ीमत में परिवर्तन होने से किसी वस्तु की खरीदने में उतना ही द्रव्य खर्च किया जाता है जितना पहले किया जाता था तो उसकी मांग की लोच एक के बराबर मानी जाती है। जब क़ीमत के घट जाने से किसी वस्तु पर किया गया कुल खर्च बढ़ जाता है तो उस वस्तु की मांग की लोच

इकाई से अधिक कही जाती है, और अगर कुल खर्च घट जाता है तो लोच इकाई से कम कही जाती है

नीचे के कोष्ठक में किसी मनुष्य का घी की मासिक मांग और उस पर किया गया खर्च दिया जाता है।

कीमत प्रति सेर	मांग	कुल खर्च	मांग की लोच
॥)	१० सेर	५ रुपया	एक से कम
१)	६ "	६ "	
१॥)	४ "	६ "	एक
२)	२ "	४ "	एक से अधिक
३)	१ "	३ "	

इस कोष्ठक से यह मालूम होता है कि जब कीमत ॥) प्रति सेर से १) प्रति सेर हो जाती है तो उस पर खर्च ५ रुपये से ६ रुपये हो जाता है। तब मांग की लोच एक से कम रहती है और घी आवश्यक पदार्थ माना जाता है। जब घी की कीमत एक रुपया सेर से १॥) सेर तक बढ़ती है तो घी पर खर्च ६ रुपये ही रहता है उसकी मांग की लोच एक के बराबर रहती है और घी आराम की वस्तु माना जाता है। जब घी की कीमत १॥) से बढ़ने लगती है तो कुल खर्च कम होने लगता है, उसकी मांग की लोच एक से अधिक हो जाती है और घी विलासिता की चीज हो जाती है। इससे स्पष्ट है कि वस्तु की मांग की लोच ऊंची कीमत पर एक से अधिक, मध्यम कीमत पर एक और कम कीमत पर एक से कम रहती

है। किसी मनुष्य के लिये ऊँची कीमत पर जो विलासिता की वस्तु, मध्यम कीमत पर आराम की वस्तु और कम कीमत पर आवश्यक वस्तु माना जाता है।

किसी वस्तु की मांग की रेखा से भी किसी कीमत पर मांग की लोच का अनुमान लगाया जा सकता है। नीचे के रेखा चित्र
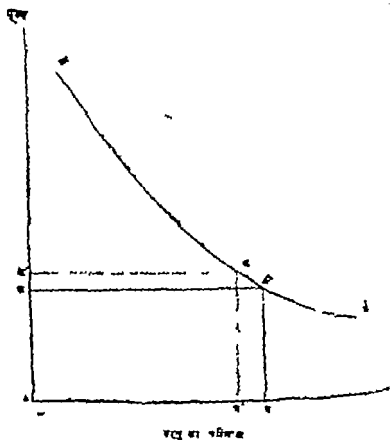
में म म' रेखा मांग की रेखा है। अब यदि हमको ०क कीमत पर मांग की लोच मालूम करना हो तो हमें यह जानना चाहिये कि कुछ अधिक कीमत पर उसकी मांग के परिमाण में कितनी कमी होगी। इसी चित्र स मालूम होता है कि ०क' कीमत पर मांग का परिमाण ०प' हो जाता है। जब कीमत ०क रहती है तब इस वस्तु पर ०प अ क परिमाण में द्रव्य खर्च किया जाता है। जब कीमत ०क' तक बढ़ जाती है तो खर्च का परिमाण ०प' यक' हो जाता है। यदि ०प' य क' का परिमाण ०प अ क से कम हो तो इस वस्तु की माँग की लोच एक से अधिक, यदि बराबर हो तो मांग की लोच एक के बराबर और यदि अधिक हो तो मांग की लोच एक से कम समझी जावेगी।

मांग की लोच का महत्व—अर्थशास्त्र की दृष्टि से मांग की लोच का बड़ा महत्व है। इसस हमको यह पता लग जाता है कि क़ीमत के बदलाव होने स भिन्न भिन्नपरिस्थितियों में भिन्न भिन्न वस्तुओं का भिन्न २ दर्जे के मनुष्यों की मांग पर कैसा असर पड़ता है। इस बात को जान लेने पर उत्पादकों को और सरकार को अपने २ काम में बहुत सहायता मिलती है। उत्पादक लोग, खास कर एकाधिकारी उत्पादक, यह तै कर सकते हैं कि किस क़ीमत पर बेचन स उनको सबस अधिक लाभ होगा। अगर किसी वस्तु की मांग में बहुत कम लोच हो तो एकाधिकारी उस वस्तु की मनमानी क़ीमत बढ़ा कर बहुत लाभ उठा सकता है। लेकिन अगर किसी

वस्तु की मांग बहुत लोचदार हो तो एकाधिकारी को क़ीमत घटाने में ही सबसे अधिक मुनाफ़ा होता है।

इसी प्रकार किसी देश की सरकार को भी भिन्न २ वस्तुओं के मांग की लोच जानना ज़रूरी होता है। जब किसी वस्तु के आयात अथवा निर्यात कर लगाया जाय, अथवा देश में माल पर कर लगाया जाय तो सरकार को यह जानना चाहिए कि इस कर से उस वस्तु की क़ीमत में जो वृद्धि होगी उसका मांग पर क्या असर पड़ेगा। जिन वस्तुओं की मांग की लोच बहुत कम हो उनपर कर लगाने से सरकार को अधिक आमदनी होती है। और जिन वस्तुओं की मांग की लोच अधिक हो उनपर कर लगाने से कम आमदनी होती है। सरकार को यह बात भी ध्यान में रखने के योग्य है कि जिन आवश्यकीय वस्तुओं की मांग की लोच ग़रीब आदमियों की भी होती है उनपर कर लगाने से ग़रीब आदमियों को बहुत दिक्कत उठानी पड़ती है। भारतवर्ष में इसका उदाहरण नमक-कर है। इस कर के कारण यहां नमक की क़ीमत बढ़ गई है। इसका परिणाम यह होता है कि नमक जैसी आवश्यक वस्तु की मांग भी इस मुल्क में कुछ लोचदार हो गई है। ग़रीब किसान अपने पशुओं को काफ़ी परिमाण में नमक नहीं दे

दसवां अध्याय

फिजूलखर्ची

इस बात में बिलकुल मतभेद नहीं है कि जीवन रक्षक पदार्थ और निपुणता-दायक पदार्थ सब लोगों को सेवन करने चाहिए। इनपर किया गया खर्च हमेशा न्याययुक्त कहा जाता है। बहुत से लोग यह भी मानने को तैयार हैं कि आराम की चीजों पर किया गया खर्च भी असंगत नहीं है क्योंकि इससे भी कार्य कुशलता बढ़ती है। लेकिन ऐशोआराम और विलासिता की वस्तुओं पर तथा मादक वस्तुओं पर किया गया खर्च बहुधा फिजूलखर्ची में समझा जाता है।

हम यह बतला चुके हैं कि इस बात का निर्णय करना बहुत सरल नहीं है कि कौनसी वस्तु जीवन रक्षक है, कौनसी ऐशोआराम की है इत्यादि, क्योंकि स्थान, काल तथा मनुष्यों की आर्थिक स्थिति से उपभोग के पदार्थों के वर्गीकरण में भेद हो जाता है। परन्तु हम यह भी बतला चुके हैं कि किन दशाओं में कौनसी वस्तुएँ विलासिता की वस्तुएँ अथवा कृत्रिम आवश्यकता की वस्तुएँ मानी जाती हैं। जब किसी वस्तु की कीमत बढ़ने पर उस पर किया हुआ खर्च कम हो जाता है अर्थात् जिस वस्तु की मांग की लोच एक से अधिक होती है उसे विलासिता की वस्तु कहते हैं। जिन वस्तुओं के उपयोग करने से कार्यकुशलता

रक्षक तथा निपुणतादायक पदार्थ संख्या में परिमित हैं इसलिए अपने परिश्रम को केवल इन्हीं पर लगाने से सभ्यता की उन्नति नहीं हो सकती है। लेकिन आराम की तथा विलासिता की वस्तुएं अपरिमित हैं इसलिए इनके पीछे जो उद्योग किया जायगा वह भी अपरिमित होगा और इसलिए वह हमको सभ्यता की ओर ले जावेगा।

सब बातें जब तक सिद्धान्त के रूप में कही जाती हैं तब तक किसी विशेष दशा में ठीक मानी जा सकती हैं। परन्तु जब किसी देश में बहुत से मनुष्य भूखों मर रहे हों, बहुत से ऐसे हों जिनको दिन भर में केवल एक बार ही भोजन प्राप्त होता हो तब उस देश के कुछ निवासियों का विलासिता की वस्तुओं का अत्यधिक उपभोग करना राष्ट्रीय दृष्टि से हितकर नहीं है। भारतवर्ष को लीजिए। कितने लोगों को यहां केवल जीवन-रक्षक पदार्थ ही प्राप्त हैं? निपुणता-दायक पदार्थों और आराम की चीजों को जाने दीजिए। यहां के दो तिहाई लोगों को जेल में दिये गये भोजन का दो तिहाई भी प्राप्त नहीं है। जब यहां के निवासियों को जीवनरक्षक पदार्थ ही प्राप्त नहीं हैं तो किस प्रकार से विलासिता की वस्तुओं पर किया गया खर्च न्यायसङ्गत कहा जा सकता है। हां, जो देश इतने समृद्धिशाली हैं जहां प्रत्येक मनुष्य को अच्छा खाना, पाना, पहिनना तथा निवास-स्थान प्राप्त हो वहां के लोग चाहें तो आराम तथा विलासिता की वस्तुओं का उपयोग कर सकते हैं।

यह कहा जाता है कि विलासिता की वस्तुओं की मांग से

बहुत से लोगों की बेकारी दूर होती है और उनको रोजी भी मिलती है। उदाहरण के लिए आतिशबाजी को लीजिये। ब्याह-शादी इत्यादि उत्सव के समय में इस वस्तु का बहुत प्रयोग किया जाता है। इसका उपयोग करनेवाले लोग कहते हैं—हमने अपने इस विलासिता की वस्तु के उपभोग से बहुत से मजदूर लोगों को काम दिया है, उनको मजदूरी देकर भूखों मरने से बचाया है, हमने देश का उपकार किया है इसलिए हमारा यह खर्च फिजूलखर्ची में शामिल नहीं किया जाना चाहिए। परन्तु ध्यानपूर्वक देखा जाय तो इन लोगों के तर्क की असंगतता मालूम पड़ जाती है। माना कि आतिशबाजी के पदार्थों को पैदा करने में चन्द मनुष्यों को रोजी मिली। लेकिन उस आतिशबाजी में नुकसान कितना हुआ यह उन लोगों ने नहीं विचारा। पहले तो आतिशबाजी में क्षणिक आनन्द होता है। कहाँ उतना व्यय और कहाँ क्षणिक आनन्द! इस आनन्द से भी उपभोक्ता की कोई कार्यकुशलता नहीं बढ़ती है। इस बात की आशंका रहती है कि कहीं किसी मकान इत्यादि में आग न लग जाय। इसके अलावा इस आतशबाजी की वस्तुओं के बनाने में देश का इतना व्यय, श्रम और पदार्थ अन्य इससे अधिक उपयोगी वस्तुओं को बनाने के बदले आतशबाजी की वस्तुओं के बनाने में लग गया। इसलिए दूसरे उपयोगी उद्योग धन्धों में पूँजी कर मजदूर कम मिलने से उन उपयोगी वस्तुओं की उत्पत्ति कम हो गई। फलतः उन वस्तुओं की कीमत में वृद्धि होने से सब

साधारण जनता को हानि उठानी पड़ी। यदि वह पूँजी और श्रम आतशबाजियों के बदले किसी और उपयोगी वस्तु को बनाने में लगाया जाता तो न केवल कुछ लोगों का काम ही मिलता परन्तु वह वस्तु सस्ती हो जाती और जनता को बहुत अधिक लाभ होता। इसलिए हम कह सकते हैं कि आतशबाजी विलासिता की वस्तु है और उसपर खर्च करना फ़िज़ूलखर्ची है। इसी प्रकार नाच, भोज, खेल, तमाशे इत्यादि में भी बहुत सी फ़िज़ूलखर्ची शामिल है।

धनवान् लोग प्रायः कहते हैं—रुपया हमारा है हम चाहे उसको कैसे ही खर्च करें, इसमें किसी का क्या बनता बिगड़ता है? यह बात वैयक्तिक दृष्टिकोण से ठीक मालूम होती है। लेकिन अगर समाज के दृष्टिकोण से भविष्य पर भी दृष्टि रखते हुए देखा जाय तो इन लोगों की भूल स्पष्ट हो जाती है। धनी, निर्धन सब समाज के व्यक्ति हैं, अगर समाज के किसी भी अङ्ग में दुःख या कष्ट हो तो अन्त में उससे सारे समाज पर असर पड़े बिना नहीं नहीं रह सकता। अगर सब धनवान् मनुष्य मनमाने तौर पर ऐश आराम और विलासिता के पदार्थों को ही खरीदें और उनके ही रोजगार और व्यवसाय को उत्साहित करें तो इसका नतीजा यह होगा कि जीवनरक्षक और निपुणता-दायक पदार्थों की पैदाइश घटती जावेगी। इनकी क़ीमत बढ़ जाने से गरीब लोग और मध्यम श्रेणी के लोग इन वस्तुओं का उपयुक्त परिमाण में सेवन नहीं कर सकेंगे। अतएव

बहुत से लोगों की बेकारी दूर होती है और उनको रोजी भी मिलती है। उदाहरण के लिए आतिशबाजी को लीजिए। आतिशबाजी इत्यादि उत्सव के समय में इस वस्तु का बहुत प्रयोग किया जाता है। इनका उपभोग करनेवाले लोग कहते हैं—हमने इस विलासिता की वस्तु के उपभोग में बहुत से मजदूर आदमियों को काम दिया है, उनको मजदूरी देकर भूखों मरने से बचाया है, हमने देश का उपकार किया है इसलिए हमारा यह खर्च फिजूलखर्ची में शामिल नहीं किया जाना चाहिए। यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो इन लोगों के तर्क की असंगतता मालूम पड़ जाती है। माना कि आतिशबाजी के पदार्थों को पैदा करने में चन्द मनुष्यों को रोजी मिली। लेकिन उस आतिशबाजी से नुकसान कितना हुआ यह उन लोगों ने नहीं विचारा। पहले तो आतिशबाजी से क्षणिक आनन्द होता है। कहाँ उतना खर्च और कहाँ क्षणिक आनन्द! इस आनन्द से भी उपभोक्ताओं की कोई कार्यकुशलता नहीं बढ़ती है। इस बात की आशंका रहती है कि कहीं किसी मकान इत्यादि में आग न लग जाय। इसके अलावा इस आतिशबाजी की वस्तुओं के बनाने में देश का इतना द्रव्य, श्रम और पदार्थ अन्य इससे अधिक उपयोगी वस्तुओं के बनाने के बदले आतिशबाजी की वस्तुओं के बनाने में लग गया। इसलिए दूसरे उपयोगी उद्योग-धन्धों में पूँजी और मजदूर कम मिलने से उन उपयोगी वस्तुओं की उत्पत्ति कम हो गई। अतः उन वस्तुओं की कीमत में वृद्धि होने से सर्व

साधारण जनता को हानि उठानी पड़ी। यदि यह पूँजी और श्रम आतशबाज़ियों के बदले किसी और उपयोगी वस्तु को बनाने में लगाया जाता तो न केवल कुछ लोगों को काम ही मिलता परन्तु वह वस्तु सस्ती हो जाती और जनता को बहुत अधिक लाभ होता। इसलिए हम कह सकते हैं कि आतशबाजी विलासिता की वस्तु है और उसपर खर्च करना फ़िजूलखर्ची है। इसी प्रकार नाच, भोज, खेल, तमाशे इत्यादि में भी बहुत सी फ़िजूलखर्ची शामिल है।

धनवान् लोग प्राय कहते हैं—रुपया हमारा है हम चाहे उसको कैसे ही खर्च करें, इसमें किसी का क्या धनता बिगड़ता है? यह बात वैयक्तिक दृष्टिकोण से ठीक मालूम होती है। लेकिन अगर समाज के दृष्टिकोण से भविष्य पर भी दृष्टि रखते हुए देखा जाय तो इन लोगों की भूल स्पष्ट हो जाती है। धनी, निर्धन सब समाज के व्यक्ति हैं, अगर समाज के किसी भी अङ्ग में दुःख या कष्ट हो तो अन्त में उससे सारे समाज पर असर पड़े बिना नहीं नहीं रह सकता। अगर सब धनवान मनुष्य मनमाने तौर पर ऐश आराम और विलासिता के पदार्थों को ही खरीदें और उनके ही रोजगार और व्यवसाय को उत्साहित करें तो इसका नतीजा यह होगा कि जीवनरक्षक और निपुणता-दायक पदार्थों की पैदावार घटती जावेगी। इनकी कीमत बढ़ जाने से गरीब लोग और मध्यम श्रेणी के लोग इन वस्तुओं का उपयुक्त परिमाण में सेवन नहीं कर सकेंगे। अतएव

उनका स्वास्थ्य, बल और उत्साह, और इसीलिए उनकी निपुणता शिथिल होती जावेगी। इससे उत्पत्ति भी कम और बुरी होती जावेगी जिससे सारे समाज की हानि होगी।

कथल धनी लोगों का ही विलासिता के पदार्थों पर अथवा मादक वस्तुओं पर किया गया खर्च निन्द्य नहीं, परन्तु गरीब लोगों का इन पदार्थों पर किया गया खर्च और भी अधिक निन्द्य है। धनी लोग तो अपने जीवन-रक्षक और निपुणतादायक पदार्थों को प्राप्त करके भी विलासिता की वस्तुओं के लिये खर्च करने में समर्थ होते हैं; लेकिन गरीब लोग जब विलासिता की वस्तु खरीदते हैं तो बहुधा वे लोग अपने जीवन-रक्षक पदार्थों और निपुणतादायक पदार्थों में कमी करके इन वस्तुओं को खरीदते हैं। भारतवर्ष में मजदूरों और छोटे शिल्पकारों की दशा देखिये। ये लोग अपनी आमदनी का अधिकांश भाग कृत्रिम आवश्यकता की वस्तुएं जैसे तम्बाकू, शराब, अफीम इत्यादि मादक वस्तुओं के सेवन में खर्च करते हैं। इससे उनके स्वास्थ्य की तथा कार्यक्षमता की हानि होती है जिससे उनकी आमदनी भी घटने की सम्भावना रहती है। घर में उनके स्त्री-बच्चों को पेट भर खाना नहीं होता है। कहां से बच्चों को घी, दूध, शिक्षा मिल सकती है जिससे वे भविष्य में तन्दुरुस्त और काम के बनें। इस प्रकार से गरीब लोगों में जो शादी, गमी इत्यादि के अवसरों पर। कृत्रिम-आवश्यकताओं की वस्तुओं में खर्च किया जाता है वह भी

अधिकांश फिज़ूल-खर्ची है।

द्रव्य खर्च करने का उत्तम तरीका

अब यहाँ पर यह प्रश्न उपस्थित होता है कि द्रव्य का खर्च करने का सब से अच्छा तरीका क्या है? द्रव्य का इस प्रकार खर्च करना चाहिये जिससे अधिकांश लोगों को अधिकतम सुख मिले। यह किस प्रकार हो सकता है? मुख्य उद्देश्य यह होना चाहिए कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति को जीवन रक्षक पदार्थ और निपुणतादायक पदार्थ पर्याप्त परिमाण में मिलें। जब तक इसका पूरा पूरा इन्तज़ाम न हो जावे तब तक किसी प्रकार की भी विलासिता की वस्तु अथवा आराम की वस्तु खरीदना फिज़ूल खर्ची है और समाज का अनहित करना है। जब ये आवश्यकताएं पूरी हो जावें तो फिर आराम और विलासिता की वस्तुओं को बर्तना चाहिये। लेकिन ये विलासिता की वस्तुएं ऐसी न होनी चाहिएं जिससे स्वास्थ्य अथवा कार्य कुशलता की हानि हो, या क्षणिक आनन्द के लिए समाज की बहुत हानि हो। अगर कोई धनी आदमी अपने द्रव्य को बहुमूल्य शराब, मेले और तमाशों में खर्च करे तो क्षणिक आनन्द के पश्चात् उसके कुछ और हाथ न आवेगा। लेकिन अगर वह इसी द्रव्य को जायदाद खरीदने में, मकान बनवाने में, पुस्तकों और कलाकौशल की वस्तुओं के खरीदने में, अथवा जवाहरात इत्यादि खरीदने में खर्च करे तो ये चीजें चाहे उस वक्त उसके कम काम में आवें परन्तु ये उसके पास एक तरह की पूंजी के रूप में हो जाती हैं,

जायें, जो कि समय पर बेची जा सकती हैं, अथवा भविष्य में उसका काम में आसकती हैं। इन टिकाऊ वस्तुओं पर किया गया खर्च एक प्रकार से भविष्य के उपभोग के लिए रक्षित द्रव्य है।

टिकाऊ वस्तुओं पर किये गये खर्च के सम्बन्ध में भी एक बात ध्यान में रखने के योग्य है। ये वस्तुएं ऐसी नहीं होनी चाहिए जिससे समाज का उपकार न हो। अगर नदी के किनारे पर कुआं बनाया जाय तो शायद उस पर खर्च की गई पूंजी और श्रम से बहुत कम फायदा होगा। इसी प्रकार अगर ऐसे मकान बना दिए जायें जिनमें कोई न रह सके तो उनपर किया खर्च भी फिजूल खर्ची में आवेगा।

कृत्रिम आवश्यकताओं की वस्तुओं में शराब, अफीम, भंग, तमाखू इत्यादि कई एक ऐसी बात शामिल हैं जिनको दूर करने का सब को प्रयत्न करना चाहिए। शिक्षा की वृद्धि से इस काम के करने में सुगमता हो सकती है।

इस क्रम से अगर द्रव्य को खर्च करने का प्रयत्न किया जाय तो सभ्यता की अवनति कदापि नहीं हो सकती है। इसके विपरीत समाज शक्तिशाली और समृद्ध बनेगा जो कि मनुष्य की वृद्धि के वास्तविक चिह्न हैं।

प्रत्येक व्यक्ति को अपने खर्च पर गंभीरतापूर्वक विचार करना चाहिए। कृत्रिम आवश्यकताओं की वस्तुओं पर खर्च करने की आदत धीरे धीरे कम करना चाहिये जिससे वह खर्च शीघ्र

बंद हो जाय। ऐशो-आराम और विलासिता की वस्तुओं पर भी खर्च कम करके बचे हुए द्रव्य को जीवन-रक्षक पदार्थ अथवा निपुणतादायक पदार्थों पर लगाना चाहिये अथवा उसे भविष्य में आपत्ति के समय उपयोग करने के लिये अच्छे बैंक में जमा कर देना चाहिये। इस प्रकार सोच विचार कर खर्च करने से प्रत्येक व्यक्ति को अधिकतम सुख और संतोष होगा। उपर्युक्त नियमों को पालन करने से कोई भी व्यक्ति बिना अपनी आमदनी बढ़ाये भौतिक वस्तुओं से प्राप्त अपना सुख बढ़ा सकता है और अपना तथा समाज का भला कर सकता है।

ग्यारहवां अध्याय

रहन-सहन का दर्जा

यह तो हम देख ही चुके हैं कि मनुष्य की आवश्यकताएं असंख्य होती हैं, फिर भी प्रत्येक मनुष्य अथवा प्रत्येक परिवार अपनी आर्थिक दशा तथा अन्य परिस्थितियों के कारण कुछ निश्चित वस्तुओं का उपभोग करता रहता है। इन वस्तुओं के उपभोग का उसको अभ्यास पड़ जाता है। इस उपभोग के क्रम में बहुत कम बदलाव होता है और अगर बदलाव होता भी है तो बहुत धीरे धीरे होता है। मनुष्य या परिवार भिन्न-भिन्न वस्तुओं का उपभोग करता है उससे हम उसके रहन सहन के दर्जे का पता लगा सकते हैं। चूंकि प्रत्येक मनुष्य अथवा प्रत्येक परिवार एक दूसरे से सभी बातों में कभी भी मिलता जुलता नहीं है इसलिए जितने परिवार हैं उतने रहन सहन के दर्जे हो सकते हैं, लेकिन फिर भी साधारणतः प्रत्येक देश में नीचे लिखे अनुसार कम से कम चार रहन सहन के दर्जे अवश्य दीख पड़ते हैं—

(१) पहिले दर्जे में वे लोग शामिल हैं जिनका अपने जीवन निर्वाह-मात्र वस्तुओं का भी सुनिश्चित ठिकाना नहीं रहता है। कभी कभी उनको कई दिनों तक उपवास करना पड़ता है। उनको भिक्षा मांगने तथा बहुत गहरे ऋण में डूबने की नौबत आजाती

है। बड़ी मुश्किल से ये लोग अपने प्राणों की रक्षा करने में समर्थ होते हैं। इसको दरिद्र रहन-सहन का दर्जा कहना चाहिये।

(२) दूसरा दर्जा उन लोगों का है जिनको केवल साधारण जीवन-रक्षक पदार्थ ही प्राप्त हो सकते हैं। इनके दर्जे को न्यूनतम-जीवन निर्वाह का दर्जा कहते हैं। इनको निपुणतादायक पदार्थ बहुत थोड़े से—नहीं के बराबर—मिलते हैं। दोनों समय रूखा सूखा भोजन, फटा पुराना मोटा कपड़ा तथा एक टूटा फूटा मकान इन्हीं से ये लोग जीवन निर्वाह करते हैं।

(३) तीसरे दर्जे को तन्दुरुस्ती तथा आराम का रहन-सहन का दर्जा कहते हैं। इस दर्जे के लोगों को जीवन-रक्षक-वस्तुएं तो सब मिलती ही है, लेकिन इसके अलावा इनको निपुणता-दायक पदार्थ और आराम की वस्तुओं की कमी नहीं रहती है। ये लोग खूब अच्छा पुष्टिकारक खाना खाते, अच्छा स्वच्छ कपड़ा पहिनते हैं और अच्छे हवादार बड़े मकान में रहते हैं। ये अन्य निपुणता-दायक तथा आराम की वस्तुओं का भी सेवन करते हैं। इन लोगों की कार्यकुशलता बहुत बढ़ी चढ़ी होती है।

(४) चौथे दर्जे के लोग विलासिता का जीवन व्यतीत करते हैं। ये वे रईस और धनसम्पन्न लोग हैं जिनको किसी बात की कमी नहीं है। जिस वस्तु को चाहें खरीदें और उसका उपभोग करें। वे खूब बढ़िया स्वादिष्ट भोजन करते हैं, शानदार बेशकीमती कपड़ा पहिनते हैं, आलीशान बाग बगीचों वाले महलों में रहते हैं, दावत, साहित्य, संगीत, कला, यात्रा इत्यादि में हजारों रुपया

इसके अलावा आमदनी उपभोग की वस्तुओं के सिवाय उत्पादक वस्तुओं में भी खर्च की जाती है। लेकिन रहन-सहन के दर्जे को जानने के लिए हमको उपभोग की वस्तुओं में खर्च की गई आमदनी लेनी चाहिए।

इन सब बातों को दृष्टि में रखते हुए हम एकदम से यह नहीं कह सकते कि अमुक देश की प्रति व्यक्ति आमदनी दूसरे देश से अधिक है, इसलिए पहिले देश के लोगों का रहन सहन दूसरे देश के लोगों के रहन सहन से ऊँचा है। हाँ, हम इतना कह सकते हैं कि अगर दो देशों में और बातें समान हों तो जिस देश में प्रति व्यक्ति आमदनी अधिक है, उस देश के लोगों में अपने रहन-सहन को ऊँचा करने की अधिक गुञ्जायश और सामर्थ्य है।

अब हम द्रव्य के अलावा उन बातों का विवेचन करते हैं जो कि रहन-सहन पर प्रभाव डालती हैं।

पहले हम इस बात को स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि तुलना करने के लिए केवल द्रव्य का ही विचार नहीं करना चाहिये, लेकिन हमें द्रव्य की क्रय-शक्ति ध्यान में रखना चाहिए। द्रव्य की क्रय शक्ति दो कालों में अथवा दो देशों में एक सी नहीं होती है। द्रव्य की क्रय-शक्ति को जानने के लिए हमको औसत सूचक अङ्क, साधारण इंडेक्स नम्बरों (Index number of Prices) को मालूम करना पड़ता है। इसलिए दो कालों के अथवा दो मुल्कों की रहन-सहन की तुलना करने के पहले यह

नितान्त आवश्यक है कि द्रव्य की क्रय-शक्ति का ध्यान रख कर उचित संशोधन कर लिया जावे।

इसके अलावा और भी कई एक महत्वपूर्ण बातें रहन सहन पर असर डालती हैं। कोई आदमी लक्षपति अथवा करोड़पति होने पर भी संभव है कि उसका रहन-सहन निपुणतादायक तथा सुख देनेवाला न हो। उसके शरीर की अवस्था, स्वास्थ्य और पाचन क्रिया इतनी खराब हो कि वह उपभोग की वस्तुओं से कुछ भी आनन्द न प्राप्त कर सके। इसके विपरीत एक स्वस्थ, हृष्टपुष्ट परन्तु गरीब मनुष्य उपभोग के साधारण पदार्थों में से ही बहुत आनन्द प्राप्त कर लेता है। वस्तुतः आनन्द उपभोग के पदार्थों में नहीं परन्तु उपभोक्ता में होता है। अगर धनी उपभोक्ता खूब बढ़िया वस्तुओं से वह आनन्द न प्राप्त कर सका जो कि एक साधारण मनुष्य साधारण वस्तुओं से प्राप्त कर सका है तो हम नहीं कह सकते कि धनी मनुष्य साधारण मनुष्य से भौतिक दृष्टि से ही अधिक सुखी है।

कई एक मनुष्यों में ऐसी खराबियां और रोग हो जाते हैं जिनसे उनके रहन-सहन पर बहुत असर पड़ता है। आंख, कान, त्वचा, दांत इत्यादि में खराबी होने अथवा और बुरे रोगों से पीड़ित रहने से मनुष्य उपभोग की वस्तुओं से पर्याप्त तृप्ति और आनन्द नहीं प्राप्त कर सकता है।

इसके साथ साथ कई लोग जो पहले मन और शरीर से बहुत स्वस्थ होते हैं, वे लापरवाही के कारण अनाप शनाप

वस्तुओं के सेवन करने से अपने को बरबाद कर देते हैं। यह बरबादी बुरे स्थानों में रहन, शराब इत्यादि हानिकारक पदार्थों के सेवन करने, बुरी संगति तथा कुविचारों का फल है। ऐसे लोग उपभोग की वस्तुओं से उतना आनन्द नहीं प्राप्त कर सकते हैं जितना कि वे अपनी स्वस्थ दशा में कर सकते थे।

प्रायः यह देखा जाता है कि कई एक मनुष्य थोड़ी आमदनी से भी बराबर अथवा उससे अधिक आमदनी वाले लोगों की अपेक्षा अच्छी तरह रहते हैं। ५०) रु० मासिक आय वाले एक क्लर्क का रहन-सहन ७०) रु० या इससे भी अधिक आय वाले क्लर्क से ऊँचा हो सकता है। इसका कारण यह है कि सब लोगों में उपभोग के वस्तुओं पर द्रव्य व्यय करने की तथा उन वस्तुओं के उपभोग की योग्यता एक सी नहीं होती है। वस्तुएं खरीदने के लिए कई लोग अपने साथ अनुभवी मनुष्यों को ले जाते हैं, क्योंकि उनको यकीन रहता है कि उनके द्वारा वे अच्छी चीज़ सस्ते दामों में ख़रीद सकते हैं। इसी प्रकार घर में कई स्त्रियां थोड़े से सामान से भी उन बढ़िया वस्तुओं को बना लेती हैं जिनको अन्य लापरवाह और अनभिज्ञ स्त्रियां उससे अधिक सामान से भी नहीं बना सकतीं। इस प्रकार की योग्यता तथा अनुभव का रहन-सहन पर बहुत प्रभाव पड़ता है।

पारिवारिक आय-व्यय

किसी परिवार के रहन-सहन का पता लगाने के लिए हम

परिवार के बजट अथवा आय-व्यय अनुमान पत्र का जानना जरूरी होता है। बजट से यह मालूम हो जाता है कि उक्त परिवार की आमदनी कितनी है, उस परिवार में कितने प्राणी हैं, रहने के लिए कितने कमरे हैं, और यह भी मालूम होता है कि वह परिवार भिन्न भिन्न पदार्थों में कितना खर्च करता है। बजट से यह भी मालूम होता है कि वह परिवार कुछ बचाता है या नहीं अथवा ऋणग्रस्त है या नहीं। जो कम आमदनी वाला तथा अधिक प्राणियों वाला परिवार होगा, उसकी आमदनी का अधिकांश भाग जीवन-रक्षक पदार्थों में खर्च हो जायेगा। निपुणतादायक पदार्थों तथा ऐश आराम की चीजों के लिए उसके पास द्रव्य न बचेगा। लेकिन आमदनी बढ़ने के साथ साथ जीवन-रक्षक पदार्थों में कम अनुपात में खर्च होगा और आराम और विलासिता की वस्तुओं में अधिक अनुपात में खर्च होने लगेगा। अगले अध्याय में भारतवर्ष के दो तीन परिवारों के बजटों पर विवेचन किया गया है।

एक जर्मन लेखक डाक्टर एञ्जिल ने योरोपीय देशों के बहुत से पारिवारिक बजटों का इकट्ठा करके विशेष ध्यानपूर्वक उनका अध्ययन किया है। उनके अध्ययन के अनुसार भिन्न दर्जे के परिवारों की आमदनी का औसत प्रतिशत खर्च भिन्न वस्तुओं पर अगले पृष्ठ पर लिखे अनुसार था।

पदार्थ	मजदूर के परिवार का खर्च	मध्यम श्रेणी के परिवार का व्यय	सम्पन्न परिवार का व्यय
जीवन निर्वाह	६२ प्रतिशत	५५ प्रतिशत	५० प्रतिशत
वस्त्र	१६ "	१८ "	१८ "
मकान का किराया	१२ "	१२ "	१० "
रोशनी और लकड़ी कोयला, इत्यादि	५ "	५ "	५ "
शिक्षा	२ "	३·५ "	५·५ "
टैक्स (कर)	१ "	२ "	३ "
स्वास्थ्य-रक्षा	१ "	२ "	३ "
अन्य	१ "	२·५ "	३·५ "
	१००	१००	१००

इस कोष्ठक से डाक्टर एञ्जील ने निम्नलिखित परिणाम निकाले हैं —

(१) कम आमदनी वाले परिवार का अधिकांश भाग जीवन निर्वाह में खर्च हो जाता है।

(२) वस्त्र पर प्रत्येक परिवार में प्रतिशत व्यय लगभग बराबर होता है। अर्थात् ५०) रु० आमदनीवाले का वस्त्र में करीब ८) रु० खर्च होता है तो १००) रु० आमदनी वाले का १६) रु०, १०००) रु० आमदनी वाले का करीब १६०) रु० खर्च होता है।

(३) इसी प्रकार किराये में, रोशनी और ईंधन में भी प्रत्येक परिवार में प्रतिशत व्यय बराबर होता है।

(४) अधिक आमदनीवाले परिवार का शिक्षा, स्वास्थ्य-रक्षा, परिचर्या इत्यादि में प्रति-शत व्यय बढ़ जाता है।

रहन-सहन का दर्जा ऊँचा करने के लिए यह नितान्त आवश्यक नहीं है कि आमदनी में वृद्धि हो। शिक्षायुक्त मनुष्य ऐसे पदार्थों का सेवन करेगा जिससे उसकी कार्य-कुशलता बढ़े, आमदनी बढ़े तथा रहन-सहन भी ऊँचा हो। ऐसे मनुष्यों का परिवार भी बहुत बड़ा नहीं होता है।

इन्द्रिय-निग्रह से जन-संख्या की वृद्धि कम होती है, इसलिए मनुष्यों को अधिक उपभोग की वस्तुएँ मिलने की सम्भावना रहती है। इससे भी रहन-सहन अच्छा हो सकता है।

स्थान-परिवर्तन से कभी कभी मनुष्यों की आमदनी बढ़ने से उनके रहन-सहन का दर्जा ऊँचा हो जाता है।

देशाटन करने से तथा अच्छी बातों को सीखने से भी रहन सहन का दर्जा ऊँचा हो जाता है। इसलिए यात्रा तथा शिक्षा प्रचार के लिए जितनी अधिक सुविधा होगी, उतनी ही अधिक वृद्धि रहन-सहन में हो सकेगी।

बारहवां अध्याय

भारतवासियों का रहन-सहन

पिछले अध्याय में जन-साधारण के रहन-सहन का विवेचन कर आये हैं। इस अध्याय में उसी सिलसिले में हम भारतवासियों के रहन सहन पर विचार करते हैं।

भारतवर्ष कृषि प्रधान देश है। यहां की जन-संख्या में से ७२ फी सदी लोग प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से कृषि से सम्बन्ध रखते हैं। इसी कारण से यहां के निवासियों में करीब ९० फी सदी लोग गांव में रहते हैं।

बहुधा प्रत्येक कृषि प्रधान देश में यह देखा जाता है कि वहां के अधिकांश लोग गरीब होते हैं। कृषि एक ऐसा धन्धा है जो कि प्रकृति की कृपा पर बहुत अधिक निर्भर रहता है। अधिक वर्षा हो, कम वर्षा हो, ठीक समय वृष्टि न हो, पाला पड़ जाय इत्यादि प्रकृति के व्यापार से कृषक-लोगों का तथा उनसे सम्बन्ध रखने वाले लोगों का जीवन क्रम बहुत अनिश्चित हो जाता है। खास कर भारतवर्ष में जहां कि प्रकृति का वश में करने के साधनों की अभी बहुत कमी है, कृषि प्रकृति पर ही निर्भर रहती है।

भारतवर्ष के कृषि प्रधान देश होने पर भी यहां की जनसंख्या

में बहुत वृद्धि हो रही है इसलिये हम यह आशा नहीं कर सकते कि यहां के जनसाधारण का रहन-सहन बहुत ऊँचा हो सकता है। फिर भी यह मालूम करना एक महत्व की बात है कि यहां के लोगों का रहन-सहन कैसा है। इस बात को जानने के लिए हमको यहां के निवासियों को उनकी आमदनी के अनुसार भिन्न भिन्न दर्जों में रख कर, प्रत्येक दर्जे का अलग अलग विवेचन करना पड़ता है। एक दर्जे के लोगों के रहन-सहन से सारे भारत वर्ष के रहन-सहन के बारे में अनुमान नहीं कर सकते।

पहिले हम उन लोगों के रहन-सहन पर विचार करते हैं जिनकी आमदनी १,०००) रु० मासिक तथा उससे अधिक है। ऐसे लोगों की संख्या भारतवर्ष में बहुत कम है। इस दर्जे में बड़े ओहदेवाले लोग जैसे इन्डियन सिविल सर्विस के लोग बड़े बड़े जमींदार, तालुकदार, बड़े वकील, डाक्टर इत्यादि, तथा बड़े बड़े कारखानों के मालिक इत्यादि इत्यादि लोग शामिल हैं। इन लोगों के रहन सहन का दर्जा बहुत ऊँचा रहता है। ये लोग निपुणतादायक और आराम की वस्तुओं के अतिरिक्त ऐशो आराम की वस्तुओं का भी बहुतायत से सेवन करते हैं।

दूसरे दर्जे के लोग वे हैं जिनकी आमदनी ५००) रु० से १,०००) रु० मासिक तक है। इस दर्जे में पहिले दर्जे से कुछ छोटे ओहदे के लोग जैसे प्रान्तिक सिविल सर्विस के लोग, यूनीवर्सिटी के प्रोफेसर लोग, वकील, डाक्टर, जमींदार और उद्योग-धन्धे में लगे हुए तथा व्यापारी लोग भी शामिल हैं। इन लोगों का जीवन-रक्षक,

देखने पर मालूम होता है कि खान पान, तथा पहिनने के लिए साधारण वस्तुओं का उपयोग होता है। आमदनी का अधिकांश भाग इन्हीं में निकल जाता है। शिक्षा, स्वास्थ्य और आमोद प्रमोद की वस्तुओं पर बहुत कम खर्च होता है। रहने के लिए केवल दो तीन छोटे छोटे कमरे हैं। इनसे स्पष्ट है कि रहन-सहन का दर्जा बहुत साधारण है।

पांचवें दर्जे में वे लोग शामिल हैं जिनकी आमदनी १५) से ४३) रु० माहवार तक है। इन लोगों में अधिक लोग मजदूर, किसान, छोटे छोटे क्लर्क, गांव के अध्यापक इत्यादि लोग शामिल हैं। भारतवर्ष के अधिकांश लोग इसी दर्जे में हैं।

पहले हम श्रमजीवियों के रहन-सहन पर विचार करते हैं। सन् १९२१—२२ में बम्बई प्रान्त के श्रमजीवी विभाग के लिस्टर जी० फिण्डले शिराज की अध्यक्षता में बम्बई शहर में रहने वाले श्रमजीवियों के खर्च की जाँच की थी। २४७३ श्रमजीवियों के परिवार के और ६०३ अकेले पुरुषों के पारिवारिक बजट इकट्ठा किये गये थे। इन परिवारों में सभी जाति के और सभी कारखानों के लोग शामिल थे। कुल परिवारों में ९० फीसदी परिवार हिन्दुओं के थे।

आमदनी के अनुसार परिवारों का अगले पृष्ठ पर दिये हुये कोष्ठक के अनुसार वर्गीकरण किया गया था—

कुल परिवार की मासिक आमदनी	परिवारों की संख्या	कुल का प्रतिशत
३०) रु० माहवार से कम	६८	२ ७
३०) रु० और ४०) के अन्तर्गत	२७२	११ ०
४०) रु० " ५०) " "	८३५	३३·७
५०) रु० " ६०) " "	५३९	२१ ८
६०) रु० " ७०) " "	४८४	१९ ६
७०) रु० " ८०) " "	१६७	६ ८
८०) रु० " ९०) " "	७०	२ ८
९०) रु० से अधिक	३८	१ ६
	२४७२	१०० ०

मुख्य मुख्य वस्तुओं में खर्च इस प्रकार विभाजित पाया गया था।

खाने की चीजें	५६ ८ प्रतिशत
ईंधन और रोशनी	७·४ "
वस्त्र	९ ६ "
मकान का किराया	५·७ "
अन्य चीजें	१८·५ "
	१०० ०

इन घजटों पर विचार करने पर यह पाया गया कि गरीब परिवारों में केवल खाने पीने में करीब६० प्रति शत खर्च हो जाता था। घी, दूध इत्यादि निपुणतादायक पदार्थों में कुछ खर्च नहीं किया जाता था। प्रोफेसर शिराज का कहना है कि किसी श्रमजीवी को प्रायः क़ैदी से कम परिमाण में खाना मिलता है।

मकान पक्ष, रोशनी की दशा और भी भयानक है। जांच किये गये परिवारों में ९७ प्रतिशत केवल एक कमरे में गुजर करते पाये गये थे। इस कमरे में भी सफाई, रोशनी इत्यादि का बहुत खराब इन्तजाम था। इस कारण मृत्यु संख्या बहुत ज्यादा थी। १९२१ में १००० पैदा बच्चों में ८५८ बच्चे एक वर्ष से कम उम्र में ही मर गये थे। इस प्रकार रहन से यह फल होता था कि लोग बीमार पड़ जाते थे। उनमें शराब पीना, इत्यादि और भी बुरे व्यसन पाये गए थे।

अन्य खर्च में यतन, साबुन, दवा, यात्रा, शिक्षा, कर्ज पर सूद, तम्बाकू शराब इत्यादि वस्तुएं शामिल हैं। इनमें से अधिकांश शराब में और सूद में खर्च होता था। सूद की दर ७५ प्रतिशत से १५० प्रति शत तक थी। शिक्षा में और स्वास्थ्य के संबंध में बहुत ही कम खर्च किया जाता था।

इस विवरण से स्पष्ट है कि श्रमजीवियों की दशा कितनी खराब है। इन लोगों को भर पेट खाने को भी नहीं मिलता, पुष्टिदायक पदार्थों का नाम जाने दीजिये। शिक्षा, व्यायाम इत्यादि शारीरिक तथा मानसिक शक्ति को बढ़ाने का कुछ भी प्रबन्ध न होने से इन लोगों का स्वास्थ्य गिरता जाता है और ये लोग दुर्व्यसनों की ओर आकृष्ट होते जाते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि इनकी कार्य-कुशलता कम होती जाती है और आमदनी भी घटती जाती है। इससे इनकी सन्तान भी कम जोर होती है और उनकी कार्य-कुशलता भी बहुत कम होती

है। यह बुरा असर फैलता और बढ़ता जाता है।

अन्तिम दर्जे में वे लोग शामिल हैं जिनकी मासिक आमदनी १५) से कम है। इनमें अधिकांश गरीब किसान और मजदूर शामिल हैं। गरीब किसानों की दशा मजदूरों से भी दर्दनाक है। मजदूरों को तो कुछ न कुछ नियमित मजदूरी मिलती रहती है, लेकिन किसानों की आमदनी अधिकतर प्रकृति पर निर्भर रहती है। इसलिए इनकी आमदनी बिलकुल अनिश्चित रहती है।

भारतवर्ष के किसानों की आमदनी बहुत ही कम है। प्रयाग विश्वविद्यालय के एक अन्वेषक छात्र (Research scholar) ने खोज करके यह पता लगाया है कि संयुक्त प्रान्त के अधिकांश किसानों की वार्षिक आमदनी ५०) रु० और ९०) रु० के दर्मियान है। इस आमदनी से हम अनुमान कर सकते हैं कि इन लोगों का रहन-सहन का दर्जा कैसा होगा। इन लोगों को साल भर में हमेशा दो वक्त रूखा-सूखा भोजन भी प्राप्त नहीं होता है। वस्त्र इन लोगों का बहुत ही साधारण और कम और मैला दिखलाई देता है। रहने के लिए ये लोग एक साधारण छप्पर में ही गुजर करते हैं। अक्सर यह देखा जाता है कि जो परिवार बहुत गरीब होता है उसमें जन-संख्या बहुत अधिक होती है। गरीब किसानों के बच्चे केवल एक वस्त्र पहिने हुए या कभी कभी बिना वस्त्र के ही घूमते दिखलाई पड़ते हैं। इनके लिए दूध, घी तो अलग रहा, दोनों वक्त अच्छा खाना तक प्राप्त नहीं होता है। उनकी शिक्षा इत्यादि का कोई उचित प्रबन्ध नहीं है।

भारतवर्ष में शायद ही कोई ऐसा किसान हो जो ऋण में डूबा हुआ न हो। इन लोगों का व्यवसाय ही ऐसा है जिसमें बिना ऋण लिए हुए काम नहीं चलता है। पहले तो बीज, पशु तथा औज़ारों के लिए कर्ज़ लेना पड़ता है। इसके अलावा शादी, उपनयन इत्यादि अवसरों पर कर्ज़ लेना अनिवार्य हो जाता है। ब्याज की दर बहुत ज़्यादा रहती है। किसान बिचारा ब्याज ही नहीं चुका सकता है, मूलधन चुकाने की बात कौन करे। इसके अलावा सरकारी लगान भी उनको देना पड़ता है। इसमें भी उसकी आमदनी का एक काफ़ी बड़ा हिस्सा निकल जाता है।

ऐसी स्थिति में हम लोग किसानों के कष्टों का अन्दाज़ नहीं लगा सकते हैं। भारतवर्ष का किसान सहनशील और शान्तिप्रिय होता है। वह जैसे तैसे अपना निर्वाह करता जाता है। इसलिए कई लोगों का यह ख़याल है कि किसान सुखी रहता है। लेकिन अगर ध्यानपूर्वक इनकी दशा देखी जाय तो पता चलता है कि कितने कष्ट और श्रम से यह अपनी और अपने परिवार की जीवन रक्षा करने में समर्थ होता है।

क्या अधिकांश भारतवासियों का रहन-सहन बढ़ रहा है ?

अब यह प्रश्न उपस्थित होता है कि भारतवासियों के रहन सहन का दर्जा ऊँचा हो रहा है या नीचे गिर रहा है। इस विषय में दो मत हैं एक सरकारी और दूसरा ग़ैर-सरकारी। सरकारी मत के अनुसार रहन-सहन ऊँचा होता जा रहा है। उन लोगों का कहना है कि भारतवर्ष में माल बाहर भेजने (व्यापार) की वृद्धि हो रही

है जिनमें से अधिकांश माल विलासिता और ऐशो आराम की वस्तुएं हैं। इससे ये लोग परिणाम निकालते हैं कि भारतवासियों की आमदनी बढ़ गई है इसलिए उनका रहन-सहन भी बढ़ गया है। लेकिन उनका यह तर्क ठीक नहीं है। विलासिता की वस्तुओं के अधिक सेवन होने के दो कारण हो सकते हैं। एक तो यह कि धनी लोग उन वस्तुओं का अधिक सेवन करने लगे हों जिससे उनका रहन-सहन ऊँचा होगया हो। लेकिन केवल धनी लोगों के रहन-सहन के बढ़ने से यह नहीं कहा जा सकता है कि सम्पूर्ण भारतवासियों का रहन सहन बढ़ गया है क्योंकि कुल जनसंख्या में धनी लोगों की संख्या बहुत ही कम है। दूसरा कारण यह हो सकता है कि लोग जीवनरक्षक और निपुणता-दायक पदार्थों में खर्च घटा करके विलासिता की वस्तुएं खरीदते हों।

सरकारी लोगों का कहना यह भी है कि लोग अच्छे कपड़े पहनने लगे हैं, जूतों का व्यवहार भी बढ़ रहा है, मकान अच्छे बन रहे हैं, डाक, तार, रेल इत्यादि पर का खर्च भी बढ़ रहा है। चाय, पान, सिगरेट इत्यादि पर भी खर्च बढ़ रहा है इसलिए लोगों का रहन-सहन भी बढ़ रहा है। ऊपर लिखे गये दो कारणों द्वारा ही हम यह सिद्ध कर सकते हैं कि यह तर्क भी ठीक नहीं है।

आजकल के बड़े बूढ़ों की राय में भारतवर्ष का पतन हो रहा है। सत्तर अस्सी साल की उम्र के ये लोग अपने हृष्टपुष्ट और बली शरीर से आजकल के नवयुवकों के शरीर की तुलना

करके ही पता लग सकता है कि आजकल के लोगों का रहन-सहन किस प्रकार का है। उन लोगों का कहना है कि उनकी युवावस्था में वे लोग पौष्टिक पदार्थों का सेवन करते थे, व्यायाम इत्यादि स्वास्थ्यवर्द्धक बातों पर विशेष ध्यान रखते थे। उनकी राय में आजकल के लोग द्रव्य का व्यय तो उनसे अधिक करते हैं लेकिन वह ऐसी वस्तुओं में व्यय करते हैं जिनसे उनकी शारीरिक तथा मानसिक शक्ति का उन्नति होने के बजाय उसका ह्रास होता है। आजकल के लोगों में कार्य करने की शक्ति, ओज और उत्साह बहुत कम रहता है। ये लोग प्रायः अल्पायु होते हैं। इन सब कारणों से वे लोग कहते हैं कि आजकल भारतवासियों के वास्तविक रहन-सहन का दर्जा ऊँचा होने के बजाय गिर रहा है।

वास्तविक बात यह मालूम पड़ती है कि कुछ धनवान लोगों का रहन सहन शिक्षा इत्यादि के अधिक प्रचार से प्राचीन काल के बनिस्बत कुछ अच्छा हो गया है। लेकिन यह नहीं कहा जा सकता है कि भारतवर्ष की आधुनिक आर्थिक स्थिति के कारण ये लोग भी अपने इस रहन-सहन के दर्जे को बनाये रखने में समर्थ होंगे अथवा नहीं। गरीब लोग भी अवश्य कुछ आराम और विलासिता की वस्तुओं का सेवन करने लगे हैं लेकिन वे लोग अपने जीवनरक्षक और निपुणता-दायक पदार्थों में कमी करके इनमें व्यय कर रहे हैं। इसलिये निश्चय पूर्वक हम नहीं कह सकते कि इनका रहन-सहन ऊँचा हो रहा है।

तेरहवां अध्याय

रहन-सहन का वास्तविक दर्जा

पिछले दो अध्यायों में यह बतलाया जा चुका है कि किसी देश में किसी भी समय अनेक रहन सहन के दर्जे होते हैं, और यह भी बतलाया जा चुका है कि भारतवासियों के रहन-सहन का दर्जा किस प्रकार है। इस अध्याय में यह दिखलाने का प्रयत्न किया जाता है कि किसी देश के मनुष्यों का, विशेषत भारतवासियों के रहन-सहन का, वास्तविक दर्जा कौन सा होना चाहिये और उसको प्राप्त करने के लिए किन युक्तियों का अवलम्बन करना चाहिए।

किसी भी देश के निवासियों का रहन-सहन तभी उपयुक्त कहा जा सकता है जब कि वहाँ के निवासियों की तृप्ति अधिकतम हो। इस अधिकतम तृप्ति को प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रत्येक निवासी का रहन-सहन ऐसा हो जिससे उसको अधिकतम तृप्ति हो। चूंकि प्रत्येक मनुष्य की इच्छा, प्रकृति, रुचि इत्यादि भिन्न २ प्रकार की होती है इसलिए एक ही तरह के रहन-सहन से सब मनुष्यों को अधिकतम तृप्ति नहीं मिल सकती है। परंतु तिस पर भी सब मनुष्यों में कई एक बातें एक सी होती हैं, इसलिये हम एक

ऐसे रहन-सहन के दर्जे का अनुमान कर सकते हैं जिससे अधिकांश लोगों को अधिकतम तृप्ति मिले। इस दर्जे को हम रहन-सहन का वास्तविक दर्जा कहते हैं। हम उस मनुष्य के दर्जे को रहन-सहन का वास्तविक दर्जा कहेंगे जो उन वस्तुओं और सेवाओं का उपभोग करे जिससे उसकी कार्य-कुशलता बढ़े, शारीरिक और मानसिक बल बढ़े, और इसके साथ २ जो उन वस्तुओं का त्याग करे जिनसे उसकी कार्यकुशलता, मानसिक तथा शारीरिक बल की क्षति हो। अब हमको यह जानना चाहिये कि इस रहन-सहन के वास्तविक दर्जे में कौन कौन सी वस्तुएं सम्मिलित हैं।

मनुष्य को सबसे पहले शरीर रक्षा के लिए भोजन की आवश्यकता होती है। भोजन से शरीर में बल आता है और कार्यकुशलता बढ़ती है। लेकिन भोजन अच्छा और पुष्टिकारक होना चाहिए और पेट भर होना चाहिये। भोजन का परिमाण और गुण भोजन करने वाले की उम्र, कद, स्वास्थ्य, स्वभाव, जलवायु इत्यादि पर निर्भर रहता है। छोटे उम्र के आदमी को बड़े उम्र के आदमी की अपेक्षा कम पुष्टिकारक भोजन की आवश्यकता होती है, तथा एक मजदूर को एक बाबू से अधिक भोजन की आवश्यकता होती है। यह बात भी ध्यान में रखने योग्य है कि भोजन साफ स्थान में साफ बर्तनों में पकाया और खाया जाए। खाने के समय मनुष्य को हमेशा प्रसन्न रहना चाहिये और किसी प्रकार की चिन्ता इत्यादि को पास फटकने न देना चाहिए।

इस प्रकार भोजन करने से भोजन का शरीर पर बहुत अच्छा असर पड़ता है।

भोजन के बाद वस्त्र की बारी आती है। वस्त्र का स्वास्थ्य और कार्य कुशलता से घना सम्बन्ध है। धूप, वर्षा, जाड़ा, गर्मी इत्यादि का शरीर पर बहुत असर पड़ता है, इसलिये यह आवश्यक है कि इनके बुरे असर से शरीर की रक्षा की जाय। वस्त्र इस प्रकार के होने चाहिये जिससे उपयुक्त रूप से शरीर की रक्षा हो। वस्त्र मौसम के अनुसार और कार्य के अनुसार होने चाहिये, जैसे जाड़ों में ऊनी कपड़े, गरमियों में सूती कपड़े, खेती के काम में एक तरह के कपड़े, कोयले की खान के काम में दूसरी तरह के कपड़े, इत्यादि। यह कोई आवश्यक नहीं है कि कपड़े बराकीमती, चटकील भड़कीले हों, लेकिन यह आवश्यक है कि कपड़े मैले, फटे पुराने न हों। अच्छे साफ कपड़े पहिनकर मनुष्य का चित्त प्रसन्न होता है, काम करने की इच्छा होती है और उत्साह बढ़ता है।

हमारी प्रधान आवश्यकताओं में से तीसरी आवश्यकता रहने के लिए मकान की है। हमको मकान के बारे में यह देखना जरूरी है कि मकान अच्छी जगह पर बना हुआ है या नहीं, मकान में कितने कमरे हैं, रोशनी, सफाई, पानी इत्यादि का कैसा इन्तजाम है, पड़ोस कैसा है, इत्यादि। मनुष्य की तन्दुरुस्ती उसके रहने के स्थान पर बहुत अवलम्बित रहती है। अगर मकान गन्दी जगह में हो छोटा हो, रोशनी सफाई का

अच्छा इन्तज़ाम न हो, तो उसमें रहनेवालों की तन्दुरुस्ती खराब हो जायगी और उनकी काम-कुशलता का भी ह्रास होगा। किसी पाँच-छ आदमियों की औसत-परिवार के लिए कम से कम पाँच कमरे आवश्यक हैं, जिनमें स्नान के, सोने के, उठने बैठने इत्यादि के कमरों का ठीक २ इन्तजाम होना चाहिये। मकान और उसके इर्द-गिर्द की जगह साफ रहनी चाहिये। कमरों में रोशनी और हवा का अच्छा इन्तजाम रहना चाहिये। कमरों में यथायोग्य मेज, कुरसी, पलंग इत्यादि भी परिमित संख्या में आवश्यक हैं।

तन्दुरुस्ती के लिए व्यायाम, खेल, नींद भी बहुत आवश्यक हैं। जब हम थक जाते हैं तो हमको मनोरञ्जन की आवश्यकता होती है। यह मनोरञ्जन भिन्न भिन्न व्यक्तियों को अपनी रुचि के अनुसार भिन्न २ रूप में प्राप्त होता है। किसी मनुष्य का मनोरञ्जन, घूमने से, किसी का ताश खेलने से, किसी का सङ्गीत से और किसी का व्यायाम से होता है। लेकिन अक्सर यह देखा गया है कि शारीरिक काम करनेवाले व्यक्तियों को कुछ मानसिक कार्य करने से और मानसिक काम करनेवाले व्यक्तियों को कुछ शारीरिक काम करने से लाभ होता है। यह बात ध्यान रखने के योग्य है कि मनोरञ्जन इस प्रकार का होना चाहिये कि जिससे क्षणिक आनन्द के बदले भविष्य में अधिक हानि हो। नींद का स्वास्थ्य से बहुत गहरा सम्बन्ध है। प्रत्येक जवान व्यक्ति को कम से कम छः घंटे नींद की आवश्यकता है। इससे शरीर और मन को आराम मिलता है और उनमें नवीन शक्ति का

सञ्चार होता है।

रहन-सहन के वास्तविक दर्जे में शारीरिक उन्नति की वस्तुओं के उपभोग के साथ साथ व वस्तुएं भी शामिल हैं जिनसे हमारी मानसिक उन्नति भी हो। इसके लिए शिक्षा अनिवार्य है। शिक्षा से मनुष्य बहुत सी ऐसी बातें समझ पाता है जिनसे उसके रहन-सहन में बड़ा असर पड़ता है। जैसे उचित शिक्षा से मनुष्य समझ जाता है कि कम उम्र में विवाह करना हानिकारक है, मद्य, मांस का भक्षण करना, जुआ खेलना इत्यादि बुरा काम है। इन बातों को समझने से और इनके अनुसार चलने से हमारा का रहन सहन अच्छा होता जाता है। इसलिए यह नितान्त आवश्यक है शिक्षा के लिए पाठशाला, पुस्तकालय, यात्रा इत्यादि का सुप्रबन्ध हो।

पिछले परिच्छेद में हम देख चुके हैं कि अधिकांश भारत वासी दरिद्र और न्यूनतम रहन सहन के दर्जे में हैं। देश में अधिकतम सन्तोष और तृप्ति फैलाने के लिए और देश की मानसिक तथा शारीरिक शक्ति बढ़ाने के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि इन लोगों का रहन सहन वास्तविक बनाया जाय। रहन सहन को ऊँचा करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं उद्योग करना चाहिए और देश की सरकार और अन्य सामाजिक संस्थाओं को इस काम में उसकी मदद करनी चाहिए।

प्रत्येक सरकार का यह कर्तव्य है कि वह अपनी किसी प्रजा को भूखों न मरने दे। प्रत्येक मनुष्य को कम से कम उसके

जीवन-निर्वाह मात्र के लिए वस्तुएँ अवश्य मिलनी चाहियें। कुछ एक लोगों का ख़याल है कि अगर सरकार प्रत्येक भूखे, नंगे को अन्न वस्त्र देती फिरेगी तो इससे बहुत से लोग जो काम करके अपना निर्वाह कर सकते हैं वे भी आलस्यवश काम छोड़ कर सरकार के खैरात पर ही अवलम्बित हो जायेंगे। इसलिए आलसियों और निकम्मों की संख्या बढ़ जाने से सरकार को उनको खिलाने पिलाने के लिए जनता पर बहुत टैक्स लगाना पड़ेगा और देश की भी क्षति होगी। लेकिन अगर सरकार इस तरह इन्तज़ाम करे कि जो लोग काम करने के समर्थ हैं उनसे काम लिया जाय और जो लोग काम करने में बिलकुल असमर्थ हैं उनको द्रव्य के रूप में नहीं, बल्कि उपयोग की वस्तुओं के रूप में सहायता दी जाय तो यह अपवाद बहुत कुछ हद तक दूर हो सकता है। इस प्रकार सहायता के लिए सरकार को जिस द्रव्य की आवश्यकता होगी वह द्रव्य टैक्स के रूप में धनसम्पन्न लोगों से ही लिया जाना चाहिये। इससे धनी लोगों की तृप्ति में बहुत कम घटती होगी और ग़रीब लोगों की तृप्ति में बहुत अधिक वृद्धि होगी, अतएव देश की कुल तृप्ति, सन्तोष और सुख में वृद्धि होगी।

सरकार का यह भी कर्तव्य है कि शिक्षा, स्वास्थ्यरक्षा इत्यादि का देश में समुचित प्रबन्ध करे। स्थान २ पर विद्यालय वाचनालय, चिकित्सालय, पार्क इत्यादि का समुचित प्रबन्ध होना चाहिए। जो लोग बहुत ग़रीब हैं उनको इन वस्तुओं का निःशुल्क उपयोग करा देना चाहिये। कम से कम प्रारम्भिक

शिक्षा प्रत्येक व्यक्ति को अवश्य दी जानी चाहिये। इन सब बातों से प्रजा की शारीरिक तथा मानसिक शक्तियों का विकास होगा और वह स्वयं अपने रहन सहन को अच्छा करने तथा अपने को कार्य-कुशल बनाने का प्रयत्न करेगी।

भारत की सरकार को भारतवासियों का रहन-सहन वास्तविक दर्जे पर लाने के लिए यहाँ के निवासियों को ऋण से मुक्त करने का प्रयत्न अवश्य ही करना पड़ेगा। भारतवर्ष के अधिकांश निवासी खासकर किसान लोग ऋण में इतने ग्रस्त हैं और उनको इतनी ऊँची सूद की दर पर कर्ज लेना पड़ता है कि वे लोग सदा ही ऋण के बोझ में दबे रहते हैं और मरने पर उस बोझ को अपनी सन्तान पर लाद जाते हैं इसलिए उनकी सन्तान को भी उसी पुरानी परिस्थिति में रहना पड़ता है। सरकार का कर्तव्य है कि सहकारी बैंक तथा सहकारी साख समितियाँ इत्यादि का स्थान स्थान पर आयोजन करके जनता के कष्ट का निवारण करे।

सरकार को इस बात का भी समुचित प्रबन्ध करना चाहिये कि आयात-निर्यात तथा द्रव्य की सहायता द्वारा देश के उद्योग-धन्धों को मदद दे। इससे देश की क्रय-शक्ति बढ़ेगी और प्रति-व्यक्ति आमदनी भी बढ़ेगी, इसलिए प्रत्येक मनुष्य अपने रहन-सहन को ऊँचा करने में समर्थ होगा।

समाज को चाहिये कि इन सब प्रकार के कामों में सरकार का हाथ बंटावे। लेकिन साथ ही साथ उसका कर्तव्य यह भी

है कि किसी काम के लिए सरकार का मुँह ताक न रहे। मगर वह समझे कि अमुक बात प्रजा के लिये हित की है और अगर सरकार उस काम को करने को तैयार न हो तो समाज का कर्तव्य है कि वह उस काम को अपने हाथों में ले। जितने काम सरकार के सम्बन्ध में कहे जा चुके हैं उनमें से अधिकांश समाज अपने हाथों में लेकर सुचारु रूप से उनका प्रबन्ध कर सकता है। समाज को चाहिए कि वह ऐसी संस्थाएं और समितियाँ बनाये जो देश के निवासियों की आर्थिक कठिनाइयाँ दूर करें और बुरी सामाजिक प्रथाओं का सुधार करें। सम्पन्न लोगों का कर्तव्य है कि वे अपने गरीब भाइयों की उन्नति में, विद्यालय इत्यादि खोलकर मदद करें। पढ़े-लिखे पुरुषों का कर्तव्य है कि वे गाँव-गाँव में जाकर लोगों को उपदेश दें जिससे वे बालविवाह, मद्यपान, कृत्रिम आवश्यकताओं, व्यर्थ इत्यादि को छोड़ दें।

इन सब सुधारों का परिणाम यह होगा कि देश में सुख, सन्तोष और शांति फैल जायगी, जिससे देश के निवासी नीरोग, सम्पन्न तथा कार्यकुशल बन जायेंगे।

चौदहवां अध्याय

सरकार और उपभोग

सरकार का हस्तक्षेप किन दशाओं में उचित है।

इस अध्याय में इस बात पर विचार किया जाता है कि सरकार को प्रजा के उपभोग-सम्बन्धी विषयों में हस्तक्षेप करना चाहिये या नहीं। अगर हस्तक्षेप करना चाहिये तो कहां तक करना चाहिये।

कई-एक लोगों का कहना है कि मनुष्य एक स्वाधीन जीव है। उसको प्राकृतिक हक़ प्राप्त है। इसलिए उसको खाने पीने, पहनने इत्यादि उपभोग-सम्बन्धी बातों में पूर्ण स्वाधीनता मिलनी चाहिये। जब जिस वस्तु के उपभोग की मनुष्य को इच्छा हो उस वस्तु के उपभोग करने में उसको बाधा पहुँचाना प्राकृतिक तथा न्याय की दृष्टि से ठीक नहीं है। इसलिए, इन लोगों की दृष्टि में किसी समाज अथवा सरकार का यह उचित नहीं है कि वह मनुष्य के प्राकृतिक हक़ों को छीनकर सरकारी कानूनों द्वारा उसके उपभोग-सम्बन्धी विषयों में हस्तक्षेप करे।

पहले तो यह बात विचारणीय है कि किसी व्यक्ति को

इत्यादि बहुत से लोग मालामाल हो जाते हैं। इस प्रकार देश भी समृद्धिशाली हो जाता है।

लेकिन ध्यानपूर्वक देखने से मालूम हो जाता है कि इस तर्क में कोई सार नहीं है। यह बात तो ठीक है कि सरकार को इन वस्तुओं पर कर से बहुत आमदनी है, लेकिन यह कर योग्यता के अनुसार नहीं लिया जाता। गरीब व अमीर जो भी इन वस्तुओं का सेवन करता है सब को बराबर कर देना पड़ता है। इसके अलावा अगर इन मादक वस्तुओं का उत्पादन बिल्कुल बन्द कर दिया जाता तो जो पूँजी, श्रम व समय इन वस्तुओं में लगता था वह किन्हीं ऐसी वस्तुओं के उत्पादन में होता, जिससे समाज की वास्तविक भलाई होकर समाज अधिक समृद्ध और सुखी होता। समाज के समृद्ध होने पर सरकार भी समृद्ध हो जाती है क्योंकि वह कर दूसरे रूपों में भी वसूल कर सकती है।

यह बात सही है कि मादक वस्तुओं के उत्पादन करने से थोड़े से लोग बहुत धनवान हो जाते हैं। लेकिन इससे अधिक लोगों को हमेशा के लिए हानि उठानी पड़ती है। यही पूँजी और श्रम मादक वस्तुओं के उत्पादन के बदले अगर दूसरे अच्छे व्यवसायों में लगाया जाता तो भी इन लोगों का कम आमदनी न होती और देश का भी कल्याण होता।

वस्तुओं में मिलावट और सरकार का कर्तव्य

खाद्यपदार्थ अथवा वस्तुओं का मिलना उत्तम भी हो सकता

है। प्रत्येक वस्तु में कुछ न कुछ इस प्रकार की मिलावट रहती है जिससे उपभोक्ता को असली वस्तु का पहचानना बहुत मुश्किल हो जाता है। इससे उपभोक्ता को केवल द्रव्य सम्बन्धी ही हानि नहीं उठानी पड़ती, बल्कि बुरी खाद्य-वस्तु के भक्षण से उसके स्वास्थ्य पर भी बुरा असर पड़ता है। उदाहरण के लिए घी को लीजिए। आजकल घी में वनस्पति घी, चर्बी, तेल इत्यादि की मिलावट पाई जाती है। प्रत्येक उपभोक्ता को इतना ज्ञान तथा समय नहीं होता कि वह प्रत्येक वस्तु का वैज्ञानिक रूप से परीक्षा करके उनको खरीदे। इसी प्रकार दूध, मिठाई, तेल, अवस्थाओं में सरकार का कर्तव्य है कि वह ऐसे क़ानून बनावे जिससे इस प्रकार की मिलावट बन्द हो जाय। इसके लिए मिलावट करनेवालों को कड़ी सजा दी जानी चाहिए। भारतवर्ष की कई एक म्यूनिसिपल्टियों ने इस प्रकार के क़ानून का प्रचार किया है। लेकिन खेद है कि इनके ठीक संचालन न होने से समाज का कोई विशेष उपकार नहीं हुआ है।

झूठे विज्ञापन और माप-तौल के सम्बन्ध में हस्तक्षेप

आजकल का ज़माना विज्ञापन का ज़माना कहा जाता है। लोगों को भिन्न २ वस्तुओं की सूचना विज्ञापनों द्वारा दी जाती है। यह बात सत्य है कि कई वास्तविक विज्ञापनों द्वारा समाज की भलाई होती है। लोग जानते हैं कि कौन सी वस्तु कहाँ और

किस मूल्य पर मिल सकती है। लेकिन आजकल बहुत से विज्ञापन झूठे और जनता को धोखा देने वाले होते हैं। विज्ञापनों में वस्तुओं की झूठी तारीफ लिखी रहती है और बेचारी जनता उसके धोखे में आकर ठगी जाती है। इसके साथ साथ विज्ञापनों में व्यय बहुत बढ़ रहा है, जिसका भार उपभोक्ताओं के सिर पर पड़ता है। सरकार का कर्तव्य है कि वह कानूनों के द्वारा झूठे विज्ञापनों से जनता की रक्षा करे।

कई व्यापारी लोग मूठा तोल और बट्टे रखते हैं, जिससे भी उपभोक्ताओं को हानि होती है। सरकार को उचित है कि वह समय समय पर इनकी जाँच करवाये और अपराधियों को उचित दण्ड दे।

युद्ध के समय सरकार का हस्तक्षेप

युद्ध के समय में सरकार को उपभोग-सम्बन्धी विषयों में हस्तक्षेप करने की आवश्यकता पड़ती है। ऐसे समयों में फ़ौज के लिए गोला, बारूद इत्यादि अन्य सामानों की विशेष आवश्यकता होती है। इसलिए देश की पूँजी और श्रम को उत्पादक व्यवसायों से हटाकर दूसरे व्यवसायों में लगाने पड़ते हैं। समय समय पर प्रत्येक देश में लड़ाई के समय उपभोग के विषय में कानून बनाये जाते हैं। १९१४ ई० के महायुद्ध के समय इङ्गलैण्ड, अमेरिका इत्यादि देशों में नये कानून बन गये जिनसे जनता को उपभोग के पदार्थों की बहुत कमी पड़ती

थी। ऐसे खास खास समयों पर सरकार को उपभोग-सम्बन्धी मामलों में हस्तक्षेप करना ही पड़ता है। यह सब बातें देश की रक्षा के लिए ही की जाती हैं। ऐसे समयों पर जनता का चाहिए कि वह स्वयं सरकार तथा अपने देश को सहायता करे न कि सरकार के इस काम में रोड़ा अटकाये।

सार्वजनिक सेवाओं के सम्बन्ध में सरकार का कर्तव्य

कई एक सार्वजनिक सेवा (Public Utility Services) ऐसी हैं जैसे रेल, तार डाक इत्यादि जिनका प्रबन्ध किसी व्यक्ति-विशेष की अपेक्षा सरकार अच्छी तरह कर सकती है। सरकार का चाहिए कि इन सेवाओं का ऐसा इन्तजाम करे और इनका मूल्य इतना से करें जिससे सर्वसाधारण का इन वस्तुओं क उपभाग करने में सुविधा हो। कुछ ऐसे आधारभूत उद्योग-धन्धे होते हैं जैसे कि लाहा और इस्पात की खानें, जङ्गलात इत्यादि जिनका सर्वसाधारण जनता और देश की समृद्धि म सम्बन्ध रहता है। इनका प्रबन्ध सरकार क हाथ में रहना चाहिये। सरकार को ऐसा इन्तजाम करना चाहिए जिसस इन खाना तथा उद्याग-धन्धों का उपभाग भविष्य की जनता क लिए भी सुरक्षित हो। अगर ये आधार-भूत उद्याग धन्ध जनता क हाथों में छोड़ दिये जायें तो इस वक्त की जनता उनका पूर्ण उपयोगिता ल ले और भविष्य में हान वाली जनता के लिए कुछ भी न बचे। ऐसा हालत में सरकार का हस्तक्षेप करना उचित है।

हो। अगर इन दोनों बातों में सुधार होजाय, अर्थात् घर के लोग खाना बनाने की क्रिया में निपुण हो जायें और घर का इन्तजाम अच्छा हो जाय तो बचत के साथ परिवार अधिक सुखी रहेगा। शादी इत्यादि उत्सवों पर ढेर का ढेर भोजन बर्बाद होता है। इस प्रकार कई एक परिवारों में लापरवाही तथा बुरे इन्तजाम के कारण बहुत सी चीजें बरबाद हो जाती हैं। कई एक चीजें ऐसी होती हैं, जैसे शीशा, घड़ी इत्यादि जो कि बहुत सम्हाल कर यथास्थान रखी जानी चाहिए। इन चीजों की उन घरों में, जहाँ ठीक इन्तजाम नहीं है, बहुत तोड़ फोड़ रहती है। इसी प्रकार कपड़ों का क़िस्सा है। अगर कपड़े सम्भाल कर हिफ़ाजत के साथ रखे जायें तो वही कपड़े जो नाकामियाब समझकर फेंक दिये जाते हैं, छः महीने साल भर और चलें। फटे पुराने कपड़े यहाँ तक कि कूड़े करकट की भी कुछ न कुछ उपयोगिता अवश्य होती है। फटे-पुराने चीथड़ों से कागज़ बन जाता है, कूड़े की खाद बन जाती है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को चाहिये कि वह अपनी वस्तुओं की पूर्ण उपयोगिता हासिल करे। इसके लिए सबसे पहले शिक्षा की विशेष आवश्यकता है। शिक्षा इस प्रकार की होनी चाहिए जिससे लोगों में मितव्ययिता फैले और उन्हें बरबादी के भयानक परिमाण की भी जानकारी हो जाय। घरों में वस्तुओं की बरबादी दूर करने के लिए गार्हस्थ्य शास्त्र की शिक्षा की विशेष आवश्यकता है। प्रत्येक गृहिणी को इस शास्त्र में निपुण होना चाहिए। उसको जानना चाहिए कि परिवार में कितने और कैसे सामान

की आवश्यकता है और उस सामान से अधिकतम तृप्ति किस प्रकार हासिल की जा सकती है। इससे घरों में बहुत सी वस्तुओं की बचत होगी और परिवार का रहन-सहन भी पहले से अच्छा हो जायगा।

उपली जलाने से हानि

खेती के लिए खाद बहुत आवश्यक है। गोबर की बहुत अच्छी खाद बनती है। लेकिन भारत के किसान इतने गरीब हैं कि वे गोबर को खेतों में डालने के बदले उसके उपले बनाकर ईंधन का काम चलाते हैं। इससे खेती का बहुत नुकसान पहुँचता है। एक कृषि-शास्त्र विशेषज्ञ का अनुमान है कि अगर सब गोबर का खाद के लिए प्रयोग किया जाय तो भारत की कुल पैदावार उपज और बढ़ जाए। सब गोबर को खाद के लिए बचाने का उत्तम उपाय यह है कि किसानों के लिए ईंधन का कुछ इन्तजाम किया जाय। यह इस तरह हो सकता है कि गाँवों के नजदीक कुछ जमीन जङ्गल के लिए छोड़ दी जाय। इसमें बबूल के वृक्ष लगाये जायें और किसानों को वहाँ से बिना मूल्य लकड़ियाँ लाने की इजाजत दी जाय। इन जङ्गलों से और भी कई फायदे होंगे। एक तो इससे बारिश बढ़ेगी और जंगल के साथ में बहुत सी और चीज़ें भी बनने लगेंगी। इससे बहुत से लोगों को रोजी भी मिलेगी और ग्राम्य लाभ भी होगी।

स्वास्थ्य की बरबादी

इसके बाद स्वास्थ्य की बरबादी पर विचार करना चाहिए।

ऐसे संक्रामक रोगों से जो सरकार और जनता के प्रयत्नों से रोके जा सकते हैं, प्रति वर्ष भारत में लाखों आदमी मर जाते हैं। यदि स्वास्थ्यरक्षा-सम्बन्धी ज्ञान का प्रचार हो और भारतवासी अपना रहन-सहन स्वास्थ्य-सम्बन्धी नियमों के अनुसार करने लगें तो बीमारी बहुत कम हो जाय और मृत्यु-संख्या भी कम हो जाय। भारतवर्ष में बच्चों की मृत्यु-संख्या भी बहुत अधिक है। बच्चों की मौत कम करने के लिए पहले यह आवश्यक है कि बाल-विवाह बन्द कर दिया जाय। माताओं को उचित शिक्षा दी जाय जिससे वे सन्तान-रक्षा का ज्ञान प्राप्त कर सकें। कारखानों के नियम इस प्रकार के बनाये जायँ जिस प्रकार माताओं को अपने बच्चों की परवरिश इत्यादि का उचित अवसर मिले। रहन-सहन की दशा वास्तविक बनाने की कोशिश की जानी चाहिये। चिकित्सा इत्यादि का भी उचित इन्तज़ाम होना चाहिये।

द्रव्य का अपव्यय

द्रव्य का भी बहुत अपव्यय होता है। मादक वस्तुओं के उपयोग के सम्बन्ध में पहले विचार किया जा चुका है। कुछ लोग जुआ खेलकर अपने द्रव्य का अपव्यय करते हैं। जुआ खेलने से किसी पदार्थ की उत्पत्ति तो होती ही नहीं। उसमें किसी प्रकार का आर्थिक लाभ नहीं होता। हाँ, उससे सैकड़ों परिवार बरबाद अवश्य हो जाते हैं। इसलिये प्रत्येक व्यक्ति को चाहिये कि वह जुआ कभी न खेले। सरकार का भी यह कर्तव्य है कि

मुकदमा लड़नेवालों को उचित दंड देकर इस व्यसन से जनता को बचावे। कुछ लोग मुकदमेबाजी में अपने द्रव्य का नाश कर देते हैं। ज़रा-ज़रा सी बातों के लिए अदालतों की शरण लेकर वे अपना द्रव्य बरबाद कर देते हैं। हजारों कुटुम्ब इस मुकदमेबाजी से बरबाद हो चुके हैं। हम लोगों को चाहिए कि जहाँ तक हो सके स्थानीय पंचायतों या पंचों द्वारा अपना झगड़ा तै करने का पूर्ण प्रयत्न करें।

कुछ लोग क्षणिक सुख के लिए बहुत सा रुपया खर्च कर देते हैं, चाहे परिणाम में उससे हानि ही क्यों न हो। विलासिता की वस्तुओं में जितना रुपया खर्च होता है उसका एक बड़ा हिस्सा बरबाद होता है। मान लीजिये, किसी नगर में कुछ आतिशबाजियाँ हुईं, बहुत बढ़िया काम दिया गया। इससे खर्च करनेवाले को क्षणिक सन्तोष अवश्य प्राप्त हुआ। लेकिन अगर समाज की दृष्टि से गणित लो कितनी बरबादी हुई। वही श्रम और वही पूंजी अगर आतिशबाजियाँ, शराब इत्यादि बनाने के बदले अन्न पैदा करने और वस्त्र बनाने में लगायी जाती तो बहुत से लोगों की आवश्यकता पूरी होती। कहाँ क्षणिक सुख, कहाँ आवश्यकता। समाज का जो श्रम और पूंजी खर्च होता है उससे समाज को पूरी उपयोगिता मिलनी चाहिए। अगर न मिले तो समाज की दृष्टि से उतने हद तक उस श्रम और पूंजी की बरबादी हुई।

सरकार भी कभी कभी द्रव्य का अपव्यय करती है। बहुत

मे सरकारी विभागों में इतना अधिक द्रव्य व्यय किया जाता है कि उसमे जनता की बहुत हानि होती है। लड़ाई के अवसरों पर देश के प्राणियों तथा द्रव्य की बहुत बर्बादी होती है। सरकार की नीति इस प्रकार की होनी चाहिये जिससे जनता का अधिकतम लाभ और सुख हो।

जितने प्रकार की बर्बादियाँ इस अध्याय में बतलाई गई हैं अगर इन बर्बादियों में से एक चौथाई भी बचाई जा सकें तो भारतवर्ष में कम से कम पेटभर अच्छा अन्न और पहिनने को अच्छे वस्त्र और रहने को अच्छा मकान सबको प्राप्त हो जाय।

सोलहवां अध्याय

भविष्य का उपभोग और बचत

पिछले अध्याय में वर्तमान आवश्यकताएं तथा उनकी तृप्ति की विवेचना की गई है। इस अध्याय में भविष्य की आवश्यकताएँ तथा उनकी तृप्ति का वर्णन किया जाता है।

अब प्रश्न यह होता है कि उपभोक्ता अपने भविष्य को किस प्रकार से अच्छा और सन्तोषदायक बना सकता है? एक उपाय यह है कि वह अपनी आमदनी का कुछ भाग वर्तमान आवश्यकताओं पर खर्च न करके भविष्य की आवश्यकताओं के लिए बचा कर रखे। इस बचत और उससे प्राप्त होनेवाली आमदनी से वह अपना भविष्य का सुरक्षित बना सकता है। लेकिन कोई मनुष्य तब तक भविष्य के लिए कुछ भी न बचायेगा जब तक उसको इस बात का पूर्ण निश्चय न हो जाय कि भविष्य में उसको इस बचत से अधिक नहीं तो कम से कम उतनी तृप्ति मिलेगी जितनी उसको उस द्रव्य के इस समय खर्च करने में मिलती है। इसलिए पहले यह जान लेना चाहिये कि बचत से और उसको पूंजी रूप में परिणित करने से क्या क्या लाभ हैं।

भविष्य का पूर्णतया ज्ञान नहीं हो सकता। एक मनुष्य

जो इस समय बहुत सम्पन्न है, इस बात को दावे के साथ नहीं कह सकता कि उनके दिन भविष्य में ऐसे ही रहेंगे। कितने ही कारण इस प्रकार अचानक उपस्थित हो जाते हैं कि लखपति व्यक्ति भी रोटी को मुँहताज हो जाता है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति हो सकने वाली दुर्घटनाओं से अपने को सुरक्षित रखना चाहता है। यह तभी हो सकता है जब वह अपनी आमदनी का कुछ भाग वर्तमान आवश्यकताओं की तृप्ति में खर्च न करके भविष्य के लिए बचा रखे।

मनुष्य जब एक तरह के रहन-सहन का अभ्यस्त हो जाता है तो वह रहन-सहन को बनाए रखने की कोशिश करता है। कम से कम वह उस रहन-सहन को नीचे गिरा देना पसन्द नहीं करता। काम करने की उम्र में वह जितना पैदा कर सकता है उतना पैदा करने की उम्मेद उसको बुढ़ापे अथवा बीमारी की अवस्था में नहीं होती। ऐसे मौकों में अपने रहन सहन को बनाये रखने के लिए उसको अपनी आमदनी का कुछ भाग बचाने की आवश्यकता होती है।

कुछ व्यक्ति अपने को समाज के व्यक्तियों से ऊँचा उठाने की गरज से, समाज तथा उसके ऊपर हुकूमत रखने के लिए धन संचित करते हैं। सञ्चित पूँजी से कुछ लोगों को एक विशेष प्रकार का आनन्द और सन्तोष प्राप्त होता है।

बचत से मनुष्य अपनी तथा अपने सन्तान की शारीरिक तथा मानसिक शक्तियों का विकास कर सकता है। अगर कोई

क्योंकि अपने लड़के को इंजिनियर बनाने के लिए जब वह अपनी आमदनी का कुछ अंश व्यय करे तो वह एक प्रकार से पूँजी संचित करता है। अपनी बचत को बैंक में रखने के बजाय वह उसको अपने लड़के पर व्यय करता है, ताकि उसका लड़का उस पूँजी से प्राप्त हुए ज्ञान और योग्यता से भविष्य में स्वयं लाभ उठाये और बुढ़ापे में उसकी मदद भी करे।

यह तो माना हुई बात है कि बिना बचत के पूँजी संचित हो नहीं सकती। और आजकल के युग में बिना पूँजी के उत्पत्ति नहीं हो सकती। अगर मनुष्य बचाना छोड़ दें और जन-संख्या इसी हिसाब से बढ़ता जाए, तो एक समय ऐसा आजायगा जब देश में पूँजी बहुत कम हो जायगी और पदार्थों की उत्पत्ति की वृद्धि रुक जायगी। इससे उपभोग और रहन-सहन में क्या असर पड़ेगा इसको बताने की आवश्यकता नहीं है।

इन सब बातों के अलावा मनुष्य अपनी सन्तान के वास्ते कुछ धन, दौलत छोड़ जाने की इच्छा से, तीर्थ-यात्रा करने के विचार से, दान-पुण्य इत्यादि के लिए भी धन बचाते हैं।

अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि मनुष्य को अपनी आमदनी में से कितना हिस्सा भविष्य के उपयोग के लिए बचाना चाहिये।

इस अध्याय में यह बतलाया जा चुका है कि अगर कोई मनुष्य अपने द्रव्य से अधिकतम तृप्ति प्राप्त करना चाहता है तो उसको विविध पदार्थों में इस प्रकार व्यय करना चाहिये,

जिससे प्रत्येक पदार्थ पर खर्च हुए अन्तिम रुपये की उपयोगिता लगभग बराबर हो। उस अध्याय में सुगमता के लिए केवल वर्तमान आवश्यकताओं पर विचार किया गया था। लेकिन द्रव्य केवल वर्तमान आवश्यकताओं की तृप्ति के लिए ही नहीं, परन्तु भविष्य की आवश्यकताओं की तृप्ति के काम में भी आता है।

द्रव्य के उपयोग में वर्तमान उपभोग तथा भविष्य उपभोग दोनों सम्मिलित हैं। बुद्धिमान मनुष्य अपनी आमदनी का वर्तमान और भविष्य के उपभोग में इस प्रकार विभाजित करेगा जिस तरह उन पर खर्च हुए अन्तिम रुपये की उपयोगिता करीब करीब बराबर हो। लेकिन भविष्य के उपभोग की सीमान्तिक उपयोगिता का अन्दाज लगाना बहुत मुश्किल है। इसके लिए दो बातों का ख्याल अवश्य रखना पड़ता है। पहले तो भविष्य बिलकुल अनिश्चित है। मनुष्य यह नहीं जानता कि वह भविष्य के लिए बचाये हुए द्रव्य का उपभोग कर सकेगा या नहीं। सम्भव है कि वह उस उपभोग के लिए जीवित ही न रहे। दूसरी बात यह है कि भिन्न भिन्न मनुष्यों की प्रकृति के अनुसार तथा समय और परिस्थिति में बदलाव होने से वर्तमान और भविष्य के सुख सम्बन्ध में बहुत फरक पड़ जाता है। एक मनुष्य जो कि अपने भविष्य को देख सकता है वर्तमान उपभोग की तथा थोड़े समय बाद होने वाले उपभोग की उपयोगिता करीब करीब बराबर समझेगा। परन्तु एक दूसरा मनुष्य जिसको दूर दृष्टि नहीं हो, जो अधीर और असंयमी हो, उसको भविष्य के उपभोग की

जाता है। उपभोग भविष्य में जितना अधिक स्थगित किया जायेगा उतनी ही उसकी उपयोगिता वर्तमान काल में कम मालूम पड़ेगी और बट्टा बढ़ जायगा। इस बट्टे की दर भिन्न भिन्न मनुष्यों की भिन्न भिन्न समय में अलग अलग होगी। मामूली तौर पर हम इस बट्टे की दर का माप सकते हैं। इसके लिए हमको दो बातें माननी पड़ेंगी। पहली तो यह कि मनुष्य की आर्थिक अवस्था भविष्य में वैसी ही रहेगी और दूसरी यह कि द्रव्य से भविष्य में खरीदे गये पदार्थों की उपयोगिता से उसको समान तृप्ति प्राप्त होगी। इन दोनों बातों को ध्यान में रखते हुए अगर कोई मनुष्य इस साल ५०) रु० इस खयाल से बचाये कि उसको एक साल बाद ५६) रु० मिलें, तो वह भविष्य की उपयोगिता पर १२ प्रति शत प्रति वर्ष बट्टा लगाता है।

जिस दर से मनुष्य भविष्य की उपयोगिता पर बट्टा लगाते हैं उससे उनकी भविष्य के लिए धन बचाने की इच्छा का मालूम होती है। परन्तु इसके साथ ही साथ उससे मनुष्य के उन वस्तुओं के खरीदने की इच्छा भी मालूम होती है जिनसे धीरे धीरे बहुत समय तक तृप्ति मिलती है। जो मनुष्य धैर्य हीन और अदूरदर्शी होता है वह ऐसी वस्तुओं में खर्च करता है जिनसे शीघ्र ही अचिरस्थायी तृप्ति प्राप्त हो जाती है। ऐसा मनुष्य चटकीली, भड़कीली और शीघ्र नाशवान् पदार्थों का अधिक पसन्द करता है। ५०) रु० में साइकिल खरीदने के बदले वह ५०) रु०

की एक पाई के खर्च को अधिक पसन्द करेगा। ऐसे मनुष्यों के लिए भी हम कह सकते हैं कि वे लोग भविष्य के उपभोग का मूल्य बहुत कम समझते हैं।

प्रत्येक मनुष्य को भविष्य की दुर्घटनाओं के लिए अपने को तैयार रखना चाहिए। न मालूम कब बुरे दिन आ जावें। यहाँ तक कि अगर मनुष्य को यह निश्चय हो कि भविष्य में उसको बचत से कम सूद मिलेगी तब भी उसको कुछ न कुछ भविष्य के लिए अवश्य बचाना चाहिए। यह बचत गढ़ा गाड़ कर रख नहीं देना चाहिए और न उसके आभूषण बनवा लेना चाहिए, बल्कि ऐसे व्यवसायों में लगाना चाहिए जिससे सूद और आमदनी हो। पूँजी लगाने का सवाल उतना ही मुख्य है, जितना पूँजी बचाना।

अच्छा उपयोग है। इससे पूँजी भी सुरक्षित रहती है और आमदनी भी अच्छी होती है। सब से बड़ी बात यह है कि जन-संख्या की वृद्धि से साधारणतः ज़मीन की क़ीमत बढ़ती रहती है।

वृद्धावस्था के समय तथा अपने आश्रितों की सहायता के लिए प्रत्येक व्यक्ति को जहां तक हो सके अपने जीवन का बीमा भी करा लेना चाहिये। इसकी किश्त समय पर चुकाने के लिए अपने खर्च में बचत भी बराबर होता जायगी और इस बचत का उपभोग भी उचित रीति से होगा। बीमा की अवधि समाप्त होने पर वृद्धावस्था में बीमा करानेवालों का अथवा बीच में मृत्यु हो जाने पर आश्रितों को बीमा की निर्धारित रकम मिल जायगी, जिससे उनका एक बड़ा आर्थिक संकट दूर हो जायगा।

भारतवर्ष के अधिकांश निवासी अपना पेट ही बड़ी मुश्किल से भर सकते हैं, उनसे बचत की क्या उम्मेद की जा सकती है। पश्चिमी अर्थशास्त्रज्ञों का ख़याल है कि भारतवर्ष में बहुत सा धन गड़ा हुआ है। शायद प्राचीन काल में यह बात सच रही हो। परंतु अब इस प्रकार के धन का परिमाण बहुत अधिक नहीं है। हां, आभूषणों के रूप में बचत का बहुत सा रुपया अवश्य लगा हुआ है इस धन का उचित उपयोग होना बहुत आवश्यक है। जब भारत में प्रति मनुष्य इतनी कम आमदनी है जिसमें मनुष्य का निर्वाहमात्र मुश्किल से हो पाता है तो यह बचत

और पूँजी किस तरह मदद कर सकती है। पूँजी बढ़ाने का अच्छा यही उपाय है कि प्रति मनुष्य आमदनी में वृद्धि हो। इसी लिए यह आवश्यक है कि देश में वस्तुओं की उत्पत्ति बढ़ाई जाय और आय का वितरण इस भांति हो जिससे सब को उचित हिस्सा मिले।

प्रत्येक ऐसे व्यक्ति को जिसे अन्न और वस्त्र का कष्ट नहीं है अपनी आमदनी के कम से कम दसवें हिस्से की प्रति वर्ष बचत करने का पूर्ण रूप से प्रयत्न करना चाहिये। इस बचत के कारण वह संकट के समय कर्जदार होने से बच जायगा और वह हमेशा सुखी रहेगा।

सत्रहवाँ अध्याय

सहकारी उपभोग-समितियाँ

आजकल सब लोग उपभोग की अधिकांश वस्तुओं को मोल लेते हैं। उपभोक्ता इन वस्तुओं को एकदम उन वस्तुओं के उत्पादकों से नहीं खरीदता है। वह इन वस्तुओं को व्यापारियों से, दूकानदारों से, फेरीवालों से खरीदता है। इसका परिणाम यह होता है कि उसको वस्तुएँ अधिक क़ीमत पर मिलती हैं, क्योंकि उत्पादकों और उपभोक्ताओं के बीच में जितने भी दलाल होते हैं, वे कुछ न कुछ मुनाफ़ा अवश्य लेते हैं, और यह सब मुनाफ़ा उस वस्तु की क़ीमत के रूप में उपभोक्ताओं को देना पड़ता है। इससे उपभोक्ताओं को हानि होती है। जितना रुपया उनको दलालों को देना पड़ता है, उतना रुपया यदि वे बचाकर अपने ऊपर खर्च कर सकें तो उनका रहन-सहन सुधर सकता है। इन दलालों की वजह से उपभोक्ता लोग उत्पादकों से बिलकुल अलग से हो गए हैं। उनसे कुछ सीधा सम्बन्ध नहीं रह गया है। उत्पादक बहुधा उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं को अच्छी तरह नहीं जानता और कभी कभी वह बाज़ार को ऐसी वस्तुओं से भ

गया है जिनकी आवश्यकता बहुत कम होती है। उसमें कुछ बर्बादी भी होती है।

आजकल चीजों में बहुत मिलावट रहती है। असली चीज पहचानना बहुत मुश्किल हो जाता है। खासकर झूठे विज्ञापनों द्वारा बहुत से लोग ठगे जाते हैं। उपभोक्ता एक वस्तु को कुछ समझकर खरीदता है, वह वस्तु उपभोग करने पर दूसरी ही मालूम होती है। इन सब बातों से उपभोक्ता को बहुत नुकसान उठाना पड़ता है और उसके रहन-सहन पर भी बुरा असर पड़ता है।

उपर्युक्त अधिकांश बुराइयाँ सहकारी उपभोग समितियों द्वारा दूर की जा सकती हैं। बहुत से उपभोक्ता—जिनमें कुछ समता हो, अर्थात् एक शहर के हों, एक गाँव के हों, अथवा एक पेशे के हों, इत्यादि—आपस में एकत्रित होकर अपनी एक सहकारी समिति बना लेते हैं। समिति के सदस्य कुछ पूँजी जमा करके एक कोष बना लेते हैं। इस पूँजी में से अपना सारा व्यापार चलाते हैं और उन कामों को करने में समर्थ हो जाते हैं जिनको एक अकेला आदमी कभी भी नहीं कर सकता।

एकता में बहुत बल है। एकता से शक्ति, उपभोग इत्यादि सबके कार्य में बड़ी सहायता मिलती है। इस अध्याय में हम पहले इस बात पर विचार करते हैं कि एकता और सहकारिता का उपभोग और रहन-सहन पर क्या असर पड़ता है।

जब कुछ उपभोक्ता लोग आपस में मिलकर एक सहकारी

इसलिए ऐसे स्थानों में पहला तरीक़ा ही अधिक उपयोगी मालूम होता है।

दूसरा तरीक़ा शहर के लिए अधिक उपयोगी होता है। शहर में लोग इधर उधर फैले रहते हैं, उनकी आवश्यकताएं भी भिन्न भिन्न और अधिक होती हैं। इसलिए यहाँ पर सहकारी दुकान खोलना ही ठीक मालूम देता है। इसके अलावा शहर के लोगों का मिजाज़ इस तरह का होता है कि अगर समिति बार बार उनसे उनको आवश्यकता की वस्तुओं के बारे में पूछे तो वे बहुत चिड़चिड़े हो जाते हैं। इसलिए अच्छा यही है कि उन लोगों की रुचि और आवश्यकताओं के योग्य वस्तुओं की दुकान स्थापित कर दी जाय।

सहकारी उपभोग समिति की साख बहुत बड़ी होती है, इस लिए किसी समय अगर समिति के पास धन की कमी भी पड़ जाय, तो यह वस्तुओं को उधार भी ख़रीद सकती है। इसके अलावा यह सहकारी बैंक महाजनों से अथवा अन्य बैंकों से आसानी से कम सूद पर रुपया उधार ले सकती है। इससे समिति का कार्य धन के बिना रुकने नहीं पाता।

उपभोक्ताओं को उपभोग-समिति से बहुत लाभ होते हैं। सबसे पहले उनके समय की बचत होती है। अगर समिति की दुकान न हो, तो प्रत्येक उपभोक्ता को बाज़ार जाकर अपनी आवश्यकताओं की वस्तु के लिए इधर उधर भटकना पड़े। समिति के द्वारा उनको घर बैठे ही सब वस्तुएं मिल सकती हैं।

जाता है, वस्तुतः वह उपभोक्ताओं के पास ही रह जाता है।

चूंकि समिति के कार्यकर्ता चतुर व्यक्ति हो चुने जाते हैं इसलिये ये लोग इस बात को जानने में अधिक समर्थ होते हैं कि कौनसी वस्तु कहाँ अच्छी और सस्ती मिल सकती है। साधारण मनुष्यों से इन लोगों को वस्तु की अधिक पहचान होती है। इसलिए इन लोगों के द्वारा खरीदने पर मिलावट की वस्तुओं के बारे में आने की सम्भावना बहुत कम रहती है।

यह समिति दो तरीक़ों से उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं को पूरी कर सकती है। पहिला तरीक़ा यह है कि समिति किसी काल विशेष के लिए लोगों की आवश्यकताओं की वस्तुओं की सूची बनाती है, और फिर उन वस्तुओं को मँगाकर उन लोगों में बाँट देती है। दूसरा तरीक़ा यह है कि समिति लोगों की आवश्यकताओं के अनुसार विविध वस्तुएँ गोदाम में इकट्ठा कर लेती है। जिस किसी को किसी वस्तु की आवश्यकता हो, वह उस दूकान से खरीद लेता है।

पहला तरीक़ा उन स्थानों में अधिक उपयोगी होता है जहाँ के लोगों की आवश्यकताएँ कम हों और एक सी हों, और जहाँ एक स्थायी दूकान रखने से पूरा फ़ायदा न हो। देहात के लोग बहुधा अपनी आवश्यकता की वस्तुओं को स्वयं तैयार कर लेते हैं। उन लोगों की आवश्यकताएँ भी अधिक न तरह की होती हैं। वहाँ विविध वस्तुओं की माँग भी इतनी नहीं रहती है कि कोई सहकारी दूकान लाभपूर्वक चल सके।

श्यक है कि ग़रीबों की आमदनी इस प्रकार से बढ़ाई जाय, और इस प्रकार के प्रबन्ध किये जायँ कि ग़रीब लोग आलसी होने के बदले अधिक कार्य-कुशल बनें और अपनी आमदनी अधिक बढ़ाने की कोशिश करें। इन लोगों को इस प्रकार की शिक्षा देनी चाहिये जिससे वे इस बात को अच्छी तरह से समझ जायें कि आमदनी की वृद्धि का सदुपयोग करने से उनको कितना लाभ होगा, और उसका दुरुपयोग करने से कितना भयङ्कर परिणाम होगा। इसलिए यह बात निश्चित है कि अगर सतर्कता से ग़रीबों की आमदनी में वृद्धि की जाय तो देश का उपकार ही होगा।

कुछ लोगों का यह भी कहना है कि धनी लोगों से जो धन लेकर ग़रीबों को दिया जायगा, उसका अधिकांश उनकी बचत अथवा पूँजी में से आवेगा और ग़रीब लोग इस धन को उपभोग के पदार्थों में खर्च कर देंगे। इसलिए देश की पूँजी और उत्पत्ति भी कम होती जायगी। पहले तो इस बात का कोई पक्का सबूत नहीं है कि ग़रीबों को दिया जाने वाला धन बचत अथवा पूँजी में कमी करके आवेगा। यह बात भी मुमकिन है कि धनी लोग अपने ऐशो आराम की कुछ वस्तुओं का उपभोग कम करके इस धन का एक हिस्सा ग़रीबों के लिए निकाल लें। दूसरी बात यह है कि यह धन जो ग़रीबों पर खर्च किया जायेगा, इससे भी भविष्य में देश के लिए पूँजी बन जायगी। बहुत से ग़रीब लोग कार्य-कुशल बन जायँगे, बहुत से बच्चे और नौजवान

श्यक है कि गरीबों की आमदनी इस प्रकार न बढ़ाई जाय, और इस प्रकार के प्रबन्ध किये जायँ कि गरीब लोग आलसी होने के बदले अधिक कार्य-कुशल बनने और अपनी आमदनी अधिक बढ़ाने की कोशिश करें। उन लोगों को इस प्रकार की शिक्षा देनी चाहिये जिससे वे इस बात को अच्छी तरह से समझ जायँ कि आमदनी की वृद्धि का सदुपयोग करने से उनको कितना लाभ होगा, और उसका दुरुपयोग करने से कितना भयङ्कर परिणाम होगा। इसलिए यह बात निश्चित है कि अगर सतर्कता से गरीबों की आमदनी में वृद्धि की जाय तो देश का उपकार ही होगा।

कुछ लोगों का यह भी कहना है कि धनी लोगों से जो धन लेकर गरीबों को दिया जायगा, उसका अधिकांश उनकी बचत अथवा पूँजी में से आवेगा और गरीब लोग इस धन को उपभोग के पदार्थों में खर्च कर देंगे। इसलिए देश की पूँजी और सम्पत्ति भी कम होती जायगी। पहले तो इस बात का कोई पक्का सबूत नहीं है कि गरीबों को दिया जाने वाला धन बचत अथवा पूँजी में कमी करके आवेगा। यह बात भी मुमकिन है कि धनी लोग अपने ऐशो-आराम की कुछ वस्तुओं का उपभोग कम करके इस धन का एक हिस्सा गरीबों के लिए निकाल लें। दूसरी बात यह है कि यह धन जो गरीबों पर खर्च किया जावेगा, इससे भी भविष्य में देश के लिए पूँजी बन जायगी। बहुत से गरीब लोग कार्य-कुशल बन जायँगे, बहुत से बच्चे और नौजवान

लोग जो आवारा फिरा करते हैं वे सुशिक्षित, साहसी और हृष्ट पुष्ट बन जायेंगे। क्या य देश की पूंजी नहीं है? इन सब बातों का कुल परिणाम यह होगा कि जितना धन गरीबों पर इस वक्त खर्च किया जायगा, कुछ सालों में व इससे कई गुना अधिक फल देंगे।

गरीब लोगों की आमदनी कई रूप में बढ़ाई जा सकती है। यह बात आवश्यक नहीं है कि उनको धन के रूप में ही सहायता दी जाय। सरकार बहुत सी वस्तुओं में कर लगा कर अथवा सहायता देकर इस प्रकार का प्रबन्ध कर सकती है कि धनी लोगों के उपभोग की वस्तुओं का मूल्य बढ़ जाय और गरीब लोगों के उपभोग की वस्तुओं का मूल्य घट जाय। इसके अलावा सरकार विद्यालय, वाचनालय, औषधालय इत्यादि स्थान स्थान पर स्थापित कर इन लोगों को बिना मूल्य इनसे उपयोग करने की आज्ञा देकर इन की सेवा कर सकती है।

इसी प्रकार सरकार और पूंजीपति इस प्रकार का काम स्थापित कर सकते हैं जिनसे व बेकार लोग, जो काम करना चाहते हैं और उनको काम नहीं मिलता तथा अपाहिज लोग धन्धों में लगने पावें।

धनी लोग अनेक प्रकार से गरीब लोगों का उपकार कर सकते हैं। बहुत से गरीबों को धन दे सकते हैं। इसके अलावा वे उनको भोजन, वस्त्र, इत्यादि आवश्यक पदार्थों से सहायता कर सकते हैं। प्राचीन काल में भारतवर्ष में यह रिवाज

बहुत प्रचलित था। पुत्रोत्पत्ति के समय, विवाह के समय और भी शुभ अवसरों में धनी लोग ब्राह्मणों को, निर्धन लोगों को धन, वस्त्र, इत्यादि दान दिया करते थे। जो कोई अच्छा पण्डित, कवि, गायक होते थे वे भी उचित रूप से पुरस्कृत किये जाते थे। भूकंप, दुर्भिक्ष इत्यादि कष्टों के अवसरों पर अन्न वस्त्र बांटे जाते थे। ऐसे कष्टों के अवसरों पर यज्ञ इत्यादि धार्मिक कर्म किये जाते थे और बहुत सा धन लोगों में बांटा जाता था।

आजकल इस प्रथा का लोप सा हो गया है। किसी किसी धार्मिक स्थान या तीर्थ में सदावर्त का नाम सुनाई पड़ता है। आजकल के धनी लोग ऐसी बातों पर बहुत कम विश्वास करते हैं। जो लोग गरीब लोगों का धन ले लेकर धनी बनते हैं उनसे क्या यह उम्मेद की जा सकती है कि वे गरीबों को धन वापिस कर देंगे। अगर ऐसा ही होता तो वे उनसे धन लेते ही क्यों। हां, इस धन से ये लोग आलीशान भोज देते हैं, मोटरकार खरीदते हैं और गुल छर्रे उड़ाते हैं।

यहां पर यह बतलाने की आवश्यकता नहीं है कि धनी लोग अपने धन को बिना कुछ सोच समझे गरीब लोगों में बांट दें। इस तरह बांटने से अनिष्ट होने की आशङ्का है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि अगर बिना किसी अच्छे इन्तज़ाम और निरीक्षण के गरीब लोगों को धन दे दिया जाय तो सम्भव है कि वे लोग अपना समय आलस्य में बितावें। भारतवर्ष में

भिखारियों की संख्या बहुत ही अधिक है। इनमें से अधिकांश ऐसे लोग हैं जो कार्य करके अपना निर्वाह कर सकते हैं। लेकिन इनको मांगने की आदत ऐसी खराब पड़ गई है कि वे लोग एक-दो दिन भूखे तक पड़े रहते हैं लेकिन काम कुछ नहीं करते। इसका कारण यह है कि इन लोगों को बिना कुछ मांगे भिक्षा दे दी जाती है और इसका भयङ्कर परिणाम होता है। किसी प्रकार की भी सहायता करनी हो तो वह स्थान, काल, पात्र को देख कर करनी चाहिए। श्रीमद्भगवद्गीता में भी भगवान ने कहा है कि उचित स्थान में, उचित समय में तथा सत्पात्र व्यक्ति के लिए जो दान दिया जाता है वह दान सात्विक कहलाता है। इसके विपरीत अनुचित स्थान में, अनुचित समय में, कुपात्र व्यक्तियों को जो दान दिया जाता है वह तामस-दान कहलाता है।

सहायता इस प्रकार से की जानी चाहिए कि उसका परिणाम शुभ हो। अगर अकाल के समय अथवा और किसी संकट के समय जमींदार लोग लगान मुआफ कर दें या कम कर दें तो यह उचित समय की सहायता होगी। इसी तरह यदि कोई धनी मनुष्य ऐसे स्थान में, जहां पानी का बहुत कमी है एक कुआं खुदवा दे, या जहां बहुत से लोग उसपार जाया करते हों वहां एक नदी के किनारे पुल बनवा दे। इसी प्रकार दान या सहायता में समय, स्थान, पात्र का विचार कर लेना चाहिए कि दान पाने वाला किस मनुष्य को दी जा रही है।

धनी लोगों को चाहिये कि वे इस प्रकार के काम-धन्धों का आयोजन करें, जिनसे देश का अधिकतम कल्याण हो। यह बात तो मानी हुई है कि द्रव्य देकर ग़रीबों की सहायता करने से देश का अधिक कल्याण नहीं हो सकता है। इसलिए इन लोगों को द्रव्य न देकर उस द्रव्य से इस प्रकार के काम करने चाहिये जिसके अन्त में (भीतर ही भीतर) ग़रीब लोगों की सहायता हो जाय। अगर स्थान स्थान पर इस प्रकार की पाठशालाएं खोल दी जायँ जहाँ कि ग़रीब लोगों के बच्चे निःशुल्क पढ़ सकें तो इसका परिणाम यह होगा कि भविष्य की जनता सुशिक्षित और कार्य कुशल होगी। इसी प्रकार धनी लोगों को चाहिये कि जगह जगह पुस्तकालय खुलवा दें। जिस जगह पानी की कमी हो वहां कुएँ खुदवायें अथवा प्याऊ का इन्तज़ाम कर दें। मुसाफिरों के लिए धर्मशालाएं बनवा दें। इसी प्रकार के कितने ही ऐसे कार्य हैं जिनमें रुपया खर्च करने का अन्त में वही परिणाम होता है, जो ग़रीबों को धन देकर सहायता करने से हो सकता है। बल्कि कभी कभी उससे भी अच्छा परिणाम होता है।

इस तरह से धन धनी लोगों के पास से ग़रीब लोगों के पास पहुँचेगा उसका कुल परिणाम यह होगा कि राष्ट्रीय आय में वृद्धि हो जायगी। धनी लोग इस धन के अधिकांश भाग को विलासिता तथा आराम की वस्तुओं के खरीदने में खर्च कर देते हैं। लेकिन जब यह धन शिक्षा, स्वास्थ्य इत्यादि के रूप में ग़रीब जनता के पास पहुँचता है तो

यह निश्चय है कि भविष्य की जनता इस अवस्था में पहुँच जायगी कि वह अपनी टाँगों पर खुद खड़ी हो सकेगी, और देश में सुख, शान्ति और समृद्धि का विकास होने लगेगा। देश के उत्थान के लिये प्रत्येक धनी व्यक्ति को चाहिये कि वह अपने आमदनी का कम से कम दसवाँ भाग दान देने के लिये अलग रखता जाय और उचित समय पर उसका उचित रीति से उपयोग करे। इससे देश को बहुत लाभ होगा।

उन्नीसवां अध्याय

सदुपभोग और दुरुपभोग

इस अध्याय में यह बतलाने का प्रयत्न किया जाता है कि वस्तुओं का सदुपभोग और दुरुपभोग किस प्रकार होता है।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है किसी वस्तु अथवा सेवा का यथार्थ में तभी उपभोग होता है जब कि उससे सन्तोष और तृप्ति प्राप्त हो। सन्तोष और तृप्ति मानसिक हैं। सब मनुष्यों को एक ही प्रकार या वस्तुओं के उपभोग से बराबर तृप्ति या सन्तोष नहीं मिलता। लेकिन इस बात में कुछ भी सन्देह नहीं है कि सन्तोष का सभी मनुष्यों के जीवन के साथ गहरा सम्बन्ध है। सन्तोष जीवन के मुख्य ध्येयों में से एक ध्येय समझा जाता है और प्रत्येक मनुष्य इसको प्राप्त करना चाहता है। जिस देश के लोग संतुष्ट रहते हैं वह देश हमेशा शक्तिवान् और समृद्धिवान् रहता है।

उपभोग और सन्तोष का जो सम्बन्ध है उसका वर्णन तीसरे अध्याय में किया जा चुका है। उसमें यह भी बतलाया जा चुका है कि आवश्यकताओं को अपने वश में करने से क्या क्या लाभ होते हैं।

भारतवर्ष में दुरुपभोग भयानक रूप में फैल गया है। एक समय वह था जब यहाँ के निवासियों का आदर्श यह था कि आवश्यकताओं को परिमित रखा जाय, जीवन सादगी के साथ बिताया जाय, लेकिन ध्येय हमेशा ऊँचा रहे। उस समय लोग थोड़े में सन्तोष करते थे। तब देश में सुख, शान्ति और समृद्धि का राज्य था। आजकल पश्चिमी सभ्यता के संसर्ग से यहाँ के लोगों ने अपने को इच्छाओं का दास बना लिया है। इन लोगों को यह विश्वास हो गया है कि जितनी अधिक उनकी इच्छाएँ होंगी, उतना ही अधिक वे लोग सभ्य कहलावेंगे। प्राचीन काल के ऊँचे विचार और आदर्श सब लुप्त हो चले हैं। निर्धन, धनी, राजा, रङ्क सब को धन की हाय हाय पड़ी हुई है। देश में सर्वत्र अशान्ति और असन्तुष्टता फैली हुई है।

प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह अपनी आवश्यकताओं का इस प्रकार से नियमन करे, जिससे उसका, समाज का और देश का भी कल्याण हो। यह तभी हो सकता है जब कि लोग दुरुपभोग को छोड़ दें और सदुपभोग को ग्रहण करें।

जो लोग दुरुपभोग के अभ्यस्त हो चुके हैं वे कहते हैं कि अब उनकी आदतें छूट नहीं सकतीं। लेकिन यह उनकी सरासर भूल है। सच्चे दिल से प्रयत्न करने से बुद्ध भी असम्भव नहीं है। हाँ, प्रारम्भ में अवश्य ही कष्ट मालूम होगा, लेकिन यह कष्ट बहुत काल तक नहीं होगा। जिस समय दुर्व्यसन मनुष्य से छूट जायेगा उसी समय उसको बहुत शान्ति और सन्तोष प्राप्त होगा,

केवल उन इच्छाओं के लिए कही जा रही है जो कि स्वाभाविक नहीं हैं, परन्तु जिनको मनुष्य संसर्ग अथवा किसी और प्रकार से उत्पन्न कर लेता है। आवश्यकताएं तो असीम होती हैं, और बढ़ती जाती हैं, इसलिए कोई भी मनुष्य यह नहीं कह सकता है कि यह मेरी अन्तिम आवश्यकता है और इसके बाद मुझको और कोई आवश्यकता नहीं होगी। अगर मनुष्य अपने को इच्छाओं के समुद्र में बहा दे तो फिर उसको कष्ट ही अधिक मिलेगा। इससे अच्छा तो यही है कि मनुष्य मनोनिग्रह और इन्द्रियनिग्रह द्वारा अपनी आवश्यकताओं का नियमन करे।

जहां आवश्यकताओं का नियमन हुआ कि सदुपभोग शुरू हो जाता है। सदुपभोग के साथ-साथ उसके अनुगामी सुख, सन्तोष, शान्ति और समृद्धि स्वयं ही आ उपस्थित होते हैं।

अगर भारतवर्ष के लोग निरर्थक की हाय हाय को छोड़ कर, अपनी इच्छाओं को अपने वश में करके, दुरुपभोग को छोड़ कर सदुपभोग ग्रहण करें, तो जो अशान्ति, असन्तुष्टता देश में फैली हुई है उसका बहुत कुछ अंश में आसानी से निवारण हो जाय।

हिन्दू धर्मशास्त्र में लिखा है कि जो द्रव्य अधर्म या बेईमानी से प्राप्त किया जाता है उसका सदुपभोग नहीं हो सकता। वह दुरुपभोग द्वारा ही प्रायः नष्ट हो जाता है। इससे मनुष्य की खर्च करने की आदत भी बिगड़ जाती है। अपनी आदत के बिगड़ने से अन्त में मनुष्य बरबाद हो जाता है। इसलिए प्रत्येक

व्यक्ति को धर्म पूर्वक ईमानदारी से ही द्रव्य प्राप्त करने का यत्न करना चाहिये । प्रत्येक व्यक्ति को ईमानदारी से भाग्यानुसार जो कुछ द्रव्य मिल जाय उसे न्यायपूर्वक लगाना चाहिये और अपनी इच्छाओं को वश में करके उस द्रव्य का सदुपभोग करना चाहिये। इससे उसे यह शांति और सुख प्राप्त होगा जो धनवान व्यक्तियों को भी दुर्लभ है।

भारतवर्षीय हिन्दी अर्थशास्त्र परिषद्

(सन् १९२३ ई० में संस्थापित)

सभापति—

श्रीयुत पंडित दयाशंकर दुबे एम्० ए०, एल्-एल्० बी० अर्थशास्त्र अध्यापक, प्रयाग विश्वविद्यालय, प्रयाग।

मन्त्री—

(१) श्रीयुत भगवतीप्रसादजी गुप्त, एम्० ए०, बी० कॉम०, एस० एस० कालेज, पंडौली।
(२) साहित्यरत्न पंडित उदयनारायण जी त्रिपाठी एम्० ए० अध्यापक, दारागंज हाइस्कूल, दारागंज प्रयाग।

इस परिषद् का उद्देश्य है जनता में हिन्दी-द्वारा अर्थशास्त्र का ज्ञान फैलाना और उसका साहित्य बढ़ाना। कोई भी सज्जन १) प्रवेश शुल्क देकर इस परिषद् का सदस्य हो सकता है। जो सज्जन इस कम से कम १००) की आर्थिक सहायता देते हैं, वे इसके संरक्षक समझे जाते हैं। प्रत्येक सदस्य और संरक्षक को परिषद् द्वारा प्रकाशित या संपादित पुस्तकें पौन मूल्य पर दी जाती हैं।

परिषद् की संपादन-समिति द्वारा सम्पादित होकर निम्न लिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं —

(१) भारतीय अर्थशास्त्र (दो भाग)। (गंगा ग्रंथागार, लखनऊ)
(२) विदेशी विनिमय „ „
(३) अर्थशास्त्र शब्दावली (भारतीय ग्रंथमाला, वृन्दावन)
(४) कौटिल्य के आर्थिक विचार। „ „
(५) संपत्ति का उपभोग (साहित्य-मंदिर, दारागंज, प्रयाग)
(६) हमारे हरिजन (गरुडध्वजसदन, दारागंज, प्रयाग)

हिन्दी-काव्य की कोकिलाएँ

लेखक

श्रीयुत गिरिजादत्त शुक्ल बी० ए०

श्रीयुत ब्रजभूषण शुक्ल, विशारद

इस पुस्तक में क्या-क्या है—

(१) हिन्दी-काव्य में जब से स्त्री-कवियों की कोमल लेखनी का मृदुल स्पर्श हुआ है, तब से लेकर अब तक की समस्त प्रतिभा शालिनी स्त्री-कवियों की मनोमोहक कविताओं का यह सुन्दर संकलन है।

(२) संकलन के सिवाय इसमें संगृहीत कविताओं की समीक्षा भी की गई है। किस स्त्री-कवि की कविता में क्या-क्या विशेषताएं हैं, उसकी शैली कैसी है, उसकी भाषा में क्या चमत्कार है, मानव जीवन के अन्तराल में लहरानेवाली भावनाओं के सम्बन्ध में किस कवयित्री ने क्या-क्या लिखा है—मिलन विच्छेद, हास्य, वात्सल्य, प्रकृति-सौन्दर्य्य, अरमानों की दुनियाँ, दुखियों की कुटिया, त्याग की लँगोटी और जीवन के श्मशान में इन स्त्री कवियों के काव्य कौशल की कहाँ तक गति है, इत्यादि बातें आप इस पुस्तक में पायेंगे।

(३) प्रत्येक स्त्री कवि का साहित्यिक परिचय भी दिया गया है।

धर्म-ग्रन्थावली, दारागञ्ज, प्रयाग की

धार्मिक, लोकोपयोगी, सस्ती, सचित्र बढ़िया पुस्तकें

१—नर्मदा परिक्रमा—(नर्मदा रहस्य का प्रथम भाग) पचासों सुन्दर उपयोगी दर्शनीय चित्रों से युक्त, वेदशास्त्र सम्मत श्री नर्मदा जी का सुन्दर वर्णन। नर्मदा परिक्रमा के नक्शे, परिक्रमा मार्ग सहित सजिल्द पुस्तक का मूल्य २) दो रुपया।

२—श्री नर्मदा परिक्रमा मार्ग—श्री नर्मदा जी की परिक्रमा करनेवालों के लिये उपयोगी नक्शा और मार्ग सहित मूल्य ।)

३—भारत के तीर्थ (प्रथमखंड) प्रस्तुत पुस्तक में प्रयाग, चित्रकूट अयोध्या, काशी, वैद्यनाथ धाम और गया का सचित्र ऐतिहासिक और पौराणिक वर्णन सुन्दर भाषा में लिखा गया है। पुस्तक संग्रहणीय और परमोपयोगी है। मूल्य सजिल्द का १।)

४—चार धाम—जगन्नाथ, रामेश्वर, द्वारका और बद्रीनाथ का ऐतिहासिक, पौराणिक सचित्र वर्णन। मूल्य १)

५—सप्त पुरी—अयोध्या, मथुरा, हरिद्वार, काशी, कांची, उज्जैन और द्वारका का ऐतिहासिक और पौराणिक सचित्र वर्णन। मूल्य १॥)

६—भक्त चरित माला—में भगवद्भक्तों का सचित्र रोचक वर्णन सरस भाषा में लिखा गया है। अभी—मीरा, भक्त ध्रुव, प्रह्लाद, सूरदास के चरित्र व पद प्रकाशित हो चुके हैं। प्रत्येक का मूल्य ≈) छै आना।

७—अवतार माला—में श्रीरामचन्द्र, कृष्णचन्द्र और बुद्ध के अवतार की अलग २ कथा सचित्र लिखी गई है। प्रत्येक का मूल्य [illegible] आना। [illegible] भागों का सब पुस्तकें पौने मूल्य [illegible]

धनकुबेर कारनेगी

लेखक —
श्री अशर्फी मिश्र बी० ए०

प्रकाशक—
बैजनाथ केडिया
प्रोप्राइटर –
हिन्दी पुस्तक एजेन्सी
१२६ हरिसन रोड,
कलकत्ता।

मुद्रक—
किशोरीलाल केडिया,
वणिक प्रेस,
1, सरकार लेन, कलकत्ता।

निवेदन

संसारमें उन्नति करनेका मूलमंत्र है 'महत्त्वाकांक्षा'। महत्त्वाकांक्षी होना ही सफलताकी तरफ बढ़ना है। संसारमें जितने महापुरुष हुए हैं, सबकी सफलताका यही मूलमंत्र रहा है।

धनकुबेर कारनेगीके जीवन और उनके प्रत्येक कार्यसे यही शिक्षा मिलती है कि एक ग़रीब मज़दूरके घरमें पैदा होकर भी जिस आश्चर्यजनक ढंगसे धीर धीरमतीसे सफलता प्राप्त की वह प्रत्येक नवयुवकके लिए अनुकरणीय है।

जहां यह चरित्रनायक अपने परिश्रम अध्यवसाय और महत्त्वाकांक्षासे दरिद्रसे धनी हुआ और नवयुवकोंके लिये एक आदर्श छोड़ गया वहां धनी मानी सज्जनोंके लिये भी "धन" और "दान" के सदुपयोगका आदर्श छोड़ गया। धन कमाना तो मुश्किल काम है ही परन्तु धनवान होकर धनका सदुपयोग करना बहुत ही मुश्किल है।

इस चरित्रसे जहां नवयुवकोंको शिक्षा मिलती है वहां हमारे भारतके धनी मानी सज्जनोंको भी शिक्षा मिलती है। कारनगीके जीवनसे धनके उपयोगका जो उदाहरण मिलता है वह अनुकरणीय है।

इन्हीं गुणोंपर मुग्ध होकर हम अपने प्रेमी पाठकोंके सामने इस आदर्श जीवनीको रखनेके लिये बाध्य हुए हैं। और आशा करते हैं कि इस जीवनीसे प्रत्येक मनुष्य शिक्षा ग्रहण करेगा।'

भवदीय—
प्रकाशक

दिमाग़तक बोझ रखना होगा। इस साहित्यको देश-विदेशके महानुभावोंकी शूरता-वीरता भरी कहानियोंसे सजाना होगा इस साहित्यको देश देशके वाणिज्य-व्यापारके वर्णनसे सुशोभित करना होगा, इस साहित्यका खजाना उद्योगधन्धोंकी किताबोंसे भर देना होगा। तब कहीं देशके नवयुवकोंके मनमें वे विचार, वे लालसायें उत्पन्न होंगी जिनको पूरा करनेके लिये कठिनसे भी कठिन श्रमसाध्य उद्योगपर तुल जानेको वे हमेशा तैयार रहेंगे।

प० अपर्णी मिश्रके इस उद्योगको—इस कारनेगी-चरित्रचित्रणको—मैं इसी प्रकारसे देखता हूं। आशा करता हूं यह एक नया ज़माना खड़ा करेगा। आशा करता हूं हिन्दीके नवयुवक लेखक फिरसे कहानियोंसे मुंह मोड़ेंगे और ऐसी ऐसी किताबें लिखेंगे जिससे लोगोंमें उद्योगधन्धोंकी चाह लग जायगी, जिससे कि लोग मेहनत करनेवालोंको नफ़रतकी निगाहसे देखना भूल जायगे और परिश्रम करना तथा अपने हाथों अपनी रोटी कमाना ही जीवनका मुख्य उद्देश्य समझेंगे। क्या वे दिन देखनेको मिलेंगे? देखें, साहित्यिक क्या जवाब देते हैं?

राधाकृष्ण झा

एन्डू कारनेगी

धनकुबेर कारनेगी

प्रथम परिच्छेद

वंशपरिचय

अमेरिकाके प्रसिद्ध धनकुबेर एण्ड्रू कारनेगीका जन्म स्काट-लैण्डके डमफरलिन नामक नगरमें २५ वीं नवम्बर सन् १८३५ ई० को हुआ था। इनके पिता विलियम कारनेगी जुलाहेका काम करते थे। यद्यपि विलियमकी आर्थिक अवस्था अच्छी नहीं थी, पर चरित्र-बलके कारण अपने अड़ोस-पड़ोसके लोगों पर उनकी बड़ी धाक थी। कारनेगीके पितामहका नाम भी एण्ड्रू कारनेगी था और चरित्रनायकका नामकरण पितामहके नामके सदृश ही किया गया।

कारनेगीके पितामह अपने मृदुल स्वभाव और अदम्य उत्साहके कारण अपने ज़िलेमें खूब प्रसिद्ध थे। वे अपने समयमें हँसोड़ोंके सरदार गिने जाते थे। आप दिल्लगीबाज़ भी खूब थे। एकबार ७१ वर्षकी उम्रमें उन्होंने जाड़ेके दिनोंमें भूतका स्वांग बनाकर अपने पड़ोसकी एक बुढ़ियाको डराया था।

बुढ़िया पहले तो डरी, पर थोड़ी देर सोचनेपर उसने कहा—"अरे! यह तो एण्डू कारनेगी है!"

कारनेगीमें अपने पितामहके बहुतसे गुण पाये जाते थे। इन्होंने अपने आत्मचरितमें इस बातको स्वीकार किया है कि उनमें जो कुछ आशावादिता और विपत्तिमें भी हंसमुख बने रहनेकी शक्ति थी, वह उन्हें अपने पितामहसे ही प्राप्त हुई थी। सर्वदा हंसमुख बना रहना एक दुर्लभ गुण है। नवयुवकोंको इस गुणको प्राप्त करनेकी निरन्तर चेष्टा करनी चाहिये। कारनेगीके शब्दोंमें यदि सम्भव हो तो चिन्ताको हंसी-खेलमें ही उड़ा डालना चाहिये। हां, कोई ऐसा कार्य्य नहीं करना चाहिये, जिस से आत्म भर्त्सना सहनी पड़े। हमलोगोंके हृदयमें जिस अन्तरात्माका निवास है, उसे कभी धोखा नहीं दिया जा सकता। अतएव कविवर बर्नके शब्दोंमें हमें अपने जीवनमें इस अमूल्य नियमको सर्वदा स्मरण रखना चाहिये कि "हमें और किसीसे डरनेकी कोई आवश्यकता नहीं है, केवल आत्म-भर्त्सनासे बचे रहनेका उद्योग करते रहना चाहिये।" बालक कारनेगीने इसी आदर्शको अपने जीवनके उषाकालमें ग्रहण किया था।

कारनेगीके मामा टामस मारिसन भी एक प्रसिद्ध व्यक्ति थे। वे 'रजिस्टर' नामक पत्रके सम्पादक विलियम कोबटके मित्र थे और उनके पत्रमें बराबर लेख लिखा करते थे। वे अपने समयके प्रसिद्ध वक्ता भी थे। उन्होंने प्रीकर्सर (Precursor) नामक एक स्वतन्त्र विचारका अपना पत्र भी निकाला था और

औद्योगिक शिक्षापर एक पुस्तिका प्रकाशित की थी, जिसमें उन्होंने लिखा था—"ईश्वरको धन्यवाद है कि मैंने अपनी युवावस्थामें जूता बनाने और मरम्मत करनेका काम सीखा था।" कोवेटने सन् १८३३ ई०में अपने 'रजिस्टर' में उस पुस्तिकाकी प्रकाशित करते हुए बड़ी तारीफ की थी। इस प्रकार कारनेगी मातृपक्ष और पितृपक्ष दोनों ही पक्षोंके लेखक, वक्ता और विचारशील थे।

टामस मारिसन प्रसिद्ध वक्ता, राजनीतिज्ञ और अपने जिलेके उग्र राजनीतिक दलके नेता थे। इनकी प्रसिद्धि दूर दूरतक थी। अमेरिकामें कारनेगीके ऐश्वर्य्यपूर्ण दिनोंमें बहुतसे सज्जन टामस मारिसनके नातेके नाते इनसे मिलने आया करते थे। क्लीवलैंड और पिट्सबर्ग रेलरोड कम्पनीके प्रेसिडेंट मि० फारमरने एक दिन कारनेगीसे कहा था—"हमने जो कुछ सीखा है, सब आपके नाना टामस मारिसनकी कृपाका फल है।" डमफरलिनके प्रसिद्ध इतिहासकार इबेनजर हेन्डरसनने भी स्वीकार किया है कि टामस मारिसनके अधीन नौकरी करने के कारण ही वह अपनी उन्नति करनेमें समर्थ हुआ था।

एकबार कारनेगीने अमेरिकाके सेन्ट एन्ड्रूज हालमें 'होम रूल' पर व्याख्यान दिया था। एक दर्शकने उस व्याख्यानकी चर्चा करते हुए ग्लासगो समाचारपत्रमें लिखा था कि कारनेगी की आकृति, स्वभाव, चलना फिरना, सब टामस मारिसनसे मिलता-जुलता था। २० वर्षकी अवस्थामें जब कारनेगी अमेरिकासे

डनफरलिन छोड़े थे तो उनके मामा बेली मारिसनने उन्हें देख कर आँखोंमें आंसू भरकर कहा था—"तुम्हें देखकर मुझे अपने पिताका स्मरण हो आता है।" यथार्थमें कारनेगीकी आकृति बहुत कुछ अपने नानासे मिलती जुलती थी। कारनेगीकी माँ भी यह बात उनसे कहा करती थीं। इस बातको तो लोग कबूल करते हैं कि अपने पूर्व पुरुषोंका स्वभाव उनकी सन्ततिमें पाया जा सकता है, पर आकृति, रहन-सहन, चाल-ढालमें भी वंशानुगत हो सकता है, यह कारनेगीके सम्बन्धमें एक विचित्र घटना है।

मारिसनने एडिनबर्गनिवासी मिस होजसे विवाह किया था। मिस होज सुशिक्षिता और अच्छे स्वभावकी स्त्री थी। उस समय मारिसन चमड़ेका कारबार करते थे। प्रसिद्ध वाटरलूके युद्धके बाद उनकी स्थिति बिगड़ गयी थी और कारनेगीके मामा बेली मारिसनको भी विपत्तिपूर्ण दिनोंका सामना करना पड़ा।

कारनेगीकी माता बेली मारिसनसे छोटी थीं। अपनी माताके सभी गुण उनमें विद्यमान थे। अपनी माताके सम्बन्धमें कारनेगीने अपने आत्मचरितमें लिखा है—"उन्हें यथार्थमें कोई नहीं जान सका। मैं उनके चरित्रको अत्यन्त पवित्र समझकर उनका ज्ञान केवल स्वयं रखना चाहता हूँ, दूसरोंको नहीं जानने देने चाहता। मेरे पिताकी मृत्युके बाद वही मेरा सर्वस्व थीं।" कारनेगीने अपनी प्रथम पुस्तक "An American four in Hand in Great Britain" अपनी माताको समर्पित

करते हुए लिखा है—"मेरी प्यारी वीर माताको समर्पित"। उपरोक्त घटनासे चरित्रनायककी अपूर्व मातृभक्ति सूचित होती है।

कारनेगीके जन्मस्थानका भी उनके जीवनपर बड़ा प्रभाव पड़ा था। किसी प्रसिद्ध स्थानमें जन्म ग्रहण करनेसे ही उस स्थानका महत्व बालकके चित्तपर अंकित होजाता है और उसके भविष्य-जीवनका निर्माण बहुत कुछ उस परिस्थितिपर निर्भर करता है। रस्किनने ठीक ही कहा है कि पश्चिमवर्गमें उत्पन्न होनेवाले प्रत्येक मेधावी बालकपर वहांके प्रसिद्ध किलेका प्रभाव पड़ता है। डनफरलिनमें भी वहांके प्रसिद्ध गिरजेका—स्काटलैण्डके वेस्टमिनिस्टरका महत्व वहांके बालकोंके चित्तपर अंकित हुआ करता है। इस प्रसिद्ध गिरजे को सन् १०७० ई० में मालकिम कैनमोर और क्वीन मारगरेटने स्थापित किया था। अबतक उस गिरजेका ध्वंसावशेष मौजूद है। स्काटलैण्डके प्रसिद्ध नरवीर राबर्ट ब्रूसकी समाधि गिरजेके मध्यभागमें स्थित है। सेंट मारगैरेट तथा अन्य राजाओंकी कबरें भी आस पासमें स्थित हैं। ये वैभव डनफरलिनके उन ऐश्वर्यमय दिनोंके सूचक हैं, जब यह स्काटलैण्डकी राजनीतिक और धार्मिक राजधानी था।

द्वितीय परिच्छेद

जीवनका उषाकाल

डनफरलिनकी प्राकृतिक और ऐतिहासिक गरिमाने बालक कारनेगीके जीवनपर गहरा प्रभाव डाला। इस प्रकारकी परिस्थिति में लालित पालित होनेसे ही बालक प्रत्येक श्वास प्रश्वासके साथ कविता और Romance को ग्रहण करता है और अपने चतुर्दिक परिदर्शनसे ही उसके मनमें ऐतिहासिक घटनाओंका जीता जागता चित्र अंकित हो जाता है। बालकपनमें कारनेगीके सामने इस प्रकार प्राकृतिक शोभापूर्ण ऐतिहासिक चित्र मौजूद था। इसकी मधुर स्मृति कारनेगीको सर्वदा बनी रही। डनफरलिनके किसी बालकके मनसे गिरजा, राजप्रासाद और तराइयोंका मनोहर दृश्य मिट नहीं सकता।

कारनेगीके पिताकी आर्थिक अवस्था कुछ सुधरनेपर वे तंग मकानको छोड़कर रीडपार्कके एक बड़े मकानमें चले आये। नीचेके तल्लेमें करघे गाड़ दिये गये और ऊपरके कमरोंमें कारनेगीका परिवार रहने लगा। कारनेगीने सबसे पहले इसी मकानमें अमेरिकाका एक मानचित्र देखा था। कौन जानता था कि स्काटलैण्डके एक जुलाहेका यही लड़का अमेरिकामें जाकर प्रसिद्ध धनकुबेर बन जायगा! इस मानचित्रमें अंकित

स्काटलैंडमें डनफरलिन नगर अपनी उस राजनीतिके कारण सर्वत्र प्रसिद्ध हो रहा था। उन दिनों यहां अधिकांश ऐसे ही लोग रहते थे जो जुलाहेका स्वतन्त्र व्यवसाय करते थे। प्रत्येकके पास अपना अपना करघा था। वे रोजपर काम करनेवाले मजदूर नहीं थे, बल्कि ठीकेपर काम करते थे। बड़े बड़े व्यापारी कपड़ोंकी तानी करके उन्हें दिया करते थे और वे लोग ठीकेपर उसे बीन दिया करते थे।

उन दिनों राजनीतिक आन्दोलन जोरोंपर था। दो पहरके भोजनके बाद लोग छोटे छोटे दल बांधकर निकलते थे और राज्यके प्रश्नोंपर वाद विवाद किया करते थे। कारनेगी भी [illegible]स दलमें शरीक होकर वाद विवादमें भाग लिया करता था। [illegible]य एकतरफा बहस हुआ करती और सभी इस बातको [illegible]न लेते कि राज्य-प्रणालीमें परिवर्तन अवश्य होना चाहिये। [illegible]एसरमें क्लब स्थापित हो गये। लण्डनके अखबार मगाये [illegible]े थे और प्रत्येक सन्ध्याको उन अखबारोंके अग्रलेख लोगों [illegible] पढ़कर सुनाये जाते थे। कारनेगीका मामा बेली मारिसन

घर चले जाइये।" लोग चुपचाप घर चले गये और पीछे मारिसन भी छोड़ दिया गया। इस घटनाके कोई ५० वर्षके बाद सन् १८८०ई०के अक्टूबर मासमें लौडर टेकनिकल स्कूलका उद्घाटन करते हुए कारनेगीने अपने व्याख्यानमें कहा था—"लड़कपन की एक बात मुझे याद आती है—एक दिन अन्धकारपूर्ण अर्द्ध रात्रिमें मैं शोरगुल सुनकर जाग पड़ा और मुझे ज्ञात हुआ कि मेरे मामा मारिसन जेल भेजे गये हैं। यह कहते गर्व मालूम होता है कि मुझे भी एक मामा था, जो जेल भेजा गया था। पर सज्जनो और देवियो! मेरा मामा सार्वजनिक संस्थाओंकी हित रक्षाके लिये ही जेल गया था।"

जब प्रकटमें कारनेगी परिवार इस प्रकार राजद्रोहमें भाग लेता था तो फिर घरमें बैठकर आपसमें ये लोग Monarchical, Aristocratic Govt और धनियोंकी सुविधाओंकी किस प्रकार निन्दा किया करते थे, इसकी कल्पना पाठक सहजमें ही कर सकते हैं। साथ ही साथ प्रजातन्त्र शासन प्रणालीकी श्रेष्ठता, अमेरिकाकी महत्ता और स्वतन्त्रताकी आवासभूमि दोनेकी चर्चा भी ओरोंसे हुआ करती थी। बालक कारनेगीका जीवन इन्हीं विचारोंको लेकर गठित हुआ था। चरित्रनायकने अपने आत्मचरित्रमें लिखा है—"लड़कपनमें मैं राजा, ड्यूक और लार्ड, सबको कतल कर सकता था और समझता था कि इन्हें मारनेसे मैं राज्यकी बड़ी सेवा कर सकूंगा तथा यह अत्यन्त वीरतापूर्ण कार्य्य होगा।"

।

कानमें भाफ्के करघे चलाये जाने लगे, तो कारनेगी-परिवारपर विपत्तिका पहाड़ टूट पड़ा। धीरे धीरे करघोंका मूल्य घटने लगा और परिवारके भरण पोषणका प्रश्न कठिन हो चला। इस अवसरपर कारनेगीकी माताने यथार्थ गृहिणीका कार्य्यकर परिवारको भूखों मरनेसे बचा लिया। उन्होंने मूडी स्ट्रीटमें एक छोटीसी दूकान खोल दी और इस प्रकार दूकानसे जो आमदनी होने लगी उससे कारनेगी परिवारका खर्च मजेमें चलने लगा।

इसके थोड़े दिनोंके बाद ही धनिश्रमायकको पहले पहल मालूम हुआ कि दरिद्रता किसे कहते हैं। जिस दिन कारनेगी के पिता आखिरी कपड़ा बीनकर व्यापारीके पास उसे देने और आगे बीननेके लिये कपड़ेकी तानी लाने गये, उस दिन कारनेगी-परिवार इस चिन्तासे व्यथित हो रहा था कि अब कोई नया कपड़ा बीननेको मिलेगा या बेकारीके मारे भूखों मरना पड़ेगा। कारनेगीने अपने आत्मचरितमें लिखा है—"यह देखकर मेरा हृदय जल उठा कि यद्यपि मेरे पिता बेकार, काहिल या दुष्ट नहीं थे, तो भी उन्हें संसारके एक मनुष्यसे प्रार्थना करनी पड़ती थी कि मुझे काम करनेकी आज्ञा दो। उसी समय मैंने संकल्प कर लिया कि बड़ा होनेपर मैं इस दोषको दूर करूंगा।" ऐसी अवस्थामें भी कारनेगी-परिवारकी आर्थिक दशा अड़ोस पड़ोसके लोगोंसे अच्छी ही थी। अपने दोनों पुत्रोंको सुरुचिपूर्ण वस्त्रोंसे आच्छादित देखनेके लिये कारनेगीकी माता सब प्रकारके कष्टोंको झेलनेके लिये तैयार थीं।

किसी समय कारनेगीके पिताने जल्दबाजीमें आकर प्रतिज्ञा कर डाली थी कि जबतक कारनेगी मुंह खोलकर पढ़नेकी आज्ञा नहीं मांगेगा, तबतक उसे स्कूल नहीं भेजा जायगा। चरित्रनायककी उम्र बढ़ने लगी और उसके पिताकी चिन्ता यह सोचकर बढ़ने लगी कि किस प्रकार वह स्वयं स्कूल जाने की प्रार्थना करेगा। स्कूलमास्टर मि० राबर्ट मार्टिनकी बड़ी खुशामदकर कारनेगीके पिताने उनसे बालकपर दृष्टि रखनेके लिये निवेदन किया। एक दिन कारनेगी मार्टिनके साथ बाहर घूमने गया और वहांसे लौटकर उसने माता पितासे पढ़नेकी आज्ञा मांगी। पिताके हर्षका क्या पूछना था! बड़ी खुशीसे पिताने अनुमति दे दी। उस समय कारनेगीकी अवस्था ८ वर्ष की थी।

कारनेगीका स्कूलमें खूब मन लगता था। यदि किसी कारणवश स्कूल जानेमें बाधा हो जाती थी, तो उसे बड़ा दुःख होता था। चरित्रनायकको प्रातःकाल मकानसे दूर मूडी स्ट्रीट के कुएंसे पानी भी लाना पड़ता था। पानी बड़ी कठिनतासे मिलता था। अड़ोस-पड़ोसकी बुड्ढी स्त्रियां और लड़के आकर कुएंपर जम जाते थे और अपने घड़ोंको नम्बरवार लगाकर रखते थे। बारी बारीसे सबको पानी मिलता था। ऐसे अवसरोंपर प्रायः लड़ाई झगड़ा हुआ ही करता है। कारनेगी भी बुढ़ियोंसे झगड़ पड़ता था। बुड्ढी स्त्रियां भी उसे झगड़ालू कहा करती थीं। इस प्रकार कारनेगीने लड़कपन हीमें वाद विवाद करनेको

प्रदान हो जाय, तो मैं भी वालेसके समान ही वीरतापूर्ण कार्य करूंगा, कभी भी नहीं डरूंगा।

कारनेगीने अपने चचाकी उत्तेजनासे बहुसंख्यक अंग्रेजी पद्योंको कण्ठस्थ कर लिया था और इससे उसकी स्मरण-शक्ति बहुत तीव्र हो गयी थी। कारनेगीके विचारसे छोटे छोटे सुंदर पद्योंको मुखाग्र कर लेनेसे बालकोंकी शिक्षापर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ता है, इसलिये चरित्रनायकने अपने आत्मचरितमें अपने चचाकी इस सुन्दर शिक्षा-पद्धतिकी बड़ी प्रशंसा की है। डनफर्मलिनस्कूलमें पढ़ते समय कारनेगीको बाइबिलके पद्योंको कण्ठस्थकर सुनाना पड़ता था। चरित्रनायक घरसे स्कूल चलनेके समय इन पद्योंको देखना शुरू करता और स्कूल पहुंचते पहुंचते दो पद्योंको कण्ठस्थ कर सुना दिया करता था। इसीसे कारनेगीकी बुद्धिकी तीव्रताका पता लगता है। एक बार स्कूलके छात्रोंके सामने बर्नेकी प्रसिद्ध कविता "Man was made to mourn" को कण्ठस्थ सुनानेके उपलक्ष्यमें कारनेगीको पुरस्कार भी मिला था। पीछे चलकर एकबार कारनेगी भूतपूर्व भारतसचिव लार्ड मोर्लेसे मिला था। वहां सबर्नेकी जीवनीपर बातचीत करते हुए मार्लेने कहा, "मैं बर्नेकी 'Old age' नामक कविता ढूंढ़ रहा हूं, जिसमें बर्नेस बर्नेके जीवनकी चर्चा है, पर मुझे नहीं मिलती।" कारनेगीने झटपट उस कविताको सुना दिया। मोर्लेने प्रसन्न होकर इसे एक पेनी इनाममें दी थी।

धार्मिक बातोंमें बालक कारनेगीपर किसी प्रकारका दबाव नहीं डाला जाता था। और बालकोंको स्कूलमें ईसाईधर्मकी प्रश्नोत्तरमाला सिखायी जाती थी, पर कारनेगी और जार्ज इस बन्धनसे मुक्त थे। मारिसन और लौडर ईसाईधर्मकी प्रश्नोत्तर-मालासे विलग रहते थे। कारनेगी-परिवारमें कोई ईसाईधर्मका अभिमक नहीं था। कारनेगीकी माता धार्मिक विषयोंमें सदा तटस्थ रहा करती थीं। वह गिरजा भी नहीं जाती थीं, क्योंकि घरके कामकाजसे उन्हें फुरसत ही नहीं मिलती थी।

लड़कपनमें कारनेगी खरहों और कबूतरोंको पाला करता था। इसके पिता बड़े यत्नसे इन जन्तुओंके निवासके लिये स्थान का प्रबन्ध कर दिया करते थे। बहुतसे अड़ोस पड़ोसके बालक कारनेगीके साथ खेलने आया करते थे और गृहणी तथा गृह-पति दोनों मिलकर उन्हें पूर्ण आराम देनेकी व्यवस्था किया करते थे। कारनेगी अपने साथियोंको लेकर खरहोंको पकड़वाने को निकल पड़ता था और जिस साथीकी मददसे कोई खरहा पकड़ा जाता था, उसीके नामपर खरहेका नामकरण होता था। शनिवार की छुट्टीका दिन तो कारनेगीकी मित्रमंडली खरहों के भोजनको संग्रह करनेमें ही बिताया करती थी। कारनेगीने अपने भविष्य जीवनमें जिस संगठनके बलसे सफलता प्राप्त की थी, उसका सूत्रपात उसके बालकपनमें ही हो गया था। प्रत्येक मनुष्यके लिये यह सम्भव नहीं है कि वह सर्वज्ञ बन सके, पर अपनेसे श्रेष्ठ मनुष्योंको चुनकर उनकी शक्तियोंका सदुपयोग

करना एक भारी काम है और कारनेगीने इसमें पूर्ण सफलता प्राप्त की थी। कारनेगी वैज्ञानिक और वाणविद्याके गूढ़ रहस्योंको भले ही नहीं जानता हो, पर वह मनुष्य-चरित्रको जाननेमें सिद्धहस्त था। इसी श्रेष्ठ गुणके कारण कारनेगी दरिद्रगृहमें जन्म लेकर भी धनकुबेर होनेमें समर्थ हुआ था।

तृतीय परिच्छेद

अमेरिका-प्रस्थान

वाष्पशक्तिके आविष्कार होनेसे करघेके व्यवसायियोंकी दशा बिगड़ने लगी और कारनेगी-परिवार भी इस विपत्तिसे रक्षा नहीं पा सका। अन्तमें पिट्सबर्गके सम्बन्धियोंके पास पत्र लिखा गया कि वे लोग भी अमेरिका आनेका विचार करते हैं। वहांसे संतोषजनक उत्तर पानेपर सभी करघों आदि सामान को नीलाम करनेका विचार स्थिर हुआ। कारनेगीके पिता बार बार मधुर शब्दोंमें अमेरिकाके स्वतन्त्र जीवनकी प्रशंसा किया करते थे। अन्तमें सभी सामान नीलाम किया गया, पर उन्हें पूछता कौन था? बहुत कम रुपया मिला। सब जोड़ने-जाड़नेपर भी २०पौण्डकी कमी रही। कारनेगीकी माताकी सखी श्रीमती हेण्डरसनने इस अवसरपर सहायताकर कारनेगी परिवारको सदैवके लिये कृतज्ञताके रूपमें आबद्ध कर लिया। लौडर और मारिसनकी जमानतपर २० पौंड उधार दिया गया। बस, अब अमेरिका प्रस्थानका सब सामान ठीक हो गया। लौडरने इन लोगोंको सभी बातें अच्छी तरह समझा दीं। १७ वीं मई सन् १८४८ई० को कारनेगी-परिवार डनफरलिनको अन्तिम नमस्कार

कर अमेरिकाके लिये चल पड़ा। कारनेगीकी अवस्था उस समय १२ वर्षकी थी और उसका भाई टाम ५ वर्षका था। कारनेगी डनफरलिनसे विदा होते समय 'बस' पर खड़ा होकर अश्रुपूर्ण नेत्रोंसे अपने जन्मस्थानको देखता रहा। प्राचीन गिरजेकी स्मृति इसके बाद भी १४ वर्षतक कारनेगीके मनमें बनी रही। रह रहकर कारनेगी मनमें सोचा करता—"मैं तुम्हें कब देखूंगा।" राबर्ट ब्रूसको तो कारनेगी कभी नहीं भूला। फोर्थकी खाड़ी पहुंचनेपर एक छोटी नावमें सवार होकर ये लोग पश्चिममें पहुंचे। नावपरसे जहाजपर चढ़ते समय बालक कारनेगी अपने चचा लौडरके गलेमें लिपट गया और फूट फूटकर रोते हुए कहने लगा, "चचा! मैं तुमको नहीं छोड़ूंगा—मैं तुम्हें कभी नहीं छोड़ सकता।" एक दयार्द्र नाविकने कारनेगीको उठाकर जहाजपर चढ़ाया। कारनेगीके स्वदेशप्रेमका पता इस घटनासे भलीभांति लगता है।

'विसकासेट' नामक जहाजपर कारनेगी-परिवारने अमेरिकाके लिये प्रस्थान किया। उन्हें अमेरिका पहुंचनेमें ७ सप्ताह लगे। जहाजपर ही कारनेगीने बहुत कुछ सीख लिया। जहाजपर बहुत कम नाविक थे, अतएव यात्रियोंकी सहायता की आवश्यकता प्रायः हुआ करती थी। कारनेगी बड़ी तत्परताके साथ स्वयं भी नाविकोंकी सहायता करता और अन्य यात्रियोंको भी सहायता देनेके लिये उत्साहित किया करता था। बहुत शीघ्र ही नाविकोंसे इसकी गहरी दोस्ती

हो गयी। रविवारके भोजमें नाविकगण कारनेगीको अवश्य शामिल कर लिया करते थे। कारनेगीको जहाज छोड़ते समय भी बड़ा दुःख हुआ था।

न्यूयार्क पहुंचकर तो सभी हक्के-बक्के हो गये। कारनेगी इसके पूर्व इंगलैण्डकी रानीको देखने येडिनबर्ग गया था और आनेके समय ग्लासगो होता आया था, पर शहरको देखनेका मौका इन लोगोंको नहीं मिला था। पहलेपहल न्यूयार्कमें ही कारनेगीने विशाल जनसमूहको देखा। न्यूयार्कमें रहते समय एक दिन कारनेगी 'बाउलिंगग्रीन' नामक पार्क होकर जा रहा था कि 'विसकासेट' जहाजके एक नाविक राबर्ट वेरीमैनने अचानक इसका आलिंगन किया और इसे एक भोजनालयमें ले गया। यहां कारनेगीने एक ग्लास 'सरसापरिला' पिया। चरित्रनायकको उसका स्वाद अमृतसे अधिक जान पड़ा। अपने ऐश्वर्य्यमय दिनोंमें चरित्रनायक बहुत बार उस रास्ते होकर गया और बराबर उस बुढ़ियाकी दूकानको देखा करता, जहां उसने अमृतोपम 'सरसापरिला' का आस्वादन किया था, पर उस नाविक मित्रका पता फिर नहीं लगा।

न्यूयार्कमें मि० स्लोन और उनकी सहधर्मिणी ही कारनेगी परिवारके एकमात्र परिचित थे। श्रीमती स्लोन कारनेगीकी माताकी सखी थीं। मि० स्लोन भी पहले जुलाहेका काम करते थे और कारनेगीके पिताके मित्र थे। हमारे चरित्र

कर अमेरिकाके लिये चल पड़ा। कारनेगीकी अवस्था उस समय १३ वर्षकी थी और उसका भाई टाम ५ वर्षका था। कारनेगी डनफरलिनसे विदा होते समय 'बस' पर खड़ा होकर अश्रुपूर्ण नेत्रोंसे अपने जन्मस्थानको देखता रहा। प्राचीन गिरजेकी स्मृति इसके बाद भी १४ वर्षतक कारनेगीके मनमें बनी रही। यह रहकर कारनेगी मनमें सोचा करता—"मैं तुम्हें कब देखूंगा।" रावर्ट ब्रूसको तो कारनेगी कभी नहीं भूला। फोर्थकी खाड़ी पहुंचनेपर एक छोटी नावमें सवार होकर ये लोग एडिनबर्ग पहुंचे। नावपरसे जहाजपर चढ़ते समय बालक कारनेगी अपने चचा लौडरके गलेमें लिपट गया और फूट फूटकर रोते हुए कहने लगा, "चचा! मैं तुमको नहीं छोड़ूंगा—मैं तुम्हें कभी नहीं छोड़ सकता।" एक दयार्द्र नाविकने कारनेगीको उठाकर जहाजपर चढ़ाया। कारनेगीके स्वदेशप्रेमका पता इस घटनासे भलीभांति लगता है।

'विसकासेट' नामक जहाजपर कारनेगी-परिवारने अमेरिकाके लिये प्रस्थान किया। उन्हें अमेरिका पहुंचनेमें ७ सप्ताह लगे। जहाजपर ही कारनेगीने बहुत कुछ सीख लिया। जहाजपर बहुत कम नाविक थे, अतएव यात्रियोंकी सहायता की आवश्यकता प्रायः हुआ करती थी। कारनेगी बड़ी तत्परताके साथ स्वयं भी नाविकोंकी सहायता करता और अन्य यात्रियोंको भी सहायता देनेके लिये उत्साहित किया करता था। बहुत शीघ्र ही नाविकोंसे इसकी गहरी दोस्ती

हो गयी। रविवारके भोजमें नाविकगण कारनेगीको अवश्य शामिल कर लिया करते थे। कारनेगीको जहाज छोड़ते समय भी बड़ा दुःख हुआ था।

न्यूयार्क पहुंचकर तो सभी हर्षमग्न हो गये। कारनेगी इसके पूर्व इंगलेण्डकी रानीको देखने येडिनवर्ग गया था और आनेके समय ग्लासगो होता आया था, पर शहरको देखनेका मौका इन लोगोंको नहीं मिला था। पहलेपहल न्यूयार्कमें ही कारनेगीने विशाल जनसमूहको देखा। न्यूयार्कमें रहते समय एक दिन कारनेगी 'वाकलिंगग्रीन' नामक पार्क होकर जा रहा था कि 'विसकासेट' जहाजके एक नाविक रावर्ट वेरीमैनने अचानक इसका आलिंगन किया और इसे एक भोजनालयमें ले गया। वहां कारनेगीने एक ग्लास 'सरसापरिला' पिया। चरित्रनायकको उसका स्वाद अमृतसे अधिक जान पड़ा। अपने ऐश्वर्य्यमय दिनोंमें चरित्रनायक बहुत बार उस रास्ते होकर गया और बराबर उस बुढ़ियाकी दूकानको देखा करता, जहां उसने अमृतोपम 'सरसापरिला' का आस्वादन किया था, पर उस नाविक मित्रका पता फिर नहीं लगा।

न्यूयार्कमें मि० स्लोन और उनकी सहधर्मिणी ही कारनेगी परिवारके एकमात्र परिचित थे। श्रीमती स्लोन कारनेगीकी माताकी सखी थीं। मि० स्लोन भी पहले जुलाहेका काम करते थे और कारनेगीके पिताके मित्र थे। हमारे चरित्र

नायकका परिवार एकाएक स्लोन गृहमें आ पहुंचा। स्लोनने खूब खातिर की। कुछ दिन ठहरकर ये लोग पिट्सबर्गके लिये रवाना हुए। एक नहर होकर इन लोगोंको नावमें यात्रा करनी पड़ी। पिट्सबर्ग पहुंचनेमें तीन सप्ताह लगे। आज कल रेलसे न्यूयार्कसे पिट्सबर्ग आनेमें कुल दस घंटे ही लगते हैं, पर उनदिनों अमेरिकाके पश्चिमी नगरोंके साथ रेलका सम्बन्ध स्थापित नहीं हुआ था। 'एरी' रेलवे बन ही रही थी। राहमें एक रातमें इन लोगोंको मच्छड़ोंने खूब सताया था। कारनेगीकी माताको तो मच्छड़ोंने इतना काट खाया कि वह प्रातःकाल अच्छी तरह देख भी नहीं सकती थीं। सबके चेहरे बिगड़ गये थे, पर तोभी कारनेगीने खूब खर्राटे लिये थे।

पिट्सबर्गमें कारनेगी-परिवारके मित्र बड़ी उत्कंठापूर्वक इनकी राह देख रहे थे। पहुंचते ही बड़े प्रेमसे उन्होंने स्वागत किया और इनके रास्तेके सभी दुःख छूमन्तर होगए। फिर होनेपर इन लोगोंने अलगेनी नगरमें एक मकान किरायेपर लिया और उसीमें रहने लगे। कारनेगीके चचाके एक भाईने 'रेबेका स्ट्रीट' में एक छोटीसी दुकान खोल रखी थी। उसके तल्लेमें दो कमरे थे। उन्हींमें कारनेगीके पिताने अपना व्यवसाय शुरू किया। ये 'टेबलक्लाथ' बीनने लगे। उन्हें बीनना और बेचना दोनों काम स्वयं करने पड़ते थे, क्योंकि कोई ऐसा व्यापारी नहीं था जो इकट्ठा बहुतसा माल खरीद लेता। घर घर

आकर तैयार मालको बेचना पड़ता था। इसमें बहुतसा समय नष्ट होनेके कारण पहलेपहल बहुत कम आमदनी हुई।

इस अवसरपर भी कारनेगीकी माताने आदर्श गृहिणीका कार्य्य किया। किसी भी विघ्नबाधासे वह नहीं घबड़ाती थीं। उन्होंने अपनी युवावस्थामें जूतोंकी मरम्मत करनेका काम सीखा था। उसी व्यवसायके द्वारा कारनेगीकी माताने परिवारकी सहायता आरम्भ कर दी। उन लोगोंके पड़ोसमें ही हेनरी फिप्पस् नामक एक चतुर चर्म्मकार रहता था। उसीसे काम लेकर कारनेगीकी माँ घरके काम धन्धोंको करती हुई भी जूतोंकी मरम्मतसे सप्ताहमें चार डालर* पैदा कर लिया करती थीं। कभी कभी वह आधी राततक काम किया करती थीं। इस प्रकार कारनेगीकी माता आदर्श गृहिणीके रूपमें परिवारका पालन पोषण करती थीं और कारनेगीके पिता भी अपने पुत्रोंके आदर्श पथप्रदर्शक और मित्र थे। दरिद्र, पर चरित्रवान् माता पिताके इस आदर्श आचरणका कारनेगीपर बड़ा प्रभाव पड़ा। लक्षपतीके लड़कोंको ऐसी शिक्षा कहाँ नसीब हो सकती है?

शीघ्र ही अड़ोस-पड़ोसके लोगोंको कारनेगीकी माताकी उच्च हृदयताका पता लग गया और वे लोग वक्त पड़नेपर उपदेशके लिये उनके पास आने लगे। कारनेगीके धनकुबेर होनेपर भी दरिद्र लोगोंका नाता उसकी माँके पास सदा बना ही रहा।

* एक डालर तीन रुपयेसे कुछ ऊपर होता है।

चतुर्थ परिच्छेद

कार्य्यक्षेत्रमें प्रवेश

कारनेगीने अपने जीवनका १३ वां वर्ष समाप्त कर लिया था। अब यह क्या करे—किस प्रकार अपने परिवारकी आर्थिक स्थितिको सुधारनेमें सहायता पहुंचा सके, सबको इसकी चिन्ता लग रही थी। स्वयं कारनेगी भी अपने परिवारको सहायता पहुंचानेके लिये लालायित हो रहा था। परिवारकी दरिद्रता कारनेगीको कभी चैन नहीं लेने देती थी। वह उस समय मनमें सोचा करता कि ३०० डालर वार्षिक आय होनेसे ही परिवारका भरणपोषण भलीभांति हो सकता है। उस समय जीवनके व्यवहारकी सभी चीजें सस्ती थीं।

कारनेगीका चचा होगन बराबर पूछा करता कि 'मैग', कौनसा काम करेगा? एक दिन बड़ी हृदयविदारक घटना हुई। होगनने कारनेगीकी मातासे कहा कि यदि मैग फेरीवाले का काम किया करे तो अनायास ही बहुतसा द्रव्य उपार्जन कर सकता है। कारनेगीकी माता उस समय कपड़ा सी रही थीं। सुनते ही उनके बदनमें आग सी लग गयी। वह खड़ी होकर क्रोधसे कांपती हुई बोलीं—"रे! मेरा लड़का

फेरी लगाता फिरेगा? इससे अच्छा होगा कि मैं उसे अलगेनी नदीमें डुबाकर मार डालू। अब मेरे सामने ऐसी बात मत कहो।" इसके बाद ही वह रोने लगी और अपने दोनों बेटोंको गोदमें लेकर चूमते हुए कहा—"बेटा! मेरे मूर्खतापूर्ण कार्य्यको ध्यानमें न रखना। दुनियांमें बहुतसे काम हैं। यदि तुमलोग सत्पथपर रहोगे तो तुम्हारी सब तरहसे उन्नति होगी।" कारनेगीकी माता परिश्रमकी निन्दा नहीं करती थीं, पर उन्हें यह सह्य नहीं हुआ कि उनका प्यारा बेटा घर घर जाकर—हर तरहके लोगोंके पास जाकर, फेरी लगाया करे। नीच लोगोंकी संगतिसे अपने बच्चोंको बचाये रखनेकी उन्हें बड़ी फिक्र थी। दोनों पुत्रोंको जीते ही नदीमें डुबा दे सकती थीं, पर नीच लोगोंकी संगतिमें पड़ने देना नहीं चाहती थीं।

कारनेगी परिवारसे बढ़कर आत्माभिमानी शायद ही कोई दूसरा परिवार था। घरके सभी लोगोंके विचार स्वतन्त्र और आत्मसम्मानपूर्ण थे। कारनेगीकी माताको सब प्रकारके नीच व्यवहारोंसे घृणा थी। ऐसी माताको संरक्षतामें रहकर यदि कारनेगी अपने भविष्य-जीवनमें उन्नति करनेमें समर्थ हुआ तो कोई आश्चर्य्य की बात नहीं है। यथार्थमें माता हीके हाथोंमें पुत्रका भविष्य निर्भर करता है। फिर कारनेगीके पिता भी आदर्श प्रकृतिके थे। अड़ोस-पड़ोसके लोग उन्हें साधु कहा करते थे।

इस घटनाके थोड़े ही दिनोंके बाद कारनेगीके पिताने

करघेका काम छोड़कर कपड़ेके कारखानेमें कार्य्य करनेका निश्चय किया। यह कारखाना स्काटलैंडनिवासी मि० ब्लेकस्टाकका था। इसी कारखानेमें भावी धनकुबेर—हमारे चरित्रनायकने नली भरनेका काम शुरू किया। इस कार्य्यके लिये कारनेगीको सप्ताहमें १ डालर बीस सेंट मिलता था। काम कड़ा था। बालक कारनेगीको जाड़ेके दिनोंमें सूर्य्योदयके बहुत पूर्व उठना पड़ता था। घरसे ही जलपान करके सूर्य्योदयके पूर्व कारखानेमें पहुंच जाना पड़ता था और शामतक कारखानेमें ही रहना पड़ता था। बीचमें केवल थोड़ी देरके लिये खानेकी छुट्टी मिलती थी। कारनेगीका मन इस काममें नहीं लगता था—दिन पर्वत हो जाता था, पर वोभी वसे यह सोचकर अपूर्व आनन्द मिलता था कि वह अपने परिवारको कुछ आर्थिक सहायता पहुंचानेमें समर्थ हो रहा है। कारनेगीने भविष्यमें करोड़ों रुपया कमाया। प्रथम सप्ताहमें १ डालर २० सेंट पाकर उन्हें जैसी प्रसन्नता मिली थी वैसी कभी नहीं मिली। अब कारनेगीपर परिवारका बोझ नहीं था।

इसके थोड़े दिनोंके बाद ही नली (Bobbin) के अन्य व्यवसायी मि० जान हेको एक बालककी आवश्यकता हुई और कारनेगी २ डालर प्रति सप्ताहपर यहीं काम करने लगा। यहांका काम कारखानेसे भी बुरा था। कारनेगीको एक छोटा स्टीम इंजिन चलाना पड़ता था और नलीके कारखानेके बायलरमें आग जलानी पड़ती थी।

१२ वर्षके कारनेगीके लिये यह काम यथार्थमें कष्टसाध्य
था। बायलरमें आग जलाते हुए उसे बराबर भय बना रहता
था, कि कहीं गर्मी तेज न हो जाय और कम भी नहीं रहे। तेज
होनेसे बायलर फटनेका डर था और कम गरमी होनेसे मज
दूर लोग शिकायत करने लगते थे।

कारनेगी इन सभी कठिनाइयोंको अपने मां बापसे
छिपाये रखता था। वे तो स्वयं चिन्ताग्रस्त थे, फिर कारनेगी
अपनी कठिनाईका बोझ उनपर क्यों लादता? कारनेगी सच्चा
मिलापी और आशावादी था—उसे विश्वास था कि शीघ्र ही
कोई परिवर्तन हो जायगा। कौनसा दूसरा अच्छा कार्य उसे
मिलेगा, इसका निश्चय उसे नहीं था, पर अन्तरात्मा कह रही
थी—"काममें लगे रहो, शीघ्र ही तुम्हारा इससे उद्धार होगा।"

आखिर एक दिन अवसर आ ही गया। मि० हेको कुछ
बिल बनाने थे। उसके पास कोई क्लर्क नहीं था—वह स्वयं
भी इसमें अनाड़ी ही था। हेने कारनेगीको पूछा—"तुम कैसा
अक्षर लिख सकते हो?" उसे कुछ लिखनेके लिये भी दिया।
कारनेगीके लेखको देखकर वह बहुत प्रसन्न हुआ। इसके
बादसे तो कारनेगी ही उसके बिल बनाने लग गया। हिसाब
कितावमें कारनेगी पटु हो था। हे भी कारनेगीपर दया
रखता था और उसे इंजिनसे छुड़ाकर किसी अच्छे काममें
लगाना चाहता था।

अब हेने कारनेगीको एक दूसरे काममें लगाया। सूत

लपेटनेके लिये जो नये नये 'रील' आदि बनाये जाते थे। उन्हें तेलमें भिगोनेका काम कारनेगीको करना पड़ा। उसे एक कमरेमें अकेले ही इस कामको करना पड़ता था। तेलकी गंधसे कारनेगीका दिमाग घूमने लगता था। वह कभी कभी हिम्मत हार बैठता था—वालेस और ब्रूसके जीवन चरित्रको स्मरण कर भी उसके मनको प्रबोध नहीं होता था। दुर्गन्धके मारे कारनेगीको दिनमें भोजन भी अच्छा नहीं लगता था, पर इसकी कसर वह रातके भोजनमें पूरी कर लेता था। इतना होनेपर भी कारनेगी काममें लगा रहा। वालेस और ब्रूसका अनुयायी मर जायगा, पर कामसे हिम्मत नहीं हार सकता।

इसी बीचमें कारनेगीने पिट्सबर्गके मि० विलियमके यहां हिसाब किताब रखनेकी विधिको अच्छी तरह सीख लिया।

सन् १८५० ई०में एक दिन सन्ध्याके समय जब कारनेगी कामपरसे घर लौटा तो उसे मालूम हुआ कि टेलिग्राफ आफिस के मैनेजर मि० डैविस ब्रूसने होगनसे एक ऐसे लड़केको मांगा था, जो तार पहुंचानेका काम कर सके। मि० ब्रूस और कारनेगीके चचामें दोस्ती थी और एक दिन कथाप्रसंगमें ही ब्रूसने होगनसे यह बात कही थी। यह सामान्य बात ही कारनेगीके जीवनके लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना हुई। एक शब्द या हुक्म ही मनुष्यके जीवनमें महान् परिवर्तन हो सकता है। जो मनुष्य किसी भी घटनाको सामान्य समझता है, वह मूर्ख है। सामान्य घटनाओंसे ही कभी कभी बड़े

बड़े कार्य्य संभव हो गये हैं। रावर्ट ब्रूस और मकड़ेकी कथा तो सभी जानते हैं। कारनेगीके जीवनमें भी ब्रूस और होगनके खेलमें ही एक लड़केकी आवश्यकतावाली बातने घोर परिवर्त्तन उपस्थित कर दिया। होगनने कारनेगीका नाम लेकर कहा कि वह इस कार्य्यको भलीभांति कर सकेगा। कारनेगी परिवारसे होगनने इस सम्बन्धमें कहा। कारनेगी तो हर्षके मारे विह्वल हो गया। जिस प्रकार पिंजड़ेमें बन्द पक्षी स्वतन्त्रताके लिये छटपटाता है, उसी प्रकार कारनेगी 'ह्'के कारखानेसे मुक्त होनेके लिये छटपटा रहा था। कारनेगीकी माताने नवीन प्रस्तावका समर्थन किया, पर पिताकी इच्छा नहीं होती थी। उन्होंने कहा—"नेग अभी बच्चा है। इतना कड़ा काम यह नहीं कर सकेगा। ढाई डालर सप्ताहमें मिलेगा, इसीसे प्रत्यक्ष है कि इस कामके लिये किसी सयाने लड़केकी जरूरत है। रातमें तारकी खबरोंको लेकर देहातमें निकलना पड़ेगा— इसमें विपत्तिकी संभावना है। अतएव अच्छा है कि नग अभी यहीं रहे, जहां काम कर रहा है।" पीछे 'ह्'से बातचीतकर कारनेगीके पिता भी राजी हो गये। ह्'ने भी पक्षमें ही सलाह दी और कहा कि यदि नेग वहां काम करनेमें समर्थ नहीं हो सकेगा तो उसे उसका पुराना काम फिर मिल जायगा।

निश्चय हो जानेपर कारनेगी मि० ब्रूसके पास गया। बाप-बेटा दोनों साथ साथ तारघरतक गये। प्रातःकालका सुहावना समय अत्यन्त शुभसूचक था। मलगेनीसे पिट्सबर्गो

ही धमा दिये गये थे—पत्र भवाल बहुत कम थे। वहांकी आबादी भी केवल ४० हजार ही थी।

कारनेगीने बहुत जल्दी नगरके कुछ प्रसिद्ध पुरुषोंका परिचय प्राप्त कर लिया। पिट्सबर्गके जज विलकिन्स, मैकण्डल्स, मैकल्पोर, चार्लस सेलर, एडविनस्टेंटन—जो पीछे चलकर युद्धसचिव हुए थे—ये सभी कारनेगीके परिचित हो गये थे। व्यवसायियोंमें टामस हो, जेम्सपार्के, बेनजामिन औम्स, विलियम और कर्नेल हेरोन थे। इनमें कर्नेल हेरोनको कारनेगी आदर्श समझता था।

कारनेगीका नवीन जीवन उसके लिये अत्यन्त सुखप्रद था। इसी अवसरमें उसकी बहुतसे लोगोंसे गाढ़ी मित्रता हो गयी। कुछ दिनके बाद डेविड मैककारगो कारनेगीका सहकारी नियुक्त हुआ, जो पीछे चलकर अलगेनी रेलवेका सुपरिण्टेण्डेण्ट हुआ। डेविड और कारनेगी शीघ्र ही मित्र बन गये। इसके बाद एक लड़केकी और जरूरत होनेपर रायट पिट कर्न इस कामके लिये नियुक्त हुआ—जो पीछे चलकर पेन्सिल वेनिया रेलरोडका सुपरिण्टेण्डेण्ट और जनरल एजेण्ट हुआ था। रायटका जन्म डण्डेमें ही हुआ था। इस प्रकार पिट्सबर्गके तारघरमें खबर पहुंचानेके लिये तीन नवयुवक नियुक्त हुए थे, जो डाकघरमें प्रति सप्ताह वेतनपर कार्य्य किया करते थे। इन लोगोंको बारी बारीसे प्रातः सायं आफिसमें झाड़ लगानी पड़ती थी। माननीय मोर्शयड और सालिसिटर मोरलैण्डने

भी इसी समय कारनेगीके तारघर हीमें काम शुरू किया था। अमेरिका स्वतन्त्रताकी अवकाश-भूमि है। क्षुद्र मनुष्य भी परिश्रमके बलसे वहां ऊंचेसे ऊंचे पदपर पहुंच सकता है। रंग और जाति इसमें बाधक नहीं है। जो यथार्थमें परिश्रमी हैं, उनके सामने उन्नति हाथ जोड़े खड़ी रहती है। भगवन्! क्या भारतवर्षमें भी कभी ऐसा दिन दिखायी पड़ेगा, जब यहांका दरिद्र कुलोत्पन्न व्यक्ति भी परिश्रम और ईमान्दारीके बलसे भारतीय संयुक्त राष्ट्रके अध्यक्षका पद ग्रहण करनेमें समर्थ हो सकेगा? अस्तु।

तार पहुंचानेवाले बालकोंको कई प्रकारसे आनन्द प्राप्त हुआ करता था। फलकी दूकानोंमें शीघ्र तार पहुंचानेसे भरपेट सेब खानेका मौका मिलता था। हलवाई और नान-बाईकी दूकानोंमें रोटी और मिठाई मिला करती थी। अच्छे अच्छे लोग शीघ्र तार पहुंचानेपर लड़कोंकी तारीफ कर दिया करते थे। यथार्थमें लोगोंका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करनेके लिये इससे बढ़कर कोई दूसरा साधन नहीं है। चतुर लोग ऐसे ही चालाक और गर्वशील लड़कोंकी खोजमें रहते हैं। एक निश्चित सीमाके बाहर तारको खबर पहुंचानेपर १० सेंट अलग चार्ज वसूल किया जाता था और वह तार पहुंचानेवालेका होता था। कभी कोई ऐसा तार हाथमें आनेपर सब उसे पहुंचानेके लिये झगड़ने लग जाते थे। कभी कभी सभी लड़के बारी बारीसे ऐसे तारोंको पहुंचाया

करते थे। इसके लिये कारनेगीने प्रस्ताव किया कि ऐसे तारोंको पहुंचानेसे जो आमदनी हो, सब एक स्थानपर जमा रखी जाय और सप्ताहके अन्तमें बांट ली जाय। चरित्रनायक ही इसका खजाञ्ची बनाया गया। इसके बाद फिर शांति रही। कारनेगीने पहलेपहल इस आर्थिक सहयोगमें भाग लिया।

लड़के इन पैसोंको खूब मिठाई उड़ाया करते थे। पासमें ही एक हलवाईकी दूकान थी और सभी उसके यहां जाकर जम जाते थे। कभी कभी तो जमासे खर्च ही बढ़ जाता था। इसलिये खजांचीने हलवाईको बाजाब्ता नोटिस दे दिया था कि यदि कोई बालक आमदनीसे ज्यादा खर्च कर देगा तो वह उसके लिये देनदार नहीं होगा। राबर्ट पिट कर्न इस सम्बन्धमें सबसे बड़ा अपराधी था। एक दिन कारनेगीने एकान्तमें उसे बहुत फटकारा। इसपर राबर्टने जवाब दिया—"मेरे पेटमें बहुतसे ऐसे कीड़े हैं, जो जबतक मिठाई नहीं खाते, तबतक पेट खखोरा करते हैं। उन्हींको सन्तुष्ट करनेके लिये मैं इतनी ज्यादा मिठाई खाता हूं।

पञ्चम परिच्छेद

सरस्वतीकी उपासना

इतना आनन्द मिलनेपर भी कारनेगी प्रभृतिको कठिन काम करना पड़ता था। प्रति दूसरे दिन आफिस बन्द होने तक उसे 'ड्यूटी' पर हाज़िर रहना पड़ता था और घर आते आते रातका ११ बज जाता था। नहीं तो ६ बजे सन्ध्या समय ही छुट्टी मिला करती थी। इससे आत्मोन्नति करनेकी सुविधा नहीं मिलती थी। परिवारकी भी आर्थिक अवस्था ऐसी नहीं थी जिससे कोई पुस्तक खरीदकर वह पढ़ सके। पर ऐसे समयमें एक सुवर्णमय संयोग उपस्थित हुआ और साहित्य जगत्का द्वार कारनेगीके लिये उन्मुक्त हो गया।

पिट्सबर्गमें कर्नल जेम्स एण्डरसन नामक एक सज्जन रहते थे। इन्होंने अपनी ४०० पुस्तकोंकी एक लाइब्रेरीको मजूर बालकों के लिये खोलते हुए सूचना निकाली कि कोई भी बालक प्रति शनिवारको एक पुस्तक पढ़नेके लिये ले जा सकता है और अगले शनिवारको पुस्तक लौटाकर वह फिर दूसरी पुस्तक लेनेका अधिकारी हो सकता है। अब प्रश्न यह उठा कि कारनेगी प्रभृति 'मजूर बालक' की हैसियतसे पुस्तक लेनेके अधिकारी

थे या नहीं ? कारनेगीने "पिट्सबर्गडिसपैच" नामक समाचार
पत्रमें एक पत्र लिखकर कर्नेल एण्डरसनसे प्रार्थना की कि
तारघरमें काम करनेवालोंको भी पुस्तक लेनेकी सुविधा हो
जाय, क्योंकि यद्यपि वे लोग हाथसे काम नहीं करते थे, पर
उन लोगोंमें कुछ लड़कोंने पहले ऐसा काम किया था और वे
लोग यथार्थमें 'मजूर बालक' ही थे। कर्नेल एण्डरसनने शीघ्रही
चरित्रनायक प्रभृतिको भी पुस्तक लेनेकी सुविधा कर दी।
इस प्रकार कारनेगी अपने प्रथम समाचारपत्रलेखनमें सफल
हुआ था। टाम मिलर नामक कारनेगीके मित्रने कर्नेल
एण्डरसनसे उसका परिचय करा दिया। इस प्रकार ज्ञान
प्रकाशके प्रवेशका द्वार और भी उन्मुक्त हो गया। पुस्तक-पाठके
द्वारा दिनभरकी थकावट और सब प्रकार की चिन्ता दूर हो
जाया करती थी। शनिवार की प्रतीक्षा बड़ी उत्सुकताके
साथ की जाती थी। इस प्रकार चरित्रनायक, मैकालेके लेख,
उसके लिखे हुए ऐतिहासिक ग्रन्थ तथा बैनक्रोफ्ट लिखित
अमेरिकाके संयुक्तराष्ट्रके इतिहाससे परिचित हो गया। अमे
रिकाके इतिहासको कारनेगीने बड़े ध्यानसे पढ़ा। लैम्बरचित,
शेक्सपियरके नाटकोंकी कथाएं पढ़नेमें उसका खूब मन
लगता था। तबतक कारनेगी शेक्सपियरके नाटकोंके रसा
स्वादनसे वंचित था। इसके कुछ दिनों पीछे पिट्सबर्गके थिये
टरमें शेक्सपियरके नाटकोंका अभिनय देखकर ही चरित्रनायकके
मनमें शेक्सपियरके नाटकोंका प्रेम प्रतिष्ठित हुआ था।

इस प्रकार कर्नेल एण्डरसनकी उदारतासे कारनेगी सरस्वतीकी उपासनामें दत्तचित्त रहने लगा। चरित्रनायकने अपने आत्मचरित्रमें लिखा है—"कर्नेल एण्डरसनकी कृपासे ही साहित्यमें मेरा अनुराग उत्पन्न हुआ। मैं इस अनुरागको करोड़ों रुपयेसे भी नहीं बदल सकता। इसके बिना तो जीवन ही भार है। इसीसे मैं बुरी संगतसे बचा रहा"। कारनेगीने इस उपकारका बदला भी अच्छी तरह दिया। भाग्यलक्ष्मीके सुप्रसन्न होनेपर चरित्रनायकने कर्नेल एण्डरसनका एक स्मारक *अलेगेनी पुस्तकालयके सम्मुख स्थापितकर* उसपर निम्नलिखित वाक्य अंकित कर दिये—

"पेन्सिलवेनियाकी फ्री लाइब्रेरीके संस्थापक कर्नेल *जेम्स एण्डरसनकी पवित्र स्मृतिमें।* उन्होंने अपने पुस्तकालय को मजूर बालकोंके लिये खोलकर और प्रति शनिवारको 'लाइब्रेरियन' का काम करके, न केवल पुस्तकोंको, बल्कि स्वयं अपने शरीरको इस पवित्र कार्यके लिये अर्पित कर दिया था। यह स्मारक उनकी कृतज्ञतापूर्ण स्मृतिमें एण्ड्रू कारनेगी के द्वारा स्थापित किया जाता है जो "एक मजूर बालक" था और जिसके लिये ज्ञानप्राप्तिका द्वार उन्मुक्त किया था—जिसकी सहायतासे मनयुवक उन्नतिके मार्गमें भ्रमण करनेमें समर्थ हो सकते हैं।"

कारनेगी जीवनभर कर्नेल एण्डरसनको श्रद्धाकी दृष्टिसे देखता रहा। इसी आदर्शको सामने रखकर चरित्रनायकने

करती थीं। वह कनफ्यूशियसके इस सिद्धान्तको, माननेवाली थीं कि "इस संसारके कर्त्तव्योंका पालन भलीभांति करना चाहिये। दूसरे लोककी चिन्ता करनेकी आवश्यकता नहीं है। यही सबसे बढ़कर बुद्धिमत्ता है।"

यद्यपि कारनेगीकी माता अपने पुत्रोंको गिरजा और रविवारके स्कूलोंमें जानेके लिये उत्साहित करती थीं, पर यह स्पष्ट था कि वह बाइबिलकी रचना तथा 'स्वेडेन बोरजियन समिति' को ईश्वरीय प्रमाणसे प्रमाणित नहीं मानती थीं। चरित्रनायकपर स्वेडेन बोरजियन समितिका पूरा प्रभाव पड़ा। इसकी धर्म-चर्चाओंमें भाग लेकर वह लोगोंकी वाद वादी खूब लूटा करता था। उसकी चाची परकिंस उसे बराबर बधाई दिया करती थी और कहा करती थी कि कारनेगी आगे-चलकर 'जगद्गुरु' हो जायगा। इसी समितिमें भाग लेनेके समय कारनेगीके मनमें संगीतके प्रति प्रेम उत्पन्न हुआ। समितिकी प्रार्थना-पुस्तकके अन्तमें कुछ भजन थे और उन्हें चरित्रनायक सबके साथ मिलकर दुहराया करता था। स्वर अच्छा नहीं रहनेपर भी कारनेगी बड़े उत्साहसे इसमें भाग लेता और कुछ त्रुटि होनेपर भी इसका नायक मि० कोपेन उसे क्षमा कर दिया करता था। कारनेगीके पिता भी स्काटलैण्डके संगीतको बराबर गाया करते थे और चरित्रनायकने इन सभी गीतोंके स्वर-तालको अच्छी तरह सीख लिया था। चरित्र नायकके पिता अच्छे गानेवालोंमेंसे थे और कारनगीमें उन्होंने

संगीत प्रेम प्राप्त किया था। कन्फ्यूशियसके ये वाक्य सर्वदा उसके कर्ण-कुहरमें प्रतिध्वनित होते रहते थे, "पवित्र संगीत! तुम ईश्वरकी मधुर शिक्षा हो। तुम्हारी पुकार सुनते ही मैं आनन्दसे मुग्ध हो जाता हूं।"

इसी समय एक और घटना हुई, जिससे कारनेगीके माता पिताकी उदार-हृदयताका परिचय मिलता है। तार पहुंचाने वालोंको रविवार वगैरहकी छुट्टी नहीं मिला करती थी—केवल गरमीमें दो सप्ताहका अवकाश मिलता था। कारनेगी उस अवकाशको ओहियो नदीमें नौ-क्रीड़ामें बिताया करता था। बर्फपर 'स्केटिंग' करनेमें भी चरित्रनायकको बड़ा आनन्द मिलता था। उसके घरके बगलमें ही जाड़ेके दिनोंमें नदीके ऊपर बर्फ जम जाया करता था। शनिवारकी रातमें देरकर घर पहुंचनेपर प्रश्न उठा कि चरित्रनायकको खूब सबेरे उठाकर गिरजा जानेके पहले 'स्केटिंग' करने दिया जाय या नहीं? स्काच माता पिताओंके सामने इससे बढ़कर कठिन समस्या दूसरी पेश नहीं हुई थी। माताका मत तो स्पष्ट था कि चरित्रनायकको यथेच्छ 'स्केटिंग' करने दिया जाय। पिताने कहा—"हां, वह स्केटिङ्ग करने जा सकता है, पर मुझे आशा है कि वह गिरजा जानेके पहले ही अवश्य लौट आवेगा।" वर्तमान कालमें अमेरिकाके हजार माता पिताओंमेंसे ९९९ की राय यही होगी। इंगलैण्डमें भी यही बात होगी, पर स्काटलैंड के लिये यह नयी बात थी। आजकल ईसाई-जगत्‌में लोगोंका

विचार हो रहा है कि रविवारके दिनको पापोंके प्रायश्चित्तमें नहीं बिताकर उस दिनको झगड़े-झंझटसे दूर रहकर आनन्दमय बनानेकी पूर्ण चेष्टा करनी चाहिये, पर चरित्रनायकके माता पिता आजसे ८० वर्ष पूर्व ही इस मतके थे। वे अपने समयके अपवादस्वरूप थे—कारण उनके लोगोंमें रविवारके दिन धार्मिक ग्रन्थोंके पाठको छोड़कर अन्य आमोदपूर्ण कार्यमें भाग लेनेकी सख्त मनाही थी।

षष्ठ परिच्छेद

उन्नतिके पथमें

कारनेगीको तारघरमें काम करते हुए १ वर्ष बीत गया। उन दिनों कर्नल जान ग्लास नामक सज्जन तारबाबूका काम करते थे। चरित्रनायकको कार्यकुशल जानकर जब वे कुछ मिनटके लिये बाहर चले जाते तो अपने पीछेमें काम देखनेका भार उसको ही देकर जाते। मि० ग्लासको जनता बहुत चाहती थी और स्वयं भी वे राजनीतिक क्षेत्रमें प्रवेश करनेके अभिलाषी थे। अतएव बीच बीचमें वे धंटों लोगोंसे मिलने चले जाया करते थे और कारनेगीको ही उनका काम संभालना पड़ता था। धीरे धीरे कारनेगी उस कार्यमें भी पटु हो गया। सर्वसाधारणसे तारकी खबरोंको लेना और जो तार बाहरसे आते थे उन्हें 'लड़कों' के द्वारा शीघ्र पंहचानेकी व्यवस्था करने का काम वह भलीभांति सम्पादन करने लगा।

कार्य कुछ सामान्य नहीं था। विशेषकर सहकारी बालकों को मनमें यह सोचकर बड़ी ईर्ष्या होती थी कि कारनेगी तार पहुँचानेका काम न करके बाबू बनकर बैठा रहता है। और बालकोंकी तरह कारनेगी भरपेट मिठाई भी नहीं खाता था

और न उनके अलसमें शरीक हुआ करता था। वे लोग इस बातको जानते थे कि कारनेगीके घरकी आर्थिक अवस्था अच्छी नहीं है, पर तो भी बाल-स्वभावके कारण वे चरित्र नायकसे अला करते थे। पर कारनेगी तो घरकी मद्रत अवस्था से परिचित था। वह अपने पिता माता और अपनी कमाईकी रकमका पूरा लेखा जानता था। घरके खर्चके लिये महीनेमें कितना चाहिये, यह भी उसे भलीभांति मालूम था। इस दशामें वह एक छदाम भी व्यर्थ कैसे खर्च कर सकता था?

चरित्रनायककी माता भी बड़ी संयमशीला थी। जब कभी कुछ बचत होती थी, वे उसे बड़े यत्नसे जमा करती जाती थीं। अन्तमें तपस्या पूरी हुई। १०० डालर संग्रह होनेपर २० पौंड उधारद्रव्या श्रीमती हेन्डरसनको भेज दिया गया और इस प्रकार कारनेगी परिवार ऋणमुक्त हो गया। उस दिनके आनन्दका क्या पूछना है! ऋण तो चुका दिया गया पर कार नेगी परिवार उस महिलाका चिर कृतज्ञ बना रहा। चरित्र नायक उमफरलिन आनेपर बराबर श्रीमती हेन्डरसनका दर्शनकर कृतज्ञता प्रकाश किया करता था।

कारनेगी धीरे धीरे कर्नेल ग्लासका सहायक हो उठा। एक प्रणियारकी कर्नेल ग्लास सभी बालकोंको मासिक वेतन बाँट रहे थे। सभी एक पंक्तिमें खड़े थे और कर्नेल महाशय सबको एक एक कर एक मासका ११। डालर देते जाते थ। कारनेगी की बारी आनेपर उन्होंने उसे पूछा भी नहीं और दूसरे बालक

को वेतन दे दिया। कारनेगीके तो होश उड़ गये। वह सोचने लगा, 'हमने ऐसा कौनसा अपराध किया या कर्तव्यपालनमें त्रुटि की जिससे मेरा वेतन रोका जा रहा है। अब तो मैं परिवारको मुंह दिखानेके योग्य भी नहीं रहूंगा।' जब सभी लड़के वेतन पाकर चले गये तो कर्नल ग्लासने कारनेगीको एकान्तमें ले जाकर कहा—'तुमने और बालकोंसे अच्छा काम किया है अतएव तुम्हें उनसे अधिक वेतन मिलेगा।' यह कह कर उन्होंने चरित्रनायकके हाथमें १३॥ डालर दे दिये। कारनेगीका माथा चकरा गया। उसे भ्रम हुआ कि कहीं उससे सुननेमें भूल तो नहीं हुई। डालर गिने तो पूरे निकले। हर्षके मारे कारनेगी विह्वल हो उठा। छलांग मारते हुए वह एकदममें घर जा पहुंचा। ११। डालर तो माताको दे दिये और सवा दो डालर अपने पाकेटमें ही रख छोड़े। उसके बाद चरित्र नायकने अरबों उपार्जन किया, पर जैसा आनन्द उस सवा दो डालरसे मिला था, वैसा कभी नहीं मिला। रातमें सोते समय टामको यह रहस्य बताया गया। दोनो भाई मिलकर भविष्यके कार्यक्रमपर विचार करने लगे। कारनेगीने प्रस्ताव किया कि दोनों भाई मिलकर "कारनेगी ब्रदर्स" के नामसे एक फर्म खोलेंगे और भारी व्यापारी बनेंगे और तब माता पिताको जोड़ीपर बैठाकर शहरमें घुमायेंगे। केवल पिट्सबर्गमें ही नहीं दोनों भाइयोंका विचार हुआ कि डनफरलिन जाकर वहाँ उन लोगोंकी सवारी निकले। मालूम होता है कि ईश्वरने इन दोनों शुद्ध

आत्माओंकी आन्तरिक इच्छा पूर्ण हो !! कारनेगीका भविष्य जीवन इसका साक्षी है ।

रविवारके प्रातःकालको जब सभी जलपान करने एक साथ बैठे, उस समय चरित्रनायकने उन डालरोंको निकालकर सबको चकित कर दिया। चरित्रनायकके पिताने स्नेहपूर्ण नेत्रोंसे पुत्रकी ओर देखा और माताकी आँखें प्रेमाश्रुसे छल-छलाने लगीं। उन्हें यह जानकर हर्ष हुआ कि उनका पुत्र उन्नति कर रहा है। बालक कारनेगीके मनपर भी इसका बड़ा प्रभाव पड़ा। उसे संसार स्वर्गमय प्रतीत होने लगा।

तारघरके बालकोंको प्रातःकाल ही आफिसमें झाड़ू देनी पड़ती थी। तारबाबुओंके आनेके पूर्व उन लोगोंको इंस्ट्रूमेंटको 'टिकटिक' करनेका मौका मिला करता था। कारनेगीने इस अवसरको भी हाथसे नहीं जाने दिया और शीघ्र ही तार देनेका काम सीख लिया। दूसरे तारघरोंमें भी कुछ ऐसे ही बालक थे—उनके साथ बातचीत चलने लगी। कुछ नयी बात सीखकर उसे व्यवहारमें लानेकी इच्छा लोगोंके हृदयमें उत्पन्न होना स्वाभाविक है और कारनेगी भी इस नियमका अपवाद नहीं था।

एक दिन प्रातःकाल जब चरित्रनायक तारघरमें झाड़ू लगा रहा था, उसी समय पिट्सबर्गके तारघरसे जोरोंकी घंटी बजी। कारनेगीने समझा कि कोई जरूरी खबर होनेके कारण ही इस प्रकार जोरसे घंटी बजायी जा रही है। उसने

साहसकर तार ग्रहण करनेका निश्चय किया और भेजनेवालेसे कहा कि धीरे धीरे खबर भेजनेसे वह उसे ग्रहण कर सकता है। खबर मिल गयी और उसे लेकर कारनेगी पानेवालेके पास दौड़कर पहुंचा आया। मि० ब्रूक्सके आनेपर सब हाल उनसे कह दिया। सौभाग्यवश मि० ब्रूक्सने चरित्रनायककी बड़ी तारीफ की और उत्साह प्रदान किया, पर भविष्यमें और भी सावधान होने तथा गलतीसे बचनेका आदेश दिया। अब जब कभी तारबाबू अनुपस्थित होता था, कारनेगी ही उसका काम कर दिया करता था। इस प्रकार वह तार देनेमें छुपटु हो गया।

तार बाबू बड़ा सुस्त और काहिल आदमी था। कारनेगीके काम कर देनेपर वह बड़ा प्रसन्न होता था। धीरे धीरे चरित्र नायकने इस कार्यमें अच्छी प्रवीणता प्राप्त कर ली। कुछ दिनोंके बाद ही पिट्सबर्गसे ३० मील दूर ग्रीन्सबर्ग नामक स्थानमें जासेफ टेलर नामक एक तारबाबूने दो सप्ताहकी छुट्टी लेनी चाही। मि० ब्रूक्सने कारनेगीको बुलाकर पूछा, "नेन! क्या तुम ग्रीन्सबर्ग जाकर काम संभाल सकोगे?"

"हां, महाशय, मैं भलीभांति काम कर लूंगा।"

"अच्छा, मैं तुम्हें परीक्षाके तौरपर एकबार भेजता हूं।"

कारनेगी एक मेलकोचमें बैठकर ग्रीन्सबर्गको चला। रास्ता बड़े आनन्दसे कटा। पहली ही बार चरित्रनायक अमेरिकामें घरके बाहर सैर करने निकला था। ग्रीन्सबर्गका होटल ही पहला सार्वजनिक भोजनालय था, जहां कारनेगीने घरसे बाहर

भोजन किया था। मट्ठेका भोजन उसे अमृतके समान सुस्वादु प्रतीत हुआ।

यह सन् १८५२ ई० की बात है। ग्रीन्सबर्गके निकट पेन्सिल वेनिया रेल रोड बन ही रही थी। कारनेगी रोज सवेरे उठकर रेल रोडपर घूमा करता था। पीछे चलकर परिचनायक उसी रेलवे कम्पनीका एक श्रेष्ठ कर्मचारी हो गया। तार विभागमें कारनेगीने यह बड़ा ही उत्तरदायित्वपूर्ण कार्यभार उठाया था, अतएव वह प्राणपणसे अपने कर्तव्यका पालन करनेकी चेष्टा किया करता था। एक दिन बड़े जोरसे आंधी आयी और वर्षा होने लगी। कारनेगी तारके 'कनेक्सन्'के बिल्कुल निकट बैठा था। अचानक उसे जोरोंसे बिजलीका धक्का लगा और वह कुर्सीसे दूर जा गिरा। इसके बाद वह बड़ी सावधानीसे रहने लगा। कारनेगीके कामसे सभी सन्तुष्ट हुए और दो सप्ताहके बाद वह विजयी वीरकी तरह विद्युत्घरको लौट आया। शीघ्र ही पदोन्नति हुई। उस समय एक सहायक तार बाबूकी आवश्यकता हुई और मि० ब्रूक्सकी सिफारिशपर परिचनायकको ही यह कार्य दिया गया। अब तो उसे मासमें २५ डालर मिलने लगे। कारनेगी २५ डालर मासिकको परिवारके व्यय निर्वाहके लिये यथेष्ट समझता था। अपनी कल्पनाको इतना शीघ्र कार्यरूपमें परिणत होते देखकर उसके आनन्दकी सीमा नहीं रही। उस समय कारनेगीकी अवस्था केवल १७ वर्षकी थी।

नवयुवकोंको तारघरमें अनेक बातोंकी शिक्षा मिल सकती है। वहाँ उन्हें सर्वदा लिखने-पढ़ने तथा भिन्न भिन्न प्रकारकी खबरोंसे परिचित होते रहनेका अवसर प्राप्त होता है। कारनेगीने यूरोप और अमेरिकाकी बातोंका जो ज्ञान पुस्तकोंद्वारा प्राप्त किया था उससे उसे बड़ी सहायता मिली। ज्ञान किसी प्रकारका क्यों न हो—यह कभी न कभी किसी काममें जरूर आता है। ज्ञान कभी व्यर्थ नहीं होता। विदेशी समाचारों और जहाजोंके आने-जानेकी खबरोंको ग्रहण करना चरित्रनायकका विशेष कार्य्य था। वह इस कामको पसन्द भी खूब करता था।

उस समय तार भेजने और ग्रहण करनेमें कल्पनासे अधिक काम लेना पड़ता था—कारण तारको व्यवहारमें लाये हुए बहुत ही कम दिन हुए थे और इसमें बहुत कुछ उन्नतिकी गुंजायश थी। कारनेगीकी बुद्धि तीक्ष्ण होनेके कारण वह बड़ी सफलतापूर्वक संवादमें छूटे हुए शब्दोंकी पूर्ति कर दिया करता था। विदेशी खबरोंके सम्बन्धमें ऐसा करना हानिकारक भी नहीं था। कारनेगीका विदेशी ज्ञान बहुत बढ़ गया—खासकर इंगलैण्डकी बातोंसे तो वह पूर्ण परिचित हो गया। दो एक शब्दोंको जानते ही वह पूरा वाक्य लिख दिया करता था और उसकी कल्पना प्रायः ठीक निकला करती थी।

विद्वत्वर्गमें उन दिनों जितने समाचारपत्र निकलते थे

सब अपने रिपोर्टरोंको तारघरमें भेजा करते थे और जो विदेशी संवाद आता था, सबकी नकलकर वे ले जाया करते थे। पीछे चलकर सब अखबारोंने मिलकर केवल एक आदमीको भेजनेका ठीक किया और कारनेगीके साथ यह व्यवस्था हुई कि वह विदेशी संवादोंकी ५ प्रतियां लिखकर दिया करे। इस कार्य्यके लिये उसे सप्ताहमें एक डालर ऊपरी मिलने लगा। इस प्रकार कारनेगी-परिवारकी आय बढ़ने लगी और भावी करोड़पति होनेकाःस्वप्न कुछ अंशोंमें पूरा होने लगा।

इसी समय कारनेगी "वेबस्टर-साहित्य सभा" में सम्मिलित हो गया। विद्वत्वर्गमें इस सभाकी बड़ी प्रतिष्ठा थी और इसका मेम्बर हो जानेपर चरित्रनायक बड़ा प्रसन्न हुआ। इसके पूर्वही कुछ लड़कोंने मिलकर एक "डिबेटिंग क्लब" स्थापित किया था, जिसमें भिन्न भिन्न विषयोंपर वादविवाद हुआ करता था। एक बार विवादका प्रश्न था—"क्या न्याय विभागका कर्मचारी भी जनताद्वारा निर्वाचित होना चाहिये?" कारनेगीने इसपर १॥ घंटेतक युक्तिपूर्ण व्याख्यान दिया था। कारनेगीने ऐसे क्लबोंकी बड़ी तारीफ अपने आत्मचरितमें की है। उसके विचारमें प्रत्येक नवयुवकको ऐसी समितियोंमें सम्मिलित होना चाहिये। इससे लाभ यह होता है कि विवाद्‌के लिये जो विषय स्थिर किया जाता है, उस सम्बन्धमें ग्रन्थोंको पढ़नेकी उत्तेजना होती है और विचारको स्पष्टरूपसे लोगोंके सामने प्रकट करनेका अभ्यास होता है। "वेबस्टर समिति" में

योगदान करनेके फलसे ही कारनेगीने आत्म निर्भरता और जनताके समक्ष उपस्थित होकर निर्भीकतापूर्वक भाषण करने की शिक्षा प्राप्त की थी। चरित्रनायकने जनताके सामने भाषण करनेके जो दो नियम बताये हैं, उन्हें भावी वक्ताओंको सर्वदा ध्यानमें रखना चाहिये—श्रोताओंके सामने सहज भावसे, बिना आडम्बर किये बात करनी चाहिये और भाषण देते समय सर्वदा अपने व्यक्तित्वको स्मरण रखना चाहिये। बहुतसे लोग भाषण देते समय जनतापर अपना प्रभाव जमानेके लिये कृत्रिम भावोंको प्रकट करते हैं, पर इससे उन्हें सफलता प्राप्त नहीं हो सकती। हृदयसे निकली हुई बात श्रोताओंके हृदय तक जा पहुंचती है। इसके लिये भाषण देते समय उछलने कूदनेकी जरूरत नहीं है। महात्मा गांधीके भाषणोंको जिन्होंने सुना है, वे उपर्युक्त कथनकी सत्यताका समर्थन मुक्तकण्ठसे करेंगे।

इधर चरित्रनायकने तार ग्रहण करनेकी कलामें भी पार-दर्शिता प्राप्त कर ली। अब यह टेमीकी ध्वनि सुननेके साथ ही खबरोंको लिख लिया करता था। लोग इस बातको आश्चर्यकी दृष्टिसे देखा करते थे। एक बार बड़ी बाढ़ आयी और स्टूबेनविल और ह्वीलिङ्ग नामक स्थानोंके बीच तारका सम्बन्ध विच्छिन्न हो गया। दोनों स्थानोंका अन्तर २५ मील था। कारनेगीको ही काम संभालनेके लिये स्टूबेनविल भेजा गया। यहांसे यह घंटेपर तारकी खबर नावके द्वारा भिजवानेका

प्रबन्ध हुआ। पिट्सबर्गसे जो कपड़े भेजनी होती थीं, वे आपके द्वारा भेजी जाती थीं। इस प्रकार एक सप्ताहतक काम चलता रहा। उन्हीं दिनों चरित्रनायकके पिता 'टेबल कलाथ' बेचनेके लिये होलिडे आ रहे थे। कारनेगीने बोटके पास आकर पिताका दर्शन किया। कारनेगीके पिताने किफायतके लिये केबिनका टिकट न लेकर साधारण यात्रियों की तरह डकपर आना ही स्थिर किया था। चरित्रनायकको यह जानकर क्रोध आया कि उसका पिता क्यों असुविधाके साथ यात्रा कर रहा है। अन्तमें कारनेगीने पितासे आकर कहा—"पिताजी! मां और आप अब शीघ्र ही गाड़ीपर चढ़कर घूमने निकला करेंगे।"

कारनेगीके पिता स्वभावतः अल्पभाषी थे, पुत्रके सामने वे उसकी तारीफ इस डरसे नहीं किया करते थे कि लड़का बिगड़ जायगा। इस अवसरपर पिता अपनेको नहीं संभाल सके और प्यारे पुत्रका हाथ प्रेमपूर्वक पकड़कर कहा—

"अन्द्रा, मुझे तुम्हारे जैसे सुपुत्र पानेका गर्व है।"

इतना कहकर वे कुछ और नहीं बोल सके और उनके नेत्रोंसे प्रेमाश्रु टपकने लगे। कारनेगीने आंसू पोंछ डाले और पितासे विदा होकर अपने दफ्तरको वापस गया। अनेक वर्षोंतक कारनेगी इस पवित्र वाक्यको स्मरणकर अपनेको धन्य समझता था।

पिट्सबर्ग ऑफिसपर कारनेगीकी दोस्ती "टामस ए०

स्काट" नामक सज्जनसे हुई। वे पेन्सिल वेनिया रेलरोडके निरीक्षक बनकर आये थे। उन्हें अपने उच्चाधिकारियोंके साथ बातचीत करनेके लिये तारकी ज्यादा जरूरत हुआ करती थी और इस कामके लिये रातको भी वे तारघर पहुंचा करते थे। कारनेगी प्रायः रातको तारघरमें रहता था और मि० स्काट का काम कर दिया करता था। मि० स्काटने एक दिन कारनेगीको अपना क्लर्क और तारबाबू बनानेका विचार प्रकट किया। चरित्रनायक चटपट राजी होगया। सन् १८५३ ई० की १ ली फरवरीको वह ३५ डालर मासिकपर नवीन पदपर नियुक्त हुआ। २५ डालरसे ३५ डालर मासिक पाकर चरित्रनायकके हर्षकी सीमा नहीं रही। उन दिनों एकाएक दश डालर मासिककी तरक्की असाधारण बात समझी जाती थी। एक सार्वजनिक तारघर मि० स्काटके आफिसके बाहरी भागमें खोल दिया गया और जनताके कामोंमें बिना व्याघात पहुंचाये 'तार' के द्वारा खबर भेजने की उन्हें पूरी स्वतन्त्रता दी गयी। इस प्रकार हमारा चरित्र नायक दिन दिन उन्नतिके पथमें अग्रसर होने लगा।

सप्तम परिच्छेद

रेलकी नौकरी

शाल्मरके कामको छोड़कर कारमगांधीने विस्तृत कार्यक्षेत्रमें प्रवेश किया, पर यह परिवर्तन आरम्भमें उसे रुचिकर नहीं लगा। उस समय चरित्रनायकने १८ वाँ वर्ष समाप्तकर १९ वें वर्षमें प्रवेश ही किया था। इस बीचमें उनने अपने जीवनमें कभी एक भी अपशब्दका प्रयोग नहीं किया था और भले मानुसोंके बीचमें लालित पालित होनेके कारण उसे अपशब्दोंके सुननेका भी मौका नहीं मिला था। पर इस नये काममें उसे सब प्रकारके आदमियोंसे काम पड़ा। मि० इस्काटका आफिस दो ब्रेक्समैन और ड्राईवर आदिका अड्डा था। ये लोग वहां आकर तरह तरहकी बातें किया करते और अपशब्दोंका भी प्रयोग करते थे। कारमगांधीने जीवनमें पहलेपहल ऐसी बातें सुनीं, पर इसका चरित्रनायकपर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। ब्राह्मसमाज घरके पवित्र संसर्गसे और चरित्रवान युवक मित्रोंके सहवाससे इन बुराइयोंने चरित्रनायकके मनपर कुछ भी असर नहीं पड़ पाया। बुराईसे भी कभी कभी भलाई हुआ करती है। कारमगांधीके मनमें इसी समयसे तम्बाकूके व्यवहारसे घृणा उत्पन्न हुई। अपशब्दोंके सुननेके लिये बस ऐसे इन्होंने

विरक्ति हो गयी और यह अभ्यास उसे जीवनपर्य्यन्त बना रहा। पर बात नहीं थी कि आफिसमें आनेवाले सभी दुश्च रित्र थे। उन दिनों तम्बाकू पीने, गालीगलौज करने और बात बातमें शपथ खानेकी आदत साधारण लोगोंमें सामान्य बात थी। रेलकी नयी सड़क बन रही थी और बहुतसे साधा रण श्रेणीके मनुष्य उसमें काम कर रहे थे। अन्तमें मि० स्काटने अपने लिये एक दूसरे आफिसका प्रबन्ध किया और सब गोलमाल मिट गया।

एकबार मि० स्काटने कारनेगीको मासिक वेतनके लिये चेक वगैरह लानेके लिये अलटूना नामक स्थानमें भेजा। उस समयतक अलगेनी पर्व्वततक रेलकी सड़क नहीं बन सकी थी और कारनेगीको पैदल ही वहाँतक यात्रा करनी पड़ी। इस यात्रामें बड़ा आनन्द आया। अलटूना पहुँचकर चरित्रनायकने रेलरोडके जनरल सुपरिंटेंडेन्ट मि० लम्बर्टसे भेंट की। उसका मित्र राबर्ट पिटकर्न मि० लम्बर्टके सेक्रेटरी का काम करता था। मि० लम्बर्टकी प्रकृति 'स्काट' से भिन्न प्रकारकी थी। वे उतने मिलनसार नहीं थे, पर मुलाकातके बाद जब लम्बर्ट साहबने चरित्रनायकको चायपानका निमन्त्रण दिया तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। धड़कते हुए दिलसे कार नेगीने निमन्त्रण स्वीकार किया और ठीक समयपर उपस्थित हुआ। श्रीमती लम्बर्टने बड़ा शिष्टाचार किया। मि० लम्बर्टने कारनेगीका परिचय यह कहकर दिया—"मि० स्काटका

'अण्डी' यही नवयुवक है।" मि० स्काटका प्रियपात्र होनेकी बात सुनकर चरित्रनायकको बड़ा आनन्द मिला था।

इसी यात्राके समय एक ऐसी घटना हो गयी थी, जिससे कारनेगीके जीवनमें गहरा धक्का लगता। चेक वगैरह लेकर जब दूसरे दिन वह पिट्सबर्ग चला तो रास्तेमें सड़ककी जाँच करनेवाले इञ्जिनपर चढ़ लिया। नयी सड़क होनेके कारण बीच बीचमें जोरोंका धक्का लगा करता था। एकबार धक्का लगनेपर कारनेगीने पाकेट टटोला तो देखा कि चेक वगैरहका कहीं पता ही नहीं है। अब तो कारनेगीके होश उड़ गये। वह आया था तो चेक लेने, पर राहमें उसे खोकर मि० स्काटको किस तरह मुंह दिखायेगा। कारनेगीको अपना भविष्य अन्धकारमय प्रतीत होने लगा। अन्तमें घबड़ाकर उसने इञ्जीनियरसे सभी बातें खोलकर कहीं, उससे इञ्जिनको फिर पीछे लौटा ले आनेका अनुरोध किया। इञ्जीनियर बेचारा बड़ा भला आदमी था। इञ्जिन पीछे लौटाया गया और कारनेगी बड़े ध्यानसे अपने पैकेटको देखने लगा। एक बड़ी नदीके किनारे—जलसे छुए ही हुए 'पैकेट' दिखायी पड़ा। कारनेगीको तो अपनी आँखोंपर विश्वास ही नहीं हुआ। झटसे वह इञ्जिनसे उतरा और दौड़कर 'पैकेट' को उठा लिया। सभी चीजें ठीक थीं। इसके बाद तो पिट्सबर्ग पहुँचनेतक वह उस पैकेटको मुट्ठीमें दबाये हुए ले गया। इस घटनाको केवल इञ्जीनियर और ड्राइवर ही ने जाना। उन्होंने इसको गुप्त रखनेकी प्रतिज्ञा की। इसके बहुत

दिनोंके बाद कारनेगीको इस घटनाको प्रकाशित करनेका साहस हुआ। एक सामान्य घटना कभी कभी मनुष्य-जीवनको किस प्रकार विपद्ग्रस्त कर सकती है—यह इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। मान लीजिये कि पैकेट नदीकी धारामें गिर पड़ता, फिर तो उसका कहीं पता भी नहीं मिलता। कारनेगी को असावधानताका सर्टिफिकेट मिलता और कई वर्षका घोर परिश्रम व्यर्थ जाता। वर्षों मेहनत करनेपर फिर कारनेगी अपने उच्च कर्मचारियोंका विश्वासपात्र मुश्किलसे बन सकता। हो सकता था कि शोक और लज्जासे पीड़ित होकर कारनेगी आत्महत्या ही कर बैठता। ऐसी दशामें क्या भयङ्कर परिणाम होता उसकी कल्पना पाठक सहजमें ही कर सकते हैं। कारनेगीके ऊपर इस घटनाका भी खूब प्रभाव पड़ा। अपने भविष्य जीवनमें भाग्यलक्ष्मीके सुप्रसन्न होनेपर कारनेगीने किसी नव युवकके दो एक भारी अपराध करनेपर भी उसपर कभी क्रोध नहीं किया। इसके बाद जब कभी चरित्रनायक उस राह होकर यात्रा करता था तो उस स्थानको ध्यानपूर्वक देख लिया करता था, जहां वह पैकेट गिर पड़ा था। उसको मालूम होता कि वह स्थान स्पष्ट शब्दोंमें कह रहा है—

"प्यारे लड़के! तुम्हारे देवता प्रसन्न थे। पर फिर ऐसी भूल न करना।"

उसी अवस्थामें चरित्रनायक 'गुलामीप्रथा' का पूरा विरोधी था और २२ वीं फरवरी सन् १८५६ ई० में पिट्सबर्गमें

कारनेगीने प्रत्येक ट्रेनकी स्थिति दिखला दी। सभी बातें ठीक थीं। एक सेकण्डतक मि० स्काटने कारनेगीको देखा, पर कारनेगी उनकी ओर नहीं देख सका। उसे मालूम नहीं था कि मि० स्काट क्या कहेंगे। मि० स्काटने कुछ बोलनेके पूर्व फिरसे सभी ट्रेनोंकी स्थितिको ध्यानपूर्वक देखा। फिर भी वे कुछ नहीं बोले और धीरेसे अपनी जगहपर आ बैठे। मि० स्काट ने कारनेगीको बुरा-भला कुछ भी नहीं कहा, पर इसके बाद वे कुछ दिनतक प्रातःकालमें नियमित रूपसे आने लगे। कारनेगीने भी इस घटनाकी चर्चा किसीसे नहीं की। कोई इस बातको नहीं जानता था कि मि० स्काटने आज्ञा नहीं दी थी। मि० स्काटने ही एक दिन माल-विभागके प्रबन्धकर्त्ता मि० फ्रान्सिसकससे कहा—

"आप जानते हैं, उस स्काच छोकड़ेने क्या किया था?"

"नहीं, तो!"

"यदि उस दिन उसने मेरी अनुपस्थितिमें मेरे नामसे आज्ञा देकर ट्रेनोंको न चलाया होता तो मेरी बड़ी बदनामी होती।"

"तो क्या उसने सब काम ठीक ठीक किया?"

"अरे! बिलकुल ठीक किया।"

इस वार्तालापकी सूचना मिलनेपर कारनेगीका मन शान्त हुआ। इसके बाद तो कारनेगी सभी मौकोंपर साहसपूर्वक

काम करने लगा। मि० स्काटने भी धीरे धीरे कारनेगीपर यह भार छोड़ दिया।

उस समय पेन्सिलवेनिया रेलवेके प्रेसिडेन्ट मि० जान एडगर टामसन थे। वे बड़े मितभाषी थे। एक दिन एकाएक मि० स्काटके तारघरमें आकर उन्होंने कारनेगीकी पीठ ठोकी और "स्काटका एन्डी" कहकर उसे प्रेमकी दृष्टिसे देखा। कारनेगीको बड़ा आश्चर्य हुआ। पीछे उसे मालूम हुआ कि मि० टामसनने भी चरित्रनायककी वीरताका हाल सुना था। बड़े लोगोंकी दृष्टिमें आनेसे ही नवयुवकोंके जीवनकी उन्नति का द्वार उन्मुक्त हो जाता है और जीवनयुद्धपर आंशिक विजय उसी समय प्राप्त हो जाती है। प्रत्येक नवयुवकको अपने कार्य क्षेत्रसे बाहरका कार्य भी करना चाहिये, जिससे उसके अधि-धिकारियोंकी दृष्टि विशेषकर उसीके ऊपर पड़ सके।

इसके कुछ ही दिनोंके बाद मि० स्काट दो सप्ताहकी छुट्टी लेकर गये और मि० लम्बर्टसे सिफारिश की कि चरित्र नायकको ही उनके स्थानमें कार्य्य करनेकी अनुमति दी जाय। कारनेगी उस समय २० वर्षका था और मि० स्काटका यह सिफारिश करना बड़े साहसका काम था। कहना नहीं होगा कि मि० स्काटकी प्रार्थना स्वीकृत हुई और कारनेगीने उनका कार्यभार संभाल लिया। इस बीचमें केवल एक दुर्घटना हुई। जिसकी असावधानीसे दुर्घटना हुई थी, उसे कठिन दण्ड दिया गया। मि० स्काटने भी आकर मामलेकी जांच की और कार

नेगीके भावको समझकर सजाको बहाल रखा। पीछे बेचारे चरित्रनायकके मनमें कठिन दण्ड देनेका बहुत दुःख हुआ और बहुत दिनतक बना रहा।

इस बीचमें कारनेगी परिवारकी आर्थिक अवस्था बहुत कुछ सुधर गयी थी। कारनेगीको अब मासमें ५० डालर मिला करते थे। मि० स्काटने अपनी इच्छासे ही ५ डालरकी वेतन वृद्धि कर दी थी। अबतक कारनेगी भाड़ेके घरमें ही रहता था। अब सबका विचार हुआ कि जिस मकानमें वे लोग रहते हैं उसीको खरीद लिया जाय। जिस मकानमें कारनेगीका सखा होगन रहता था, वह भी खाली हो गया था—वे लोग दूसरे मकानमें चले गये थे। इस चार कमरेवाले मकानको भी कारनेगी-परिवारने खरीद लिया और कारनेगीके अनुरोधसे मि० होगन भी पीछे आकर उसी मकानमें रहने लगा। मकान और जमीनका दाम ७०० डालर हुआ। १०० डालर तो नगद दे दिये और बाकी दाम किस्तपर अदा किया जाने लगा। कुछ ही दिनोंमें ऋण अदा हो गया, पर इसी बीचमें कारनेगी परिवारपर अचानक वज्रपात हुआ।

२ री अक्टूबर सन् १८५५ ई० को चरित्रनायकके पूज्य पिताका स्वर्गवास हो गया। परिवारके लोगोंके सामने कठिन समस्या उपस्थित हुई। जो कुछ बचा हुआ था, सब औषधिकी व्यवस्थामें स्वाहा हो गया था। हाथ बिलकुल खाली पड़ गया था। हिम्मत बांधकर कारनेगी और उसकी धीर माताने जीवन

युद्धमें भाग लिया और अध्यवसायके द्वारा जैसी सफलता प्राप्त की, वह मनुष्यके जीवनमें एक असाधारण घटना है।

मनुष्यके जीवनमें कभी कभी ऐसा काल उपस्थित हो जाता है, जब सहायताकी आवश्यकता होनेपर उसे कोई सहायता नहीं देना चाहता, पर जब किसीकी सहायताकी आवश्यकता नहीं रहती, उस समय लोग सहायता करनेके लिये दौड़ पड़ते हैं। जिस समय कारनेगीके पिताकी मृत्यु हुई थी, उस समय मि० डेविड मैककेन्डलेस स्वेडेनबोर्जियनसमितिके प्रमुख सदस्य थे। उन्होंने ब्यरिम्रमायकके माता पिताके आदर्श चरित्रके सम्बन्धमें पहलेसे ही सुन रखा था। समितिके अधिवेशनके समय वे लोग आपसमें दो एक बात कर लिया करते थे, पर कभी उन लोगोंमें घनिष्ठता उत्पन्न नहीं हुई थी। कारनेगीकी चाची एटकिनसे मि० डेविडकी अच्छी घनिष्ठता थी। कारनेगीके पिताकी मृत्युके बाद उन्होंने श्रीमती एटकिनसे कहला भेजा कि यदि कारनेगी-परिवारको किसी प्रकारकी सहायताकी आवश्यकता हो तो वे बड़ी प्रसन्नतासे सहायता देंगे। यद्यपि कारनेगीकी माताने बड़ी नम्रतापूर्वक सहायताको अस्वीकार कर दिया, पर जीवनपर्यन्त वह उनकी कृतज्ञ बनी रहीं। कारनेगीको इसके बाद इस बातपर पूर्ण विश्वास हो गया कि जो यथार्थमें सहायताके पात्र होते हैं, उन्हें ऐसे विपद् पूर्ण अवसरोंपर अवश्य सहायता मिला करती है। संसारमें ऐसे बहुतस सहृदय मनुष्य हैं, जो असहाय और विपत्तिमें मग्न

मनुष्योंको सहायता देनके लिये बराबर अवसर ढूंढा करते हैं। पर जो लोग स्वयं अपनी सहायता करते हैं, उन्हें दूसरोंकी सहायताकी कमी नहीं रहती। इस चरित्रलेखकका भी अपना अनुभव ठीक इसी प्रकारका है।

पिताकी मृत्युके बाद चरित्रनायकपर परिवारका बिल्कुल बोझ आ पड़ा। उसकी मां जूतोंकी मरम्मत करनेका काम करती ही रही। 'टाम' स्कूलमें पढ़ता था और कारनेगी मि० स्काटके साथ रेल्वेमें काम करता रहा। इसी समय कारनेगीपर लक्ष्मीकी कृपादृष्टि पड़ी। मि० स्काटने एक दिन उसे पूछा कि उसके पास ५०० डालर हैं या नहीं। ५०० डालर होनेसे उसे एक नफेके रोजगारमें लगाया जा सकता है। उस समय कारनेगीकी पूंजी ५ डालरसे अधिक नहीं थी, पर चरित्रनायक इस मौकेको हाथसे जाने देना भी नहीं चाहता था। साहसकर जवाब दे दिया—"अच्छा, मैं इसके लिये प्रबन्ध करता हूं।" इन डालरोंसे एक कम्पनीके कुछ शेयरोंका खरीदनेका विचार हुआ। घर आकर कारनेगीने मातासे सब हाल कह सुनाया। वह और माता भला कब हिम्मत हारनेवाली थी। दाम होमें मकानवालेको बाकी ५०० डालर दिये जा चुके थे। अब वे लोग फिर उसी मकानपर ५०० डालर कर्ज ले सकते थे। घर बंधक रखकर ५०० डालर लिये गये और मि० स्काटने दस शेयर कारनेगीके नामसे खरीद लिये। दुर्भाग्यवश १०० डालर और भी 'प्रिमियम' देना था, पर मि० स्काटने ठीक कर दिया कि

सुविधानुसार १०० डालर दे दिये जायंगे, इसके लिये कुछ जल्दी नहीं है। ऐसा करना कारनेगीके लिये आसान बात थी।

कारनेगीने अपने जीवनमें पहलेपहल व्यवसायक्षेत्रमें प्रवेश किया। उन दिनों कम्पनियां मासिक 'डिविडेन्ड' दिया करती थीं। एक दिन प्रातःकाल कारनेगीने अपने डेस्कपर एक सादा लिफाफा पड़ा देखा, जिसपर बड़े बड़े स्पष्ट अक्षरोंमें "श्रीमान ऐन्ड्रू कारनेगीकी सेवामें" लिखा हुआ था। धड़कते हुए दिलसे कारनेगीने उस लिफाफेको खोला। उसमें न्यूयार्ककी एक बैंकके नामसे १० डालरका चेक था। कारनेगीने अपने आत्मचरित्रमें लिखा है—"मैं उस चेकको जीवनपर्यन्त स्मरण रखूंगा। पूंजीके व्यवसायमें लगानेपर यही पहली बार मुझे नफेके रूपमें मिला था। ये डालर मेरे पसीनेकी कमाईके नहीं थे। मैंने मनमें सोचा—यह मुर्गी तो सोनेका अण्डा देती है।"

रविवारके तीसरे पहरको कारनेगीका मित्रमंडल प्राकृतिक शोभापूर्ण स्थानोंमें व्यतीत किया करता था। कारनेगीने उस चेकको अपने मित्रोंको दिखाया। मित्रमंडलीपर इसका बड़ा प्रभाव पड़ा। किसीको ऐसे लाभपर विश्वास नहीं होता था। इसके बाद सब मित्रोंने मिलकर कुछ पूंजी एक व्यवसायमें लगायी थी और जो कुछ थोड़ा नफा होता था उसे सब आपस में बांट लिया करते थे।

अबतक कारनेगीके परिचितोंकी संख्या अंगुली होपर गिननेयोग्य थी। मालगाड़ीके प्रबन्धकर्ता मि॰ फ्रांसिसकसकी

धनपती कारनेगीको बराबर अपने घरमें बुलाया करती, पर कारनेगी मारे लाजके वहाँ नहीं जाता। यहाँतक आग्रह करने पर भी धनिकनायकने उस महिलाके यहाँ निमन्त्रित होकर भी भोजन नहीं किया। दूसरेके घरमें जानेमें कारनेगीको अच्छा नहीं लगता था। मि० स्काटके बहुत कहने सुननेपर वह उनके साथ होटलमें जाकर खाया करता था। कारनेगीने अउदूनामें मि० लम्बर्ट और विट्सवर्थके हैंथम मि० फ्रान्सिसकसके गृहमें प्रवेश किया था। तबतक कभी कारनेगी रातमें किसी अपरिचित गृहमें नहीं रहा था। एकबार 'पिट्सबर्ग जर्नल' में एक लेख लिखनेके कारण पेन्सिलवेनिया रेलरोडके प्रधान सञ्चालक मि० स्टोक्सने कारनेगीको अपने घरमें निमन्त्रित किया था। घटना यों है—कारनेगीकी आदत बराबर समाचारपत्रोंमें लेख लिखते रहनेकी थी। सम्पादक बननेकी धुन उस लड़कपनमें खूब थी। एकबार कारनेगीने 'पिट्सबर्ग जर्नल' में पेन्सिलवेनिया रेलवे कम्पनीके प्रति जनताके भावोंके सम्बन्धमें एक लेख लिख भेजा। लेख भेजनेवालेका नाम नहीं दिया गया। दूसरे दिन कारनेगीको यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि उसके लेखका एक आदरपूर्ण स्थान दिया गया है। मि० राबर्ट रिडल सम्पादक थे। लेख पढ़कर मि० स्टोक्सने मि० स्काटको तार भेजकर कहा कि वे मि० रिडलसे लेखकका पता लगावें। मि० रिडलको तो खुद लेखकका नाम मालूम नहीं था—वे क्यों बताते। पर स्काटजीको डर हुआ कि यदि मि० स्काट स्वयं

सम्पादकके पास पहुच जायंगे तो मि० रिडल अवश्य ही हस्त लिखित कापी उन्हें दिखा देंगे और उस दशामें मि० स्काट कारनेगीकी हस्तलिपि अवश्य ही पहचान जायंगे, अतएव कारनेगीने सभी बातें खोलकर मि० स्काटसे कह दीं। मि० स्काटको विश्वास ही नहीं हुआ। उन्होंने भी लेख पढकर आश्चर्य्य प्रकट किया था। इसके बाद तो मि० स्टोक्सने अगले रविवारको कारनेगीको आमन्त्रित किया और वे दोनों गाढ़ मित्रताके सूत्रमें आबद्ध हो गये।

मि० स्टोक्सके घरकी सजावटने कारनेगीको मुग्ध कर दिया। सबसे बढ़कर प्रभाव उसके ऊपर एक संगमर्मर पर लिखे स्मरण पत्रसे पड़ा जो उनके पुस्तकालयमें रखा हुआ था। उसमें निम्नलिखित वाक्य लिखे हुए थे—

"जो तर्क करना नहीं जानता, वह मूर्ख है। जो तर्क नहीं करता, वह अन्धविश्वासी है और जो तर्क करनेका साहस ही नहीं करता वह गुलाम है"। कारनेगीके हृदयपर इन वाक्योंने बिजलीकी तरह असर किया। उसने मन ही मन निश्चय किया—"मैं भी एक पुस्तकालयकी प्रतिष्ठा करूंगा और उसमें भी ये ही वाक्य लिखे रहेंगे।" स्यूदार्य और स्किबोमें जो पुस्तकालय कारनेगीने स्थापित किये, उनमें उपर्युक्त वाक्य लिखे हुए हैं।

इस घटनाके कुछ वर्षोंके बाद एक रविवारके दिन श्री कारनेगी मि स्टोक्सके यहां गये। उस समय वे पेन्सिल्

पेनिया रेलवेके पिट्सबर्ग विभागके सुपरिन्टेन्डेन्ट हो गये थे। दास प्रथाको लेकर उत्तर और दक्षिण अमेरिकामें गृहयुद्ध प्रारम्भ हो गया था। मि० स्टोक्स 'डेमोक्रेट' दलके थे और उत्तरी संयुक्त राज्य जो जबर्दस्ती दक्षिण भागको अपनेमें मिलाये रखना चाहता था, उसके वे विरोधी थे। उस दिन बातचीतमें ही मि० स्टोक्सने कुछ ऐसे शब्दोंका प्रयोग किया, जिनको सुनकर कारनेगी आपेमें नहीं रहे और बोल उठे—"मि० स्टोक्स, आप जैसे लोगोंको हमलोग डेढ़ महीनेमें फांसी पर चढ़ा देंगे।" मि० स्टोक्सने हंसते हुए अपनी स्त्रीसे कहा—"मैग्सी, मैग्सी! देखो, यह स्काच छोकड़ा कहता है कि वह हमलोगोंको डेढ़ मासमें फांसीपर चढ़ा देगा।"

उन दिनों आश्चर्यजनक घटनायें हुआ करती थीं। कुछ ही दिनोंके बाद कारनेगी युद्धसचिवके आफिसमें चले आये और मि० स्टोक्सने स्वयंसेवकदलमें भरती होनेके लिये आवेदन पत्र भेजा। कारनेगीने चेष्टाकर मि० स्टोक्सको मेजरका पद दिला दिया और मि० स्टोक्सने उत्तरीप्रान्तकी ओरसे "अमेरिकन संघ" की एकताके लिये युद्धमें भाग लिया।

अष्टम परिच्छेद

उन्नतिके पथमें

उत्साहसम्पन्नमदीर्घसूत्रं क्रियाविधिज्ञं व्यसनेष्वसक्तम्।
शूरं कृतज्ञं दृढसौहृदं च लक्ष्मीः स्वयं याति निवासहेतोः ॥

सन् १८५६ ई० में मि० स्काट पेन्सिलवेनिया रेलवेके जेनरल सुपरिन्टेण्डेण्ट बनाये गये और अलटूना जाते समय चरित्रनायकको भी अपने साथ लेते गये। उस समय कारनेगी की अवस्था २१ वर्षकी थी। पितृस्वर्ग त्याग करते समय कारनेगीको अवश्य ही बहुत दुःख हुआ, पर कोई भी घटना उनकी उन्नतिके मार्गमें रोड़े डालनेमें समर्थ नहीं थी। उनकी माताने भी इसमें सम्मति दे दी। फिर मि० स्काटको भी कारनेगी गुरुवत् मानते थे। उनके कहनेपर वे आगमें भी कूदनेके लिये तैयार थे।

मि० स्काटके एकाएक सुपरिन्टेण्डेण्ट हो जानेसे कुछ लोगोंका हृदय जल उठा। इन्हें कार्य भार संभालनेके साथ ही एक भारी हड़तालसे सामना करना पड़ा। उससे पूर्व ही इनकी सहधर्मिणीका देहान्त हो चुका था और उनका जीवन सूना हो रहा था। अलटूनामें उनका परिचित भी कोई नहीं

था। कारनेगी ही उनके एकमात्र सहायक और मित्र थे। कुछ दिनतक तो दोनों साथ ही एक होटलमें ठहरे। पीछे मि० स्काटने अपने बालबच्चोंको पिट्सबर्गसे बुला लिया। कारनेगी भी उनके अनुरोधसे उन्हींके साथ एक ही कमरेमें रहने लगे।

हड़तालकी अवस्था भीषण होने लगी। एक रात लोगोंने चरित्रनायकको सोतेसे उठाकर मालगाड़ीके कर्मचारियोंके हड़ताल करनेकी सूचना दी। लाइन बिलकुल रुक गयी थी और गाड़ियोंका आना-जाना बन्द हो गया था। मि० स्काट उस समय गहरी नींदमें सो रहे थे, उनको उस समय जगाकर कहना कारनेगीको बड़ा कठिन मालूम हुआ—कारण मि० स्काट दिनभरके थकेमांदे थे। आखिर मि० स्काटकी नींद टूटी और कारनेगीने हड़तालकी जांच करने और निपटारा करनेके लिये आनेकी इच्छा प्रकट की। अर्द्ध निद्रित अवस्थामें ही मि० स्काटने अनुमति दे दी। कारनेगी कार्य्यालयमें गये और मि० स्काटके नामसे बातचीतकर हड़तालियोंको दूसरे दिन अदालतमें आनेका आदेश दिया। अन्तमें कारनेगीके प्रयत्नसे कर्मचारियोंने कार्य्य शुरू किया और हड़ताल समाप्त हो गयी।

केवल ड्राईवरोंने ही हड़ताल नहीं की थी वरन् दूकानदारोंने भी उनका साथ देनेका निश्चय कर लिया था। इसकी सूचना कारनेगीको विचित्र रूपसे मिली। एक रातको जब वे अन्य

कारमें ही घरकी ओर लौट रहे थे, उसी समय एक मनुष्य इनके पास आ पहुंचा और इनसे कहा—

"मैं नहीं चाहता कि लोग मुझे आपके साथ बात करते हुए देख लें, पर आपने एकबार मेरे ऊपर बड़ी दया की थी और उसी समय मैंने प्रतिज्ञा की थी कि अवसर आनेपर मैं आपको सहायता अवश्य करूंगा। आपकी सहायतासे मैं इस समय अलटूनामें मिस्त्रीका काम कर रहा हूं। याद कीजिये, मैंने पिट्सबर्गमें आपके पास मिस्त्रीके कामके लिये आवेदनपत्र भेजा था। आपने मेरे आवेदनपत्रको पढ़कर और मेरी सिफारिशोंको देखकर मुझे अलटूनामें काम दिला दिया था। अब मैं अपने बालबच्चोंके साथ चैन कर रहा हूं। अच्छा, मैं आपके लाभकी एक बात बताऊंगा—अगले रविवारको हड़ताल करनेके लिये सभी दूकानदार एक प्रतिज्ञापत्रपर हस्ताक्षर कर रहे हैं।"

कारनेगीने प्रातःकाल ही मि० स्काटको सभी बातें कह सुनायीं। मि० स्काटने एक नोटिस छपाकर रेलवेके सभी दूकानदारोंके पास भेज दिया कि जिन लोगोंने प्रतिज्ञापत्रपर हस्ताक्षर किये हैं, वे डिसमिस कर दिये जाते हैं, इसलिये वे आफिसमें आकर अपनी तनखाह ले लें। उसी बीचमें उन लोगोंके नामकी एक फिहरिस्त भी कारनेगीको मिल गयी थी, जिन्होंने हड़तालमें भाग लेनेके लिये हस्ताक्षर किये थे। दूकानदारोंमें बड़ी हलचल मची और हड़तालका अन्त हो गया।

कई मनुष्योंने समय समयपर चरित्रनायकको उस मित्रीके समान ही सहायता दी थी। साधारण मनुष्योंके साथ थोड़ा भी दयाका व्यवहार करनेसे वे सिपरचिह्न समय बड़े काममें आते हैं। उनकी सहायता बिना मांगे निकलती है। शुभ कार्य्योंका कभी नाश नहीं होता। कारनेगीका स्वभाव साधारणसे साधारण मनुष्यके साथ भी दयाका व्यवहार करनेका था। इसके बदलेमें समय समयपर उन्हें जो सहायता मिलती, उससे उनको बड़ा आनन्द मिलता था। ऐसी सहायता सर्वदा निःस्वार्थ हुआ करती है और यदि प्रत्युपकार करनेवाला अत्यन्त साधारण व्यक्ति हो तो आनन्दकी मात्रा शतगुण हो जाती है। "दरिद्रान्भर कौंतेय, मा प्रयच्छे-श्वरे धनम्"। दरिद्र—असहायोंको सहायता करनेमें जो आनन्द मिलता है, वह लक्षपतियोंकी सहायता करनेसे कहीं बढ़कर है।

इसी समय एक और घटना हुई। रेलवे कम्पनीपर किसीने नालिश कर दी और उस मुकदमेमें कारनेगी प्रधान साक्षी बनाये गये। मुकद्दमा मेअर स्टोक्सकी अदालतमें था। डर था कि मुद्दई कारनेगीको बागी करार देगा। मेअर स्टोक्स चरित्रनायकके पुराने परिचित थे। उन्होंने मुकदमेको मुलतवी रखनेका विचारकर मि० स्काटको सलाह दी कि कारनेगीको शीघ्रातिशीघ्र कहीं बाहर भेज दें। कारनेगीको युरपमें सैर करनेकी छुट्टी मिल गयी। वे ओहियोकी ओर चल पड़े। राहमें

वे एक गाड़ीमें बैठे हुए थे कि एक अपरिचित किसान उनके पास उपस्थित हुआ। आते ही उसने कहा—"ड्राईवरसे मुझे मालूम हुआ कि आपका सम्बन्ध पेन्सिलवेनिया रेलकी कम्पनीसे है। मैंने रात्रिमें भ्रमण करनेके समय सोनेकी सुविधाके लिये एक गाड़ीका आविष्कार किया है। आप उसके नमूनेको देखें" यह कहकर उसने अपने थैलेसे एक छोटासा नमूना निकालकर कारनेगीको दिखाया।

यह अपरिचित व्यक्ति प्रसिद्ध टी० टी० उडरफ था, जिसने सभ्यताकी एक आवश्यक सामग्री, सोनेवाली गाड़ियोंका आविष्कार किया था, इसका महत्व कारनेगीके ध्यानमें शीघ्र ही आ गया। उन्होंने उडरफको खबर देनेपर अल्टूना आनेका अनुरोध किया। अल्टूना लौटनेपर चरित्रनायकने मि० स्काटको सभी बातें कह सुनायीं। मि० स्काटकी सम्मतिसे उडरफको अलटूना बुलाया गया और दो गाड़ियों को रेलवे कम्पनीको देनेका कन्ट्राक्ट किया गया। इसके बाद जब उडरफने कारनेगीको भी उसमें शरीक करने और आठवां हिस्सा देनेका विचार प्रकट किया तो इनके आश्चर्यका ठिकाना नहीं रहा। झटसे इन्होंने उडरफकी बात मान ली और किसी तरह हिस्सेके रुपये देनेका संकल्प किया। कार नेगीको पहले महीनेमें २१०। डालर देना था। सालीय देकर मि० लायडसे इन्होंने उतने डालर ऋणस्वरूप मांगे। मि० लायडने सभी बातें सुनकर चरित्रनायकको आलिङ्गन करते हुए

कहा—"ठीक है, मैं आपको अवश्य रुपया दूंगा मि० मर्फी।" कारनेगीने अपने जीवनमें पहली बार एक रुक्का लिखा और एक वे करने उसके आधारपर उन्हें कर्ज दिया। एक युवकके व्याव सायिक जीवनमें यह अवश्य ही गौरवपूर्ण घटना है। सोनेवाली गाड़ियोंकी बड़ी कदर हुई और इसके जरिये चरित्रनायकने अच्छा लाभ उठाया।

अलटूना आनेपर कारनेगीने गृह कार्य्योंके झंझटसे माताको मुक्त करनेके विचारसे एक दाई रखनेका निश्चय किया। माताने बड़ी मुश्किलके बाद एक अपरिचित व्यक्तिको परिवारकी सीमाके भीतर घुसने देनेकी सम्मति दी। वीर माताने अपने दोनों लालोंके लिये असह्य कष्ट उठाये थे। भोजन बनाना, कपड़ा साफ करना, बिछावन करना, घर साफ करना और अपने पुत्रोंके आरामकी सभी व्यवस्था करना ही उसके जीवनका एकमात्र कार्य्य हो गया था। माताको इन स्नेहपूर्ण कार्य्योंसे छुड़ानेका कौन साहस कर सकता था? पर वृद्धावस्थामें माताको आराम देना जरूरी था। कारनेगीने बहुत हठ कर एक दाईको रखा, पर खाने पीनेमें फिर वह आनन्द मिलना नसीब कहां? इसके बाद अनेक दाइयां आयीं, पर माताके प्रेममय व्यवहारके सामने सब फीका ही मालूम होता। माताके हाथका भोजन करनेमें जो आनन्द मिलता है, वह एक भाड़ेके नौकरके हाथकी रसोई खानेसे कहांतक मिल सकता है? बालकपनसे ही कारनेगी केवल माताको जानते थे। उनके लिये माता ही सब

कुछ थी, अतएव आश्चर्य नहीं कि निर्धन बालककी ही अपने माता पिताके ऊपर विशेष श्रद्धाभक्ति देखी जाती है। धनियोंके लड़कोंके मां-बाप उनकी इच्छापूर्तिके मार्गमें बाधकस्वरूप ही होते हैं, फिर श्रद्धाभक्ति बालक कहांसे करेगा? कारनेगी इस सम्बन्धमें बड़े भाग्यवान थे। इनके पिता इनके शिक्षक, साथी और सहायक थे और माता तो इनके जीवनका आधार ही थीं। ऐसे पुण्यात्मा माता पिताकी संरक्षकतामें रहकर चरित्रनायकने जो कुछ शिक्षा ग्रहण की थी, वह धनियोंके बालकोंको दुर्लभ है।

श्रीकारनेगीको माताको यह परिवर्तन आरंभमें अच्छा नहीं मालूम हुआ, पर फिर वे भी इसकी आवश्यकता समझती थीं। उन्होंने पहली बार इस बातको स्मरण किया कि उनका बड़ा पुत्र अब उन्नति कर रहा है। चरित्रनायकने माताके चरणोंमें बैठकर निवेदन किया—"मां, तुमने हमलोगोंके लिये सबकुछ किया। टाम और मेरे जीवनका आधार तो तुम्हीं हो। अब मुझे भी कुछ सेवा करनेका अवसर दो। अब तुम घरके मामूली काम धंधोंको छोड़कर आराम करो और अड़ोसपड़ोसमें घूमकर अपना दिल बहलाओ। यह दाई तुम्हारी सब प्रकारसे सहायता किया करेगी।"

श्रीकारनेगीको विजय हुई। अब उनकी मां उन लोगोंके साथ बाहर घूमनेके लिये निकलने लगीं। उन्हें भद्रसमाजमें प्रवेश करनेके लिये कुछ सोचना नहीं पड़ा। एक भद्र महिलामें

जिन आदर्श गुणोंकी आवश्यकता होती है, सब उनमें स्वभाव से ही मौजूद थे।

मि० स्काटकी एक भतीजी थी, जिसका नाम मिस रेबेका स्टिवार्ट था। स्त्री वियोगके बाद वही मि० स्काटके घरका काम संभाला करती थी। कारनेगी उसे बड़ी बहन कहा करते थे। मिस स्टिवार्टकी संगतिमें चरित्रनायकको बड़ा आनन्द मिलता था। वे लोग साथ साथ घूमनेके लिये निकला करते। मिस स्टिवार्ट भी चरित्रनायकको छोटे भाई की तरह प्रेमकी दृष्टिसे देखती थी। अन्तकालतक यह पवित्र स्नेह बन्धन बना रहा।

मि० स्काट तीन वर्षतक अलटूनामें रहे। इसके बाद उनकी पदोन्नति हुई। सन् १८५९ ई०में वे कम्पनीके वाइस—प्रेसिडेण्ट बनाये गये। वे अब फिलेडेलफिया जाकर कार्य करनेवाले थे। प्रश्न यह उठा कि कारनेगी क्या करें! क्या वे भी मि० स्काटके साथ ही जायं या अलटूनामें ही नये सुपरिन्टेन्डेण्टकी अध्यक्षतामें कार्य करे। मि० स्काटका वियोग चरित्रनायकको असह्य हो रहा था। नये कर्मचारी के अधीन कार्य करना भी उन्हें भारी मालूम होता था। अन्तमें फिलेडेलफियामें प्रेसिडेण्टसे भेंटकर जब मि० स्काट लौटे तो उन्होंने कारनेगीको बुलवाकर अपने अधीन काममें आनेका पक्का निश्चय प्रकट किया और अन्तमें पूछा—

"अच्छा, अब तुम्हारे सम्बन्धमें। क्या तुम डिवीजनका विना नका कार्य्यभार अपने ऊपर ले सकोगे?"

चरित्रनायककी अवस्था उस समय २४ वर्षकी थी और ये अपनेको संसारके सभी कार्योंको करनेके योग्य समझते थे। इनके आदर्श लार्ड आन रसेल थे। वालेस और ग्रूसका भी आदर्श कारनेगीके आगे बराबर मौजूद रहता था। इन्होंने मि० स्काटके प्रश्नके उत्तरमें 'हां' कहा।

"अच्छा, तो पिट्सबर्ग विभागके सुपरिन्टेण्डेण्ट मि० पोट्स बदलकर फिलेडेल्फिया जा रहे हैं और मैंने तुम्हारे लिये प्रेसिडेण्टसे उनके स्थानपर कार्य करनेकी सिफारिश की थी। प्रेसिडेण्टने तुम्हें परीक्षाके रूपमें कार्यभार देना स्वीकार कर लिया है। अच्छा, तुम इस कार्यके लिये क्या वेतन लोगे?"

चरित्रनायकने झुंझलाकर कहा—"वेतन! वेतनके लिये कौन परवाह करता है! मैं वेतन नहीं चाहता, मुझे तो पद चाहिये। आपके पूर्वस्थान पिट्सबर्गमें सुपरिन्टेण्डेण्ट बन जाना ही मेरे लिये गौरवका विषय है। आप अपनी इच्छाके अनुसार मुझे वेतन दें। मैं जो कुछ अभी पाता हूं वही मेरे लिये यथेष्ट है।" उस समय चरित्रनायकको मासिक ६५ डालर मिला करते थे। मि० स्काटने कहा—"तुम्हें मालूम है कि पिटसबर्गमें काम करनेके समय मुझे १२५ डालर मासिक वेतन मिला करता था और मि० पोट्सको १५० डालर मिलते हैं। मैं समझता हूं तुम्हें आरम्भमें १२५ डालर मासिक देना ठीक होगा और कार्य्य ठीक रीतिसे करनेसे तुम्हारा वेतन भी १५० डालर मासिक कर दिया जायगा।

कारनेगीने उत्तर दिया—"बस, ठीक है। वेतनकी बातचीत मत कीजिये।"

सन् १८५६ ईस्वीकी १ ली दिसम्बरको कारनेगी पिट्सबर्गके सुपरिन्टेन्डेन्ट बनाये गये। अब एक विभागके ये स्वतन्त्र कर्त्ताधर्त्ता थे। शीघ्र ही परिवारको पिट्सबर्ग लानेका प्रबन्ध किया गया। अपने पूर्वपरिचित स्थानमें लौट आनेसे सभी प्रसन्न हुए। अल्टूनामें भी इनके रहनेका बड़ा अच्छा प्रबन्ध था—घरके आसपास ही प्रकृतिकी रमणीय शोभा थी, पर अपने परिचित मित्रोंके बीचमें पहुंचनेपर इन्हें स्वर्गोपम आनन्द मिला। 'टाम' ने उस समयतक तारका काम भलीभांति सीख लिया था। कारनेगीने उसे अपना सेक्रेटरी बना लिया।

पिट्सबर्ग लौटकर कारनेगीने एक अच्छासा मकान किराय पर लिया और उसीमें रहने लगे। उस समयके पिट्सबर्ग और वर्तमान नगरमें आकाश-पातालका अन्तर है। उस समय नगर बिलकुल धूएंसे भरा रहता था। आप अपना मुंह-हाथ साफ कर लीजिये—एक घंटेमें ही आपका मुंह और हाथ धूए से काला हो जायगा। बालोंमें कोयलेके कण समा जाते थे और येतरह बुरा लगता था। अल्टूनाके स्वास्थ्य वायुमंडलसे लौटनेपर कुछ दिनोंतक चरित्रनायकको पिट्सबर्गमें रहना बड़ा भद्दा मालूम होता था। अन्तमें इन्होंने नगरसे दूर होमउड नामक स्थानके पास एक मकान किरायेपर

लिया और यहीं रहने लगे। तार यहाँतक लगा दिया गया और घर बैठे ही वे अपना कर्तव्यसम्पादन करने लगे।

यहाँ कारनेगी-परिवारका जी इस बड़े आनन्दसे कटने लगा। चारों ओर प्रकृतिका मनोहर दृश्य था। होमउड ग्राममें कई सौ एकड़ ज़मीन थी, पासमें ही जंगल था, जहाँ एक छोटा सा झरना भी बहता था। कारनेगीके घरके आसपास भी एक छोटीसी फुलवारी थी। कारनेगीकी माताका जीवन पुष्पोंकी संगतिमें कटने लगा। वे कभी अपने हाथसे किसी फूलको नहीं तोड़ती थीं। एकबार कारनेगीने कुछ घासोंको उखाड़ फेंका, इसपर उन्हें माताकी फटकार सहनी पड़ी। माताका यह दयाद्र्रस्वभाव कारनेगीमें भी पाया जाता था। कई बार कारनेगी घरसे बाहर निकलनेके समय एक फूल तोड़कर अपने बटनके छेदमें लगाना चाहते थे, पर फुलवारीभरमें उन्हें कोई ऐसा फूल नहीं मिलता था, जिसको वे तोड़ लेनेका साहस कर सकें। लाचार हो बिना फूलके ही वे बाहर निकलते थे।

यहीं रहते समय चरित्रनायकने अनेक सज्जनोंसे मित्रताका सम्बन्ध स्थापित किया। होमउड प्रायः सभी परिवारोंका ही अड्डा था। कारनेगी भी उन लोगोंके जल्सोंमें भाग लिया करते थे। ऐसे अवसरोंपर कारनेगीने बहुतसी नयी बातें सीखीं। धनियोंके व्यवहारसम्बन्धी नवीन बातोंको जानकर इन्हें बड़ा आनन्द आता था। यहीं इनकी दोस्ती बेनजामिन और जान मुगहर्योंसे हुई।

'बेनजामिन' के साथ तो इन्होंने आगे चलकर संसारकी सैर की थी। 'संसारभ्रमण' नामक स्वरचित ग्रन्थमें कारनेगीने 'बेनजामिन या बेन्झी' का बराबर उल्लेख किया है। मि॰ स्टिवार्डसे भी इनकी गहरी दोस्ती हुई। इन लोगोंके साथ मिलकर चरित्रनायकने व्यवसायक्षेत्रमें प्रवेश किया था।

पेन्सिलवेनियाके प्रसिद्ध अज्ञ माननीय विल्किन्ससे भी श्रीकारनेगीका परिचय होमउड हीमें हुआ। न्यायाधीश महाशयकी अवस्था उस समय ८० वर्षकी थी, पर तो भी उनकी बुद्धि नवयुवकोंके समान प्रखर थी। उनका ज्ञानभाण्डार अपूर्व था। उनकी स्त्री भी अत्यन्त विदुषी थी। उनकी दो लड़कियां—कुमारी विलकिन्स और श्रीमती सैन्डर्सकी संगति का भी कारनेगीपर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा। कुमारी विल्किन्स प्राय नाटकों और संगीतोंमें बराबर भाग लिया करती और कारनेगी उसके सांसारिक दुर्लभ आनन्दका उपयोग किया करते थे। न्यायाधीश महाशयका ऐतिहासिक अनुभव अपूर्व था। वे अमेरिका संयुक्तराष्ट्रके प्रेसिडेन्ट जैकसनके कार्यकालमें अमेरिकाकी ओरसे रूसमें राजदूत रह चुके थे। वार्तालापके समय किसी बातपर ज़ोर देनेके लिये वे प्राय कह बैठते—"ड्यूक आफ वेलिङ्गटन को ऐसा कहा था, अथवा प्रेसिडेण्ट जैकसनने एक दिन मुझे ऐसा कहा था" इत्यादि। रूसके ज़ारके साथ वार्तालापकी चर्चा भी वे बराबर किया करते थे। विल्किन्सके

गुलुको सभी बातें कारनेगीके जीवनको उन्नत बनानेके लिये उत्तेजकका कार्य करती थीं। केवल राजनैतिक बातोंमें मतभेद हुआ करता था। विल्किन्स परिवार डेमोक्रेटिक दलके सिद्धान्तका अनुयायी था और कारनेगी प्रजातन्त्र वादी थे। एक दिन जब विल्किन्स परिवारमें नीग्रो और गोरोंके समानताके बर्तावपर बहस छिड़ रही थी, उसी समय कारनेगी आ पहुंचे। श्रीमती विल्किन्सने इनसे कहा—"भला देखो तो मेरे पौत्र "डालस" ने लिखा है कि West Point के सरदारने उसे एक नीग्रोके नीचे स्थान प्रदान किया है। क्या आपने ऐसा अन्धेर कभी सुना था? क्या इससे भी बढ़कर कुछ अपमानकी बात हो सकती है?"

चरित्रनायकने उत्तर दिया—"श्रीमतीजी, इससे भी बढ़कर बुरी बातें हो गयी हैं। मैंने सुना है कि कुछ नीग्रो स्वर्गमें जा पहुंचे हैं।"

देरतक सभी चुप हो गये। अन्तमें श्रीमती विल्किन्सने उत्तर दिया—"मि कारनेगी, यह तो दूसरी बातें हैं। कुमारी विल्किन्सने तो एक बार बड़े दिनके उपलक्ष्यमें बड़े यत्नसे एक अफगान सैनिककी आकृति बीनकर और उसपर प्रेमपूर्ण शब्द लिखकर आपको उपहार दिया था।" (श्रीकारनेगीने जीवनपर्य्यन्त इस उपहारको रखा।)

पिट्सबर्गमें रहते समय श्रीकारनेगीका परिचय डा० एडिसनकी पुत्री कुमारी लीला एडिसनसे हो गया था। शीघ्र

बीच रेल-पथ काट दिये जानेके कारण वाशिंगटन नगरसे सम्बन्ध विच्छेद हो गया था। श्रीकारनेगीके जिम्मे इसी टूटे हुए रेल पथकी मरम्मत करनेका काम दिया गया। अन्तमें बड़ी कठिनतासे कार्य्य सम्पन्न हुआ और गाड़ी वाशिंगटनको जाने लगी। पहला ही इंजिन, जो वाशिंगटन जा रहा था, उसपर सवार होकर श्रीकारनेगीने राजधानीकी यात्रा की। उन्होंने राजधानीसे कुछ इधर ही तारको टूटा हुआ जमीनपर पड़ा देखा। इंजिन धड़ाकर परिचालनायक उस टूटे तारके पास जा पहुंचे और उसे उठाने लगे। विद्युत प्रवाहने जोरसे धक्का देकर श्रीकारनेगीको दूर फेंक दिया। इससे इनके गालमें बड़ी चोट लगी और रक्त धारा बह चली। इसी अवस्थामें इन्होंने राजधानीमें प्रवेश किया। इनको यह सोचकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि जिस अमेरिकाने इन्हें उन्नतिकी सीढ़ीपर चढ़नेका अवसर प्रदान किया था, उसकी सेवामें इन्हें भी रक्त बहाना पड़ा।" श्रीकारनेगी दिन-रात अपने विभागकी सफलताके लिये चेष्टा करने लगे।

परिचालनायकने अपना कार्य्यालय वाशिंगटनसे हटाकर अलेकजेण्ड्रिया नगरमें रखा। उसी समय बुलरनकी लड़ाई शुरू हुई। अब परिचालनायकने युद्धक्षेत्रके घायलोंको लाने और सामान पहुंचानेके लिये अधिकसे अधिक गाड़ियोंके दौड़ानेका प्रबन्ध किया। वर्क स्टेशन ही युद्धक्षेत्रके निकट था। कारनेगी स्वयं यहां आकर घायलोंको गाड़ीमें भेजने लगे।

बलवाइयोंने शीघ्र ही यहांके स्टेशनपर भी धावा किया। अन्तमें उस स्टेशनको भी बन्दकर थ्रोकारमेरी मलेकजेंड्रिया लौट आये। कुछ रेलवेके कर्मचारी भी युद्धमें लापता हो गये। कारनेगी फिर वाशिंगटन गये और कर्नल स्काटके साथ ही युद्ध भवनमें अपना आफिस ले आये। तार और रेल विभागका प्रबन्ध श्रीकारनेगीके हाथमें था, अतएव इन्हें प्रेसिडेन्ट लिंकन तथा अन्य उच्च कर्मचारियोंके साथ मिलनेका अधिक मौका मिला करता था। इस सम्मिलनसे चरित्रनायकको बड़ा आनन्द मिलता था। प्रेसिडेन्ट लिंकन इनके डेस्कके निकट आ बैठते थे और तारके द्वारा युद्धक्षेत्रसे जो खबरें आती थीं, उन्हें बड़े ध्यानसे सुना करते थे।

प्रेसिडेन्ट लिंकनकी गति असाधारण थी। जब वे प्रफुल्लित रहते थे तो उनका व्यवहार एक बालकके समान सरल होता था, पर उत्तेजित होनेपर या किसी घटनाका वर्णन करनेके समय उनकी आखोंसे प्रतिभा टपकने लगती थी। उनका व्यवहार स्वाभाविक और सबके साथ एक समान था। वे सबके साथ अत्यन्त मधुर वाणीमें बातचीत किया करते थे। एक बालकसे बात करते समय भी उनका ध्यान एक ही समान रहता था। वे समदर्शी थे। वे सबको बराबर समझते—किसीको अपनेसे अयोग्य नहीं समझते थे। वे प्रकृत 'डेमोक्रेट' थे। महात्माओंकी तरह मन, वचन और कर्ममें उनका आचरण एक समान था।

हिस्सेदारोंको वार्षिक भारी डिविडेण्ट नियमित रूपसे दिया जाता था।

अल्टूनामें रहते समय, चरित्रनायकने पेन्सिलवेनिया रेलवे कम्पनीके कारखानेमें लोहेके बने हुए पहले पुलको देखा था। इन्होंने उसी समय अनुभव कर लिया था कि रेल-पथके लिये लकड़ीके पुलोंसे स्थायी काम नहीं चल सकता। उन्हीं दिनों पेन्सिलवेनिया रेल पथके एक महत्वपूर्ण पुलमें आग लग जानेके कारण दो दिनतक गाड़ियोंका आना जाना रुका रहा था। यहां लोहेके पुलकी आवश्यकता थी। चरित्रनायकने लोहेके पुलके प्रथम निर्माणकर्ता मि॰ लिनविल और पेन्सिलवेनियाके रेल-पथके पुलोंके प्रबन्धकर्ता मि॰ पाइपरसे प्रस्ताव किया कि यदि ये लोग पिट्सबर्ग आवें तो वह पुलोंको निर्माण करनेके लिये एक कम्पनी खड़ी करनेका प्रयत्न करें। मि॰ स्काटको भी इन्होंने इसकी सूचना दी और उन्हें भी इसमें शरीक होनेकी इच्छा प्रकट की। यह इस प्रकारकी पहली कम्पनी थी। प्रत्येक हिस्सेदारने १२५० डालर दिये। भीकार नेगीने भी बैंकसे उधार लेकर रुपया दे दिया। आजकल इतना रुपया देखनेमें बहुत कम मालूम होता है, पर बीजसे ही वृक्ष उत्पन्न होता है।

इस प्रकार सन् १८६२ ई॰में पाइपरकम्पनीकी प्रतिष्ठा लोहेके पुलोंके बनानेके लिये हुई। सन् १८६३ ई॰में यह कम्पनी कीस्टोनब्रिज कम्पनीमें मिला दी गयी। उसी समयसे

लोहेके पुल अधिक संख्यामें तैयार होने लगे और केवल अमे
रिकामें ही नहीं, वरन् संसारभरमें व्यवहारमें लाये जाने लगे।
पुल बड़ी सावधानीके साथ तैयार किये जाते थे। अबतक
बहुतसे रेल-पथोंमें वे ही पुल मौजूद हैं।

इसके बाद ही स्टेवेनविलमें ओहियो नदीपर पुल बनानेका
प्रश्न उपस्थित हुआ। श्रीकारनेगीसे पूछा गया कि उनकी
कम्पनी ३०० फीट लम्बे पुलको तैयार करनेका काम अपने हाथमें
ले सकती है या नहीं? आजकल इस प्रकारके प्रश्नको सुनकर
लोगोंको हँसी आ सकती है, पर यह ध्यानमें रखना चाहिये
... उन दिनों इस्पातका आविष्कार नहीं हुआ था। सब
सामान ढलवां लोहेसे ही तैयार किये जाते थे। अपने हिस्से
दारोंको राजीकर श्रीकारनेगीने अन्तमें पुल बनानेका 'कन्ट्राक्ट'
कर लिया। जब पुल बन रहा था, उस समय रेलवे कम्पनीके
प्रेसिडेण्ट मि० जियेट उसे देखने गये। भारी भारी लोहेके स्तंभ
इधर उधर पड़े थे और उनका भाना जारी था। उन्हें देखकर
प्रेसिडेण्टने श्रीकारनेगीसे कहा—"मुझे तो विश्वास ही नहीं होत
कि इतने भारी लोहेके खंभे किस प्रकार खड़े किये जायंगे।
अपना बोझ भी तो नहीं संभाल सकेंगे, फिर ओहियो नदी
आरपार गाड़ियोंके बोझको कैसे सह सकेंगे।" पर पुल
गया और उन्हें विश्वास ही नहीं करना पड़ा—अपनी आ
उन्होंने ओहियो नदीपर गाड़ियोंको दौड़ते भी देखा।
कार्य्यमें खूब नफा होनेवाला था, पर सिक्कोंकी दर कम हो

कुछ वर्षोंतक श्रीकारनेगीने 'कीस्टोनब्रिजवर्क्स' के काममें स्वयं खूब भाग लिया। जब कभी कोई महत्वपूर्ण 'कन्ट्राक्ट' किया जाता था, चरित्रनायक स्वयं जा पहुंचते थे। सन् १८६८ ई० में मिसीसिपी नदीके ऊपर डुबक स्थानके पास बड़ा पुल बनाया जानेवाला था। श्रीकारनेगी अपने १ इंजिनियरके साथ डुबक जा पहुंचे। नदीपर बर्फ जमा हुआ था। "स्ले" गाड़ियोंपर चढ़कर ये लोग नदी पार पहुंचे। सामान्य घटनाओंके बलपर ही इन्हें अपने उद्देशमें सफलता प्राप्त हुई। वहां पहुंचनेपर श्रीकारनेगीको पता लगा कि उन्होंने जो 'टेन्डर' भेजा था वह किसीसे कम नहीं था। उनका प्रधान प्रतिद्वन्द्वी शिकागोकी एक प्रसिद्ध पुल बनानेवाली कम्पनी थी और उसीको ठीका देनेका निश्चय बोर्डने कर लिया था। श्रीकारनेगीने बोर्डके कुछ डिरेक्टरोंके साथ बातचीत की। ये लोग पिटवां और ढलवां लोहेके गुण-दोषसे सर्वथा अनभिज्ञ थे। कारनेगीकी कम्पनी अपने पुलके प्रधान अंशको पिटवां लोहेसे बनाया करती थी, पर प्रतिद्वन्द्वी कम्पनी सभी काम ढलवां लोहेसे ही करती थी। इसीको लेकर श्रीकारनेगीने कम्पनीकी ओरसे बहस शुरू की। उन्होंने एक स्टीमरका उदाहरण देकर कहा—"यदि स्टीमर पिटवां लोहेसे टकरायेगा तो अधिकसे अधिक क्षति यही हो सकती है कि लोहा कुछ टेढ़ा हो जायगा, पर ढलवां लोहेको सिवाय टूट जानेके और कोई उपाय नहीं है।" इस दशामें पुल गिर पड़ेगा। एक डिरेक्टरने श्रीकारनेगीकी बातको समझा और

इसका समर्थन भी किया। उन्होंने डिरेक्टरोंको अपना अनुभव भी बताया। एक रातको वे गाड़ीमें सड़कपर आ रहे थे कि गाड़ी लैम्पके खंभेसे टकरा गयी। खंभा ढलवां लोहेका बना था—ज़ोरसे धक्का लगते ही टूटकर गिर पड़ा। श्रीकार नेगोने झट कहा—'महाशयो! यही तो बात है। कुछ अधिक रुपया खर्च करने हीसे आपका ऐसा पुल तैयार होगा जो किसी भी दुर्घटनासे टूट नहीं सकता। हमलोग सस्ते पुलोंको नहीं बनाते। हमारे पुल कभी नष्ट नहीं हुए।" अन्तमें कार नेगी-कम्पनीको ही कन्ट्राक्ट दिया गया। दाममें कुछ कमी करनी पड़ी, पर इस घटनाने कारनेगीकी कम्पनीकी धाक सबपर जमा दी। लैम्पके एक खंभेके टूटनेसे ही श्रीकार नेगीको यह कन्ट्राक्ट मिला। एक सामान्य घटना क्या कर सकती है, यह इसका प्रत्यक्ष निदर्शन है।

इस कथाकी शिक्षा स्पष्ट है। यदि आप कोई कन्ट्राक्ट लेना चाहते हैं तो आपको उस समय अवश्य मौजूद रहना चाहिये, जब अन्तिम निर्णय होता हो। पूर्व घटनामें वर्णित एक टूटे हुए खंभेके समान किसी घटनाके बलपर ही उपस्थित लोग बाज़ी मार लेते हैं। यदि संभव हो तो कन्ट्राक्ट खतम होनेतक ठहरे रहना चाहिये।

इसके बाद ही बाल्टीमोर और ओहियो रेलवे कम्पनीने ओहियो नदीपर पार्कसबर्ग और हीलिङ्ग, दोनों स्थानोंपर पुल बनाना चाहा। इन पुलोंके कन्ट्राक्ट लेनेके समय ही कारनेगी

एकादश परिच्छेद

लोहेका कारबार।

श्रीकारनेगीने अब लोहेके कारबारके विशाल कार्यक्षेत्रमें प्रवेश किया। टामसमिलर, हेनरीफिप्स और एण्ड्रू क्लोमनके साथ कारनेगी भ्रातृद्वयोंने एक लोहेकी छोटी मिल स्थापित की। मि० मिलरने ही इस कारखानेका श्रीगणेश किया था। इसके बाद क्लोमन और फिप्सने ८००—८०० डालर देकर छठां हिस्सा खरीदा और उस कारबारमें शामिल हो गये। अन्तमें कारनेगी भ्रातृद्वयोंने योगदान देकर कारखानेको उन्नतिकी चरम सीमातक पहुंचा दिया।

एण्ड्रू क्लोमन अलगेनी नगरमें लोहेका सामान्यरोजगार करता था। पेन्सिलवेनिया रेल्वे कम्पनीके सुपरिन्टेण्डेण्टके पदपर रहते हुए ही धात्रिनायकने देखा कि क्लोमनबढ़िया Axle बना सकता है। उसकी बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण थी। वह अध्यवसायी भी पूरा था। जिस कामको शुरू करता था, उसे बिना अन्ततक पहुंचाये नहीं छोड़ता था। उसीने पहलेपहल (Cold Saw) का आविष्कार किया, जो लोहेको काट डालता था। उसीने पहलेपहल पुलको जोड़नेके लिये Link तैयार करनेकी मशीनका

आविष्कार किया। अमेरिकामें पहली सर्वप्रिय मिल उसीने तैयार की थी। यह सब सामान कारनेगीकी लोहेकी मिलमें ही तैयार किया गया था। उसने कभी कभी ऐसे कामोंको भी कर दिखाया था, जिसको करनेमें अमेरिकाकी सभी कम्पनियां हताश हो चुकी थीं। मि० फ्रीमनपर श्रीकारनेगीका इतना अधिक विश्वास हो गया था कि अभी वह किसी कामको कर सकनेकी हामी भरता था तभी उसका कन्ट्राक्ट ले लिया जाता था।

फिप्स परिवारके साथ भी कारनेगीकी बड़ी घनिष्ठता हो गयी थी। हेनरीफिप्स कारनेगीसे कुछ छोटा था, पर उसने लड़कपन हीमें श्रीकारनेगीका ध्यान आकर्षित किया था। एक दिन हेनरीने अपने बड़े भाई जानसे २५ सेंट कुछ जरूरी काम का बहाना करके मांगे। जानने बिना पूछे ही दे दिये। दूसरे दिन 'पिट्सबर्ग डिसपैच' नामक समाचारपत्रमें एक विज्ञापन निकला—

"काम करनेकी इच्छा रखनेवाला एक बालक काम चाहता है।"

हेनरीने २५ सेंटका उपरोक्त उपयोग ही किया था। अपने जीवनमें उसने यही २५ सेंट पहलेपहल खर्च किये थे। डिलवर्थ और बिडवेल कम्पनीने हेनरीको बुला भेजा। हेनरी वहां भरती हो गया और धीरे धीरे अपनी उन्नतिकर उस फार्ममें हिस्सेदार हो गया। मि० मिलरकी दृष्टि हेनरीपर पड़ी और उन्होंने हेनरीको एण्ड्र फ्रीमनके साथ एक व्यवसायमें शरीक

कर दिया। मध्यमें हेनरी लोहेका एक बड़ा कारखाना खोलनेमें समर्थ हो सका। श्रीकारनेगीका छोटा भाई टाम उसका सहपाठी था। वे लोग साथ ही खेलते थे। व्यवसायमें भी दोनोंने सभी कम्पनियोंमें बराबर ही हिस्सा लिया। जो एक करता था, वही दूसरा भी करता था। आज वही हेनरी संयुक्तराष्ट्र अमेरिकाके धनकुबेरोंमेंसे एक है। हेनरीने अपने धनका सदुपयोग भी खूब किया। श्रीकारनेगी ही उसके जीवनके आदर्श थे। अध्यवसायपूर्वक काम करनेवालोंके लिये कुछ भी दुर्लभ नहीं है।

कुछ दिनोंके बाद फ्रीमन, फिप्स और मिलरमें किसी कारणसे मतभेद हो गया और बेचारे मिलरको उन दोनोंने साझेदारीसे अलग कर दिया। श्रीकारनेगीने यह जानकर कि मिलरके साथ अन्याय किया गया है, उसीका पक्ष लिया और उसके साथ मिलकर सन् १८६४ ई० में साइक्लोप्स मिलकी प्रतिष्ठा की। सन् १८६७ ई०में पुरानी और नयी दोनों मिलोंको मिलाकर 'युनियन आयरन मिल' की प्रतिष्ठा की गयी। मि० मिलरने फ्रीमन और फिप्सके साथ काम न करनेका निश्चय कर अलग हो जाना चाहा। बड़ी आरजू मिन्नत करनेपर भी वह टससे मस नहीं हुआ। श्रीकारनेगीने अनिच्छापूर्वक मिलरके हिस्सोंको खरीद लिया।

इसी बीचमें मि०फ्रीमनने लोहेका बीम बना डाला। अबतक कोई कम्पनी बीम बनानेमें समर्थ नहीं हुई थी। नयी आयरन मिलमें सब प्रकारके बीम तयार किये जाने लगे। जो काम

कोई कम्पनी नहीं कर सकती थी, उसीको करनेमें कारनेगी कम्पनी हाथ लगाती थी। जो चीज इस कम्पनीके कारखानेसे बनकर निकलती थी, वह प्रथम श्रेणीकी होती थी। ग्राहकोंको सन्तुष्ट रखना यह कम्पनी अपना कर्तव्य समझती थी। कार नेगीको कभी अदालत जानेकी जरूरत नहीं हुई।

श्रीकारनेगीने एक भारी सुधार अपने कारबारमें किया। अबतक लोहेकी चीज तैयार करनेमें यह पता नहीं लगता था कि किस प्रणालीसे कार्य करनेमें कितना खर्च पड़ता है। जबतक सालके अन्तमें हिसाब नहीं होता था, तबतक लाभ हानिका पता ही नहीं चलता था। व्यापारी लोग सालभर काम करते, पर कभी कभी हिसाब करनेपर उन्हें नफा हो जाता था और बहुतसी कम्पनियाँ, जिन्हें लाभ होनेकी पूरी आशा रहती थी, घाटा उठाती थीं। श्रीकारनेगीको यह अन्धेरेमें टटोलना पसन्द नहीं आया। उन्होंने निश्चय किया कि प्रत्येक वस्तुके तैयार करनेके समय भिन्न भिन्न नियमोंके अनुसार कार्य करना पड़ता है, सबके खर्चका ब्योरेवार हिसाब रखा जाय। कौन कर्मचारी कैसा काम करता है, किससे कम्पनीको लाभ है और किसके कार्यसे कम्पनीको हानि पहुंचती है, सबका लेखा रखनेपर उन्होंने जोर दिया। प्रत्येक मिलके मैनेजरने सनातन इस नवीन प्रणालीका विरोध किया, पर कुछ वर्षोंमें ही पूरा हिसाब रखा जाने लगा। इससे ठीक ठीक मालूम हो जाता था कि कौन आदमी क्या काम

कर रहा है और कम्पनीको क्या लाभ पहुंचा रहा है। इससे कम्पनीको बड़ा लाभ पहुंचा।

सन् १८६८ ई० में पेन्सिलवेनियाकी तेलकी खानोंकी ओर श्रीकारनेगीका ध्यान आकर्षित हुआ। इन्होंने चालीस हजार डालर देकर तेलकी खानोंको खरीद लिया। इससे चरित्र नायकको पूरा लाभ हुआ। १ वर्षमें १० लाख डालरकी आय हुई और खानोंका दाम ५० लाख डालर हो गया।

इसके बाद ही ओहियोमें एक प्रकारके तेलकी खानका पता लगा जो (Lubricating) के काममें आ सकता था। अपरिचित प्रान्तोंमें भ्रमण करते हुए श्रीकारनेगी उस खानके पास पहुंचे और उसको भी खरीदकर ही लौटे।

अब चरित्रनायकका कारबार बहुत अधिक बढ़ गया था और उसको देखनेके लिये इन्हें बहुत काम करना पड़ता था। यही सोच विचारकर इन्होंने रेल्वे कम्पनीकी नौकरी छोड़कर अपना पूरा समय और शक्ति अपने व्यवसायकी उन्नति करनेमें ही लगानेका निश्चय किया। प्रेसिडेन्ट टामसनने चरित्रनायकको बुलाकर सहायक जनरल सुपरिन्टेन्डेन्ट बनाने की इच्छा प्रकट की थी, पर इन्होंने सधन्यवाद अस्वीकृत कर दिया। उनकी अन्तरात्माने यही कहा कि नौकरी छोड़ दो और व्यवसायमें लग जाओ, इसीसे धनकुबेर बन सकोगे। २८ वीं मार्च सन् १८६५ ई० को श्रीकारनेगीने रेलवे कम्पनीकी नौकरीसे पद त्याग किया और रेलवे कम्पनीके कर्मचारियोंने

दी एक सोनेकी घडी भेंटमें दी। नौकरी छोड़ते समय इन्होंने पिट्सबर्ग विभागके कर्मचारियोंके पास निम्नलिखित मर्मकी चिट्ठी लिखी थी —

"सज्जनो !

आपके साथ सम्बन्ध विच्छेद करते हुए मुझे बड़ा दुःख हो रहा है। आप लोगोंके साथ १२ वर्ष कार्य करते रहनेसे मुझे आप लोगोंसे बड़ा प्रेम हो गया है। नौकरी छोड़ देनेसे मैं अपने पूर्वके घनिष्ठ मित्रोंसे फिर सम्बन्ध नहीं रख सकूगा, इसका मुझे अधिक दुःख है। आप लोग विश्वास करें कि आपसका सम्बन्ध छूट जानेपर भी मुझे आप लोगोंका ख्याल बराबर बना रहेगा। आपने मेरे प्रति जो प्रेम और दयाका भाव प्रदर्शित किया है, उसके लिये मैं आपको धन्यवाद देता हूं। मेरा अन्तिम नमस्कार स्वीकार करें। विनीत—

एन्ड्र, कारनेगी।"

इसके बादसे श्रीकारनेगीने कभी नौकरी नहीं की। सन् १८६७ ई० में स्टिवनायकने मि० फिप्स, और मि० वेण्डीके साथ युरोपकी सैर की। युरोपकी यात्रासे श्रीकारनेगीका अनुभव और भी अधिक बढ गया। अबतक वे कलाविद्याका कुछ भी ज्ञान नहीं रखते थे। शीघ्र ही वे इसमें भी पटु हो उठे और बड़े बड़े चित्रविद्या-विशारदोंके कार्य्योंका विभाग कर सकनेमें समर्थ हो गये। संगीतका प्रेम भी उनका खूब बढ़ गया। लण्डनके क्रिस्टल पैलेसमें उन्हीं दिनों सङ्गीत-समाजका वार्षि

कोरसच गमाया आ रहा था। इसमें भाग लेनेसे श्रीकारनेगीके मनपर सङ्गीतके प्रभावका सिक्का बैठ गया। इसके बाद फ्रांस आदि देशोंमें भ्रमण करने और थियेटर आदि देखनेसे सङ्गीतके प्रति इनकी श्रद्धा और भी बढ़ गयी। व्यापारिक दृष्टिसे भी यूरोपकी यात्रा इनके लिये हितकर ही हुई।

इसके बाद कारनेगीका लोहेका कारबार बढ़ता ही चला गया। गृहयुद्धके समाप्त होनेके बाद अमेरिकन गवर्नमेंटने निश्चय कर लिया था कि अमेरिकाके व्यवहारकी सभी चीजें देशके भीतर ही तैयार हों—यूरोपसे कुछ भी न मंगाया जाय। विदेशसे आनेवाले लोहेके तैयार मालपर २८ सैकड़ा कर लगा दिया गया। इस रक्षणशील नीतिने अमेरिकन व्यापारको बड़ा लाभ पहुंचाया। अब नये व्यवसायोंके लिये रुपया लगानेमें लोगोंको कुछ भी हिचकिचाहट नहीं होती थी—कारण, लोगों का विश्वास था कि गवर्नमेंट प्रत्येक दशामें सहायता देनेके लिये तैयार रहेगी। न मालूम भारतवर्षको यह सौभाग्य कब प्राप्त होगा। यहां तो "भाग लगन्ते झोपड़ा, जो निकसे सो लाभ" की कहावत चरितार्थ हो रही है। भारतीय व्यापारसे जितना लाभ उठा सको उठा लो—एक दिन तो भारत स्वावलम्बी होगा ही, फिर तो दाल गलने नहीं पायगी।

द्वादश परिच्छेद

व्यवसायकी वृद्धि

श्रीकारनेगीका व्यवसाय दिन दिन बढ़ने लगा। अब उन्हें प्रायः न्यूयार्क तथा अन्य पूर्वी नगरोंकी यात्रा करनी पड़ती थी। इङ्गलैण्डमें लंडनका जो स्थान है वही अमेरिकामें न्यूयार्कको प्राप्त है। अमेरिकामें जितने प्रधान प्रधान व्यवसाय हैं, सबका मुख्य केन्द्र न्यूयार्क ही है। कोई भी व्यवसायी बिना वहां अपना केन्द्र स्थापित किये अपने व्यवसायमें पूरी सफलता नहीं प्राप्त कर सकता। श्रीकारनेगीका भाई और मि० फिप्स तो पिट्सबर्गके व्यवसायकी देखभाल करते ही थे। अब श्रीकारनेगीने कम्पनियोंका प्रधान नीति नियन्त्रण करनेका भार अपने ऊपर लिया। मुख्य मुख्य कण्ट्राक्टोंको ठीक करनेका भार भी इन्होंने अपने ही ऊपर रखा।

श्रीकारनेगीके भाई टामने अपने एक हिस्सेदार मि० कोलमैनकी विदुषी कन्यासे पाणिग्रहण कर लिया था। वे होम उडमें रहने लगे और श्रीकारनेगीने सन् १८६७ ई० में अपना निवासस्थान न्यूयार्कमें ठीक किया। यह परिवर्तन पहलेपहल इनके और इनकी माताके लिये सुखकर प्रतीत नहीं हुआ। पुराने

मित्रोंसे एकदम नाता टूट जानेसे इन्हें अवश्य ही दुःख हुआ, पर कारनेगी-परिवार कहीं भी रहकर सुखी रह सकनेमें समर्थ था। न्यूयार्कमें इनका कोई परिचित नहीं था, इन्होंने सेंट निकोलस होटेलमें ठहरनेका निश्चय किया और वहांकी प्रसिद्ध ब्रौड स्ट्रीटमें अपनी गद्दी खोल दी।

पिट्सबर्गके मित्रगण जब न्यूयार्क आते तो श्रीकारनेगीके यहां ही ठहरते। उनके संसगसे इन्हें बड़ा आनन्द मिलता था। पिट्सबर्गके समाचारपत्रोंको बिना पढ़े श्रीकारनेगोको चैन नहीं मिलती थी। श्रीकारनेगी बराबर पिट्सबर्ग आकर मित्रोंसे मिल आया करते थे। धीरे धीरे न्यूयार्कमें ही एक मित्रगोष्ठी स्थापित हो गयी और फिर तो यही स्थान सर्वोत्तम प्रतीत होने लगा।

न्यूयार्कमें विण्डसर होटल स्थापित होनेपर श्रीकारनेगी वहीं आकर रहने लगे और सन् १८८७ ई०तक वहीं रहे। होटलके अध्यक्ष मि० हाकसे इनकी गहरी दोस्ती हो गयी। उन्हीं दिनों न्यूयार्कमें 'उन्नीसवीं शताब्दी क्लब' स्थापित हुआ था। चरित्रनायक भी उसके मेम्बर बन गये। न्यूयार्कके सभी प्रसिद्ध पुरुष उस क्लबके सदस्य थे। मासमें एक बार 'क्लब' का अधिवेशन हुआ करता था और सभी प्रधान विषयोंकी समालोचना हुआ करती थी। श्रीकारनेगी भी आलोचना प्रस्तावों चर्चामें भाग लिया करते थे। इस प्रकार चरित्रनायक शीघ्र ही न्यूयार्कके सभ्य समाजमें भी परिचित हो गये। वहीं इनकी

लामेल विश्वविद्यालयके प्रेसिडेण्ट मि० हाइटसे दोस्ती हुई। मि० हाइट पीछे चलकर अमेरिकाकी ओरसे रूस और जर्मनीमें राजदूत रहे और अन्तमें हेगकान्फरेन्समें अमेरिकाके प्रधान प्रतिनिधि बनकर उपस्थित हुए थे।

श्रीकारनेगीने पिट्सबर्गमें रहते समय केवल औद्योगिक विभागका परिचय प्राप्त किया था। फाटकेबाजीका इन्होंने केवल नाम ही सुना था। न्यूयार्कमें आकर इन्होंने फाटके बाजीका बाज़ार गर्म देखा। वालस्ट्रीटमें न्यूयार्कका प्रधान स्टाक एक्सचेंज है, जहां शेयरोंका कारबार होता था। प्रायः जितने प्रसिद्ध व्यवसायी थे, सबका सम्बन्ध वालस्ट्रीटसे था। न्यूयार्कमें परिचय होनेके साथ ही लोगोंने चारो ओरसे इन्हें घेरना शुरू किया। कोई आकर इनके रैलवे कामके बारेमें पूछता था, कोई कहता था कि हमलोग पूंजी देते हैं आप किसी लाभदायक व्यापारमें उसे लगाकर उसके प्रबन्धक बनिये। बहुतसे व्यापारी बड़े बड़े कारबारको खोलना चाहते थे, उन्होंने भी परिश्रमायकको हिस्सेदार बननेका अनुरोध किया। न्यूयार्क की फाटकेबाजीका द्वार श्रीकारनेगीके लिये उन्मुक्त हो गया।

श्रीकारनेगीने पूर्ण सोच विचारके उपरान्त किसी भी प्रस्तावको स्वीकृत नहीं किया। एक दिन प्रातःकाल जब वे विण्डसर होटलमें ठहरे हुए थे, मि० जय गोल्ड नामक प्रसिद्ध व्यापारीने इनसे भेंट की और कहा "मि० कारनेगी, मैंने आप की बड़ी तारीफ सुनी है। मैं पेन्सिलवेनिया रेलवे कम्पनीको

खरीद लेना चाहता हूं। यदि आप उसके प्रबन्धको अपने ऊपर ले लें तो कम्पनीसे जो लाभ होगा उसका आधा आप हीका हिस्सा रहेगा।" श्रीकारनेगीने उन्हें धन्यवाद देते हुए उनके अनुरोधको अस्वीकार किया और कहा कि यद्यपि मि० स्काटसे उनका व्यापारिक सम्बन्ध विच्छेद हो गया है, पर तो भी वे कभी मि० स्काटके हितके विरुद्ध कोई काम नहीं कर सकते। मि० गोल्ड बैरंग वापस गये। इसके बाद मि० स्काटने इस सम्बन्धमें एक पत्र लिखकर श्रीकारनेगीको धन्यवाद दिया था। मि० स्काट ही उन दिनों पेन्सिलवेनिया रेलवे कम्पनीके प्रेसिडेन्ट थे और यदि मि० गोल्ड उस कम्पनीको खरीद लेते तो मि० स्काटको हटना पड़ता। श्रीकारनेगीने वीरतापूर्ण उत्तर लिख भेजा—"मैं तभी किसी रेलवे कम्पनीका प्रेसिडेन्ट होऊंगा, जब वह कम्पनी मेरी खास होगी।"

इस घटनाके ३० वर्षके बाद सन् १९०० ई० में श्रीकारनेगीने मि० गोल्डके पुत्रको बुलाकर पुराना किस्सा कह सुनानेके बाद कहा—"आपके पिताने पेन्सिलवेनिया रेलवे कम्पनीका प्रबन्ध मेरे हाथमें देना चाहा था, अब मैं आपको समुद्रके एक छोरसे दूसरे छोरतक फैली हुई वेबाश रेलवे कम्पनीके प्रबन्ध का भार सौंपता हूं।" यह रेलवे अटलांटिक समुद्रसे लेकर पिट्सबर्गतक फैली हुई है। इसको श्रीकारनेगीने मि० गोल्डके पुत्रके साझेमें खोला था। सन् १९०१ ई० में मि० मोरगनके हाथ यह कम्पनी बेच दी गयी और इस प्रकार श्रीकारनेगीका रेलवे-व्यवसाय समाप्त हुआ।

ओकारनेगीने अपने जीवनभरमें कभी शेयरका कारबार नहीं किया। केवल एकबार जीवनके प्रारम्भकालमें इन्होंने पेन्सिलवेनिया रेलवे कम्पनीके कुछ हिस्सोंको खरीदा था। उसके बाद इन्होंने कभी इस मार्गमें पैर नहीं रखा और अन्त कालतक इस व्रतको निभाया। ओकारनेगी शेयरके व्यापारको जूआ समझते थे और इसीसे उससे बिलकुल अलग रहते थे। इन्होंने अपना ध्यान यथार्थ व्यापार—वस्तुओंके उत्पादनकी ओर दिया था। सभी व्यावसायिक पुरुषोंको ओकारनेगीके जीवनसे यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। जो लोग किसी वस्तुके उत्पादनमें प्रवृत्त हैं, उन्हें तो भूलसे भी फाटकेबाजीका नाम नहीं लेना चाहिये। उनके सामने जो समस्यायें समय समयपर उपस्थित होती रहती हैं, उन्हींको हल करनेके लिये उनका मन शान्त और स्थिर रहना चाहिये। व्यवसायकी सफलताके लिये शान्त तबकी आवश्यकता है। फाटकेबाजीमें जो मस्त हैं—जिनका मन क्षण क्षण शेयरके भाव घटने-उतरनेपर चञ्चल होता रहता है, वे भला उत्पादनका व्यवसाय किस प्रकार सफलतापूर्वक चला सकते हैं। फाटकेबाजीकी तुलना मादक द्रव्योंके साथकी जा सकती है। फाटकेबाजोंको अभावमें भाव और भावमें अभाव दिखायी पड़ता है। वस्तुओंका यथार्थ ज्ञान उन्हें प्राप्त नहीं हो सकता। पर्वतको वे राई और राईको पर्वतके समान देखा करते हैं। उनका मन तो बराबर स्टाक एक्सचेंजपर रहता है, फिर शान्त और गंभीर विचार कहांसे

खरीद लेना चाहता हूं। यदि आप इसके प्रबन्धको अपने ऊपर ले लें तो कम्पनीसे जो लाभ होगा उसका आधा आप हीका हिस्सा रहेगा।" श्रीकारनेगीने उन्हें धन्यवाद देते हुए उनके अनुरोधको अस्वीकार किया और कहा कि यद्यपि मि० स्काटसे उनका व्यापारिक सम्बन्ध विच्छेद हो गया है, पर तो भी वे कभी मि० स्काटके हितके विरुद्ध कोई काम नहीं कर सकते। मि० गोल्ड वैरंग वापस गये। इनके बाद मि० स्काटने इस सम्बन्धमें एक पत्र लिखकर श्रीकारनेगीको धन्यवाद दिया था। मि० स्काट ही उन दिनों पेन्सिलवेनिया रेलवे कम्पनीके प्रेसिडेण्ट थे और यदि मि० गोल्ड उस कम्पनीको खरीद लेते तो मि० स्काटको हटना पड़ता। श्रीकारनेगीने वीरतापूर्ण उत्तर लिख भेजा—"मैं कभी किसी रेलवे कम्पनीका प्रेसिडेण्ट होऊंगा, जब वह कम्पनी मेरी खास होगी।"

इस घटनाके ३० वर्षके बाद सन् १९०० ई० में श्रीकारनेगीने मि० गोल्डके पुत्रको बुलाकर पुराना किस्सा कह सुनानेके बाद कहा—"आपके पिताने पेन्सिलवेनिया रेलवे कम्पनीका प्रबन्ध मेरे हाथमें देना चाहा था, अब मैं आपको समुद्रके एक छोरसे दूसरे छोरतक फैली हुई वैबास रेलवे कम्पनीके प्रबन्ध का भार सौंपता हूं।" यह रेलवे अटलाण्टिक समुद्रसे लेकर पिट्सबर्गतक फैली हुई है। इसको श्रीकारनेगीने मि० गोल्डके पुत्रके सामनेमें खोला था। सन् १९०१ ई० में मि० मोरगनके हाथ यह कम्पनी बेच दी गयी और इस प्रकार श्रीकारनेगीका रेलवे-व्यवसाय समाप्त हुआ।

श्रीकारनेगीने अपने जीवनभरमें कभी शेयरका कारबार नहीं किया। केवल एकबार जीवनके प्रारम्भकालमें इन्होंने पेन्सिलवेनिया रेलवे कम्पनीके कुछ हिस्सोंको खरीदा था। उसके बाद इन्होंने कभी इस मार्गमें पैर नहीं रखा और अन्त कालतक इस व्रतको निभाया। श्रीकारनेगी शेयरके व्यापारको जूआ समझते थे और इसीसे उससे बिलकुल अलग रहते थे। इन्होंने अपना ध्यान यथार्थ व्यापार—वस्तुओंके उत्पादनकी ओर दिया था। सभी व्यावसायिक पुरुषोंको श्रीकारनेगीके जीवनसे यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। जो लोग किसी वस्तुके उत्पादनमें प्रवृत्त हैं, उन्हें तो भूलसे भी फाटकेबाजीका नाम नहीं लेना चाहिये। उनके सामने जो समस्यायें समय समयपर उपस्थित होती रहती हैं, उन्हींको हल करनेके लिये उनका मन शान्त और स्थिर रहना चाहिये। व्यवसायकी सफलताके लिये शान्त मनकी आवश्यकता है। फाटकेबाजीमें जो मस्त हैं—जिनका मन क्षण क्षण शेयरके भाव चढ़ने-उतरनेपर चञ्चल होता रहता है, वे भला उत्पादनका व्यवसाय किस प्रकार सफलतापूर्वक चला सकते हैं। फाटकेबाजीकी तुलना मादक द्रव्योंके साथकी जा सकती है। फाटकेबाजोंको अभावमें भाव और भावमें अभाव दिखायी पड़ता है। वस्तुओंका यथार्थ ज्ञान उन्हें प्राप्त नहीं हो सकता। पर्वतको वे राई और राईको पर्वतके समान देखा करते हैं। उनका मन तो बराबर स्टाक एक्सचेंजपर रहता है, फिर शान्त और गंभीर विचार कहांसे

उत्पन्न होंगे। फाटकेबाजीसे वस्तुओंके मूल्यमें व्यर्थ वृद्धि होती है। अर्थशास्त्रकी दृष्टिसे इससे कुछ भी उत्पादन नहीं होता। क्या हमारे भारतीय व्यवसायी फाटकेबाजीको इस हानिकारक प्रथाका त्यागकर श्रीकारनेगीके आदर्शपर अपना समय और शक्ति उपयोगी द्रव्योंके उत्पादनमें लगावेंगे ?

न्यूयार्कमें स्थिर होनेके बाद श्रीकारनेगीने केकुक नामक स्थानके निकट मिसीसिपी नदीपर एक पुल बनानेका ठीका लिया। यह पुल २३०० फाट लम्बा है। पेन्सिलवेनिया रेलवे कम्पनीके प्रेसिडेण्ट मि० टामसनके साझेमें परिश्रमपूर्वक इस कामका पूरा ठीका ले लिया। पुल तो बहुत सुन्दर और मजबूत तैयार हुआ, पर इन्हें आर्थिक लाभ कुछ नहीं हुआ। शाखा रेल कम्पनियोंका दिवाला निकल जानेके कारण ठीकेका पूरा रुपया इन्हें नहीं मिल सका। सौभाग्यकी बात यही हुई कि इन्हें घाटा नहीं उठाना पड़ा।

पर इनका परिश्रम व्यर्थ नहीं हुआ। केकुकमें पुल बनानेमें इन्हें जो सफलता मिली थी, उसे जानकर सेंट लुइस नामक स्थानके निकट मिसीसिपी नदीपर पुल बनानेवाली कम्पनीके प्रबन्धकोंने श्रीकारनेगीसे भेंट की और उनसे इस कार्यमें सहायता प्रदान करनेके लिये अनुरोध किया। स्कीमकी भलीभांति परीक्षाकर श्रीकारनेगीने कीस्टोनब्रिज वर्क्सकी ओरसे उस पुलको बनानेका ठीका ले लिया। कम्पनीके 'बौंड'को बेचनेके लिये श्रीकारनेगी सन् १८६९ ई० में लंडनको रवाना हुए। रास्ते हीमें

इन्होंने एक प्रोसपेक्ट्स तैयार किया और लंडन पहुंचकर अपने पूर्वपरिचित बैंकर मि० मार्गनसे मिले। अनेक प्रकारके वाद विवादके बाद बड़ी चतुरताके साथ श्रीकारनेगी अपने उद्देश्यमें सफल हुए। सेंट लुइसब्रिजके लिये रुपया मिल गया। इस बातचीतमें इन्हें अच्छा लाभ हुआ। यूरोपके प्रसिद्ध बैंकरोंके साथ यह इनका पहला कारबार था।

मि० मारगनसे मिलकर श्रीकारनेगी अपने पूज्य जन्म स्थान डनफरलिनका दर्शन करने गये। इस यात्रामें इन्होंने वहां सर्व-साधारणके स्नानके लिये एक स्नानागारका प्रबन्ध कर दिया। इसके पूर्व ही इन्होंने बैनोकबर्ग नामक स्थानके निकट प्रसिद्ध वीर वैलेसके स्मारक बननेमें चन्दा भेजा था। उस समय ये तारघर हीमें नौकर थे और इनकी मासिक आय केवल ३० डालर थी। इनकी माताने भी इस कार्यमें इन्हें उत्साहित किया था। माताको यह सोचकर बड़ा आनन्द मिला था कि उसके पुत्रका नाम भी दाताओंकी तालिकामें लिपिबद्ध रहेगा। भारतमें ऐसी मातायें कितनी हैं?

इसके कुछ वर्षोंके बाद माता और पुत्रने स्टरलिङ्ग नामक स्थानमें वैलेसके नामपर एक 'टावर' बनवाकर उसमें सर वाल्टर स्काटका चित्र स्थापित किया था। उसी समय श्रीकारनेगीने सन् (१८६८ ई० में) अपने जीवनका एक कार्य्यक्रम तैयार किया था। पाठकोंके मनोरञ्जनार्थ उसका पूरा अनुवाद नीचे दे दिया जाता है—

"सेंट निकोलस होटल, न्यूयार्क, दिसम्बर १८६८ ई०। अभी मैं तैंतीस ही वर्षका हूं, पर मेरी आय ५० हजार डालर वार्षिककी हो गयी! अब मैं दो वर्षों तक केवल यही काम करूंगा, जिससे मेरी आय ५० हजार डालर वार्षिककी निश्चित हो जाय। इसके बाद मैं अधिक धन कमानेका नाम भी नहीं लूंगा। वर्षके बाद शेष आमदनीको मैं अच्छे कार्य्योंमें व्यय किया करूंगा। सदैवके लिये व्यवसायसे हाथ खींच लूंगा और केवल दूसरोंको व्यवसायक्षेत्रमें सफलता प्राप्त करनेमें सहायता प्रदान किया करूंगा।

इसके बादमें आक्सफोर्डमें जाकर पूर्ण शिक्षा प्राप्त करूंगा। सभी प्रसिद्ध विद्वानोंसे परिचय प्राप्त करूंगा। इस कार्यमें तीन वर्ष लगेंगे। मैं जनताके सामने व्याख्यान देनेका पूर्ण अभ्यास डालूंगा। इसके बाद लन्दनमें रहूंगा। वहां किसी प्रसिद्ध समाचारपत्रके प्रबन्धका भार अपने ऊपर लूंगा और सर्वसाधारणके हितके कार्यों में भाग लिया करूंगा। शिक्षाकी उन्नति और दरिद्रोंकी अवस्था सुधारनेकी ओर मेरा विशेष ध्यान रहेगा।

मनुष्यके सामने कुछ आदर्श रहना चाहिये। केवल धनोपार्जन करना सबसे निकृष्ट आदर्श है। इसमें मनुष्य जीवनकी शक्तियोंका जैसा अपव्यय होता है, वैसा किसीमें नहीं होता। मैं जिस आदर्शको अपने सामने रखूंगा, उसमें प्राणपणसे लग जाऊंगा—अतएव आदर्श स्थिर करते समय मुझे ऐसे आदर्शोंको ही ध्यानमें रखना होगा, जिससे मेरा चरित्र उन्नत हो

सके। यदि मैं बहुत अधिक दिनोंतक धनोपार्जनके पीछे विह्वल बना रहूंगा तो मेरा सुधार असंभव हो जायगा। ३५ वर्षकी अवस्थामें मैं व्यवसायसे अवकाश ग्रहण करूंगा। इन दो वर्षोंके बीच भी मैं दिनके तीसरे पहरको नयी नयी बातोंको सीखनेमें लगाया करूंगा।" भारतीय धनलोलुप इसे पढ़कर यथेष्ट शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं।

सन् १८६० ई० में यूरोपकी सैर करते समय भी श्रीकार नेगीका ध्यान सर्वदा अपने व्यवसायकी ओर लगा रहता था। न्यूयार्कसे बराबर इनके पास व्यवसाय-सम्बन्धी चिट्ठियां आया करतीं और यह सैर करते हुए भी अपने व्यवसायको भलीभांति संचालित किया करते थे। गृहयुद्धके बाद अमेरिकाकी कांग्रेसने एक कानून बनाकर प्रशान्त महासागरके एक छोरसे दूसरे छोरतक रेलवे लाइन बनानेवालोंको सहायता देनेका निश्चय प्रकट किया था। रोमकी सैर करते समय श्रीकारनेगीके ध्यानमें आया कि इस कार्यमें कुछ भी विलम्ब होने देना अनुचित है। अब राष्ट्रका निर्णय हो चुका है कि देशके सभी प्रान्तोंके साथ रेलका सम्बन्ध स्थापित कर दिया जाय तो फिर इसमें अनावश्यक देर करनेकी आवश्यकता ही क्या है? इन्होंने अपना विचार मि० स्काटको लिख भेजा, पर उत्तमा उत्तेजन नहीं मिला। अमेरिका लौटते ही इन्होंने अपने विचारके अनुसार कार्य शुरू किया। उन दिनों रेलवे लाइनमें सोनेवाली गाड़ियोंकी बहुत ज्यादा मांग थी, गाड़ी बनानेवाले मांग

रहा करते हैं। यथार्थ विपत्ति बहुत कम मनुष्योंके सामने उप स्थित होती है। बहुतसी आपदायें तो प्रायः काल्पनिक ही होती हैं। विचारवान पुरुषोंको तो उन्हें हंसी खेलमें ही उड़ा देना चाहिये। बहुतसे मनुष्य बिना पानी मोजा उतारते हैं—नदी मिले बिना ही सूखेमें तैरने लग जाते हैं—शैतानके बिना उप स्थित हुए उसके भयसे कांपने लगते हैं। इससे बढ़कर मूर्खता और क्या हो सकती है। यथार्थ विपत्तिके आनेतक तो भय खानेकी जरूरत ही नहीं है और फिर उसके आनेपर भी उसे धीरतापूर्वक सहन करना ही बुद्धिमानोंका कर्त्तव्य है। बुद्धि मान मनुष्य सर्वदा आशावादी होते हैं। निराशा उन्हें कभी नहीं सताती। यदि मनुष्य इस बातको ध्यानमें रखकर आचरण किया करें तो संसारमें हमें जो दुःख-शोक दिखायी दे रहा है, वह बहुत अंशोंमें दूर हो जाय। इस तत्त्वको भारत-वासियोंके तो हृदयंगम करनेकी बड़ी आवश्यकता है।

त्रयोदश परिच्छेद

लक्ष्मीकी गोदमें

इसी समय श्रीकारनेगीने मलगेनी रेलवेके प्रेसिडेन्ट कर्नल विलियम फिलिप्सकी ओरसे ऋणके लिये बातचीत करनेमें सफलता प्राप्त की। एक दिन प्रातःकाल कर्नल फिलिप्सने श्रीकारनेगीके न्यूयार्कके आफिसमें प्रवेशकर इनसे कहा कि उन्हें अपनी कम्पनीके लिये ५० लाख डालरकी नितान्त आवश्यकता है, पर अमेरिकामें इतना ऋण देनेवाला कोई बैंक नजर नहीं आता। वृद्ध कर्नल सभी बैंकरोंके यहां गिड़गिड़ा आये, पर सभी उनकी आवश्यकतासे नाजायज फायदा उठाना चाहते थे। कर्नलने श्रीकारनेगीसे सहायता प्रदान करनेका अनुरोध किया। श्रीकारनेगीने लंदन जाकर इसके लिये सिरतोड़ परिश्रम किया और अन्तमें अपने कार्य्यमें सफल हुए। इसमें इन्हें भी अच्छा लाभ हुआ। इसी प्रकार इन्होंने एकबार पेन्सिलवेनिया रेलवे कम्पनीके लिये भी ऋणकी व्यवस्थाकर कमीशनमें बहुत सा रुपया कमाया। इन सब कार्य्योंमें इन्हें प्रसिद्ध बैंकर मि॰मार्गनसे अच्छी सहायता मिली। उसी समयसे दोनों गाढ़ी मित्रताके सूत्रमें आबद्ध हो गये। श्रीकारनेगीने अपने भविष्य

जीवनमें ऐसा कोई भी काम नहीं किया, जिससे मार्गनको किसी प्रकारकी हानि पहुंचे।

किसी बड़े व्यवसायकी सफलताके लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि उसका आधार सत्यतापर स्थापित हो। व्यवसायमें केवल कानूनी धाराओंपर ध्यान न रखकर न्यायपर ध्यान रखा जाय तो सफलता बिना बुलाये आती है। जो व्यवसायी न्याय और सत्यके पक्षपाती होते हैं, उनकी साख अपरिमित रहती है। श्रीकारनेगीने अपने व्यवसायमें इसी सुवर्ण नियमका उपयोग किया था। वे अपने सहयोगी व्यवसायियोंको सविदका लाभ उठानेका पूरा मौका देते थे। जहां कहीं विवाद भी उपस्थित होता था, विरुद्धपार्टीको ही लाभ उठानेका अधिक मौका दिया जाता था। फाटकेबाजीमें यह कभी सम्भव नहीं है। फाटकेबाजीका संसार निराला होता है। यहां तो केवल जूएकी प्रवृत्ति उत्पन्न होती रहती है। ईमानदारीके साथ व्यापार करने और फाटकेबाजीमें अन्धकार और प्रकाशका अन्तर है। दोनों एक साथ नहीं हो सकते।

श्रीकारनेगीके व्यावसायिक जीवनकी एक बात सभी मनुष्योंके ध्यानमें रखनेयोग्य है। वे कभी ऐसे ऋणकी जमा मत नहीं करते थे, जिसे स्वयं दे सकनेमें अपनेको समर्थ नहीं समझते थे। इनके प्रसिद्ध गुरु और मित्र मि० स्काटने एकबार टेक्सा पेसिफिक रेलवे बनानेका सूत्रपात किया। श्रीकारनेगीको तारद्वारा फिलेडेलफिया बुलाया गया। इस कम्पनीने

लंदनमें बहुतसा कर्ज लिया था। ऋण परिशोधका समय आ गया था, पर उसे शोध करनेका कोई उपाय सामने नहीं था। मार्गन कम्पनीने ६० दिनका समय देना स्वीकार किया—यदि श्रीकारनेगी जमानत करें। श्रीकारनेगीकी समस्त पूंजी उस समय अपने व्यवसायमें लगी हुई थी। इन्होंने जमानती होना अस्वीकार कर दिया। इसके पूर्व ही इन्होंने मि० स्काटको २ लाख ५० हजार डालर ऋणस्वरूप दिये थे। आरंभसे ही चरित्रनायक मि० स्काटको इस व्यवसायमें हाथ डालनेसे मना करते थे। हजारों मील लम्बे रेल पथको कर्ज लेकर बनाना असमय व्यापार था। मि०स्काटको अपनी भूलका उचित दण्ड भोगना पड़ा। कम्पनीका दिवाला निकल गया और इसी शोकमें उन्होंने अपना प्राण दे दिया। मि० स्काटके साझेदारों की भी वही हालत हुई।

दूसरेके ऋणके लिये जमानत देनेसे बढ़कर भयङ्कर व्यवसायियोंके लिये दूसरा कार्य नहीं है। बहुत कम लोग ऐसी विपत्तियोंसे सफलतापूर्वक बाहर निकल पाते हैं। यदि व्यवसायीगण निम्न लिखित दो प्रश्नोंको भलीभांति सोच लिया करें तो उन्हें विपत्तिके फंदेमें न फंसना पड़े। पहला प्रश्न यह है—क्या मेरे पास इतना अतिरिक्त धन है, जिससे मैं इस जमानतका पूरा रुपया बिना किसी विशेष विघ्न-बाधाके दे सकूंगा? और ऐसा होनेपर भी दूसरा प्रश्न यह उपस्थित होता है कि मैं जिसका जमानती होता हूं, उसके लिये उतना रुपया

जानेके लिये तैयार हूं ? यदि इन दोनों प्रश्नोंका उत्तर 'हां' हो तो उसे अपने मित्रकी सहायता करनी चाहिये, अन्यथा नहीं। यदि प्रथम प्रश्नका उत्तर 'हां' हो तो किसी दूसरे महाजनके ऋणके लिये जमानत देनेकी अपेक्षा स्वयं उतना रुपया अपने मित्रको उधार दे देना अच्छा है। मनुष्यके पास जो सम्पत्ति है, उसे अपने ऋणदाताओंके विश्वासके लिये अछूत रखना उचित है। इस नियमके अनुसार कार्य करनेके कारण ही श्रीकारनेगी सर्वदा विपत्तिसे बचे रहे। भारतीय व्यवसायियों, जमींदारों और गृहस्थोंको इससे पर्याप्त शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये।

इसी बीचमें श्रीकारनेगीने कई बार यूरोपकी यात्राकर अनेक सीक्यूरिटियोंको बेचनेका कार्य्य किया था। सब मिलाकर उन्होंने ३ करोड़ डालरकी सीक्यूरिटियां बेची थीं। उस समय तक लन्दनके बैंकवाले न्यूयार्ककी कुछ भी गिनती नहीं करते थे। न्यूयार्क दर अधिक होनेपर भी लोग सीक्यूरिटियोंको बरी दृष्टिसे दिखा करते थे। उन बैंकवालोंकी दृष्टिमें प्रजातन्त्र अमेरिकासे यूरोपके राष्ट्रोंकी साख ही अधिक थी।

श्रीकारनेगीका व्यवसाय उनके भाई और मि० फिप्सकी देखरेखमें ऐसे अच्छे ढङ्गसे चल रहा था कि वे सप्ताहोंतक बिना किसी चिन्ताके दूसरे कामोंमें प्रवृत्त हो सकते थे। बैंकवालोंसे कारबार करते हुए कभी कभी इनकी प्रवृत्ति भी बैंकके व्यवसायमें पड़नेकी हो जाती थी। अपनी सफलताके समय कई

बार उपयुक्त अवसर इनके सामने उपस्थित हुए, पर इन्होंने पूर्ण सोच विचारके उपरान्त अपनी समस्त पूंजी और शक्ति एक ही व्यवसायकी उन्नतिमें लगाये रखनेका दृढ़ निश्चय कर लिया। श्रीकारनेगी कोई व्यवहारकी चीज़ तैयारकर उससे सर्व साधारणके अभावको दूरकर रुपया पैदा करना चाहते थे—कागज़ी व्यवसायको पसन्द नहीं करते थे। इसी बीचमें इनका कारबार बढ़कर अमेरिकामें सर्वश्रेष्ठ हो गया था। एक बार इन्होंने एक रेलकम्पनी बनानेका विचार भी किया था, पर शीघ्र ही उससे हाथ खींचकर लोहेके व्यापारकी उन्नति करनेमें ही अपना पूर्ण ध्यान लगाना शुरू किया।

श्रीकारनेगी अपने व्यवसायमें पूर्ण सफलता प्राप्त करना चाहते थे और यही भाव इनके व्यवसायकी सफलताका मूल कारण था। अपनी पूर्ण शक्तिको एक मार्गमें—एक व्यवसायमें लगानेसे ही पूर्ण उन्नति होनेकी संभावना रहती है। शक्तिको छितरा देनेसे कोई लाभ नहीं हो सकता। शायद ही आपने किसी ऐसी औद्योगिक संस्थाको देखा होगा, जिसने एक ही साथ अनेक वस्तुओंको बनानेका काम हाथमें लेकर उन सभीमें पूर्ण सफलता लाभ की हो। जिन मनुष्योंने सफलता प्राप्त की है—सब अपनेको किसी निश्चित कार्यक्षेत्रके भीतर आबद्ध रखते थे। बहुतसे व्यापारी किसी एक व्यापारमें आर्थिक सफलता लाभकर फाटकाबाज़ी शुरू करते हैं या अपना रुपया किसी ऐसे व्यापारमें लगा देते हैं, जिसकी सफलताका उन्हें ज्ञान नहीं है।

वे पूर्ण सफलता लाभ करनेसे वंचित रह जाते हैं। वे घरके व्यवसायको छोड़कर मृगमरीचिकाके पीछे व्याकुल रहते हैं। श्रीकारनेगीने अपना ध्यान सब प्रकारके व्यवसायसे हटाकर केवल लोहेके व्यापारको उन्नत करनेमें लगाया और इसीलिये लोग उन्हें 'लौह-सम्राट्' (Steel King) कहा करते हैं।

श्रीकारनेगीके इङ्गलैण्ड-भ्रमणसे इनका परिचय प्रसिद्ध लौह-व्यवसायियोंसे हो गया। शीघ्र ही परिव्राजक इङ्गलैंडके आयरन और स्टील इन्स्टीट्यूटके सभापति बनाये गये। बृटिश प्रजा नहीं होनेपर भी एक अङ्गरेजी सभाके ये सभापति बनाये गये। श्रीकारनेगीने पहले तो इस सम्मानको अस्वीकार कर दिया था—कारण इनके अमेरिकामें रहनेके कारण ये भलीभांति इन्स्टीट्यूटका काम संपादन नहीं कर सकते—पर लोगोंके ओर देनेपर उसे स्वीकार कर लिया।

इसी समय सन् १८७० ई०में श्रीकारनेगीने इस्पात बनानेका एक बृहत् कारखाना खोला। इस कार्यमें इन्हें इङ्गलैंडके प्रसिद्ध इस्पात-व्यवसायी मि० हाइटहालसे बड़ी सहायता मिली। हाइटहालने अमेरिका आकर इस सम्बन्धकी सभी कठिनाइयोंको दूर कर दिया। इसके बाद तो मि० हाइटहालसे श्रीकारनेगीकी गाढ़ी दोस्ती हो गयी। अपने व्यवसायके रहस्योंको दोनों मुक्त कंठ होकर परस्पर बताया करते थे। दोनोंकी मित्रता मरणतक बनी रही। मि० हाइटहाल श्रीकारनेगीके बाद आयरन और स्टील इन्स्टीट्यूटके सभापति बनाये गये।

चतुर्दश परिच्छेद

दुनियाकी सैर

श्रीकारनेगीकी इस्पातकी मिल खूब चल निकली। बीच बीचमें अनेक प्रकारकी विपत्तियां भी आयीं—अनेक छोटे छोटे व्यवसायियोंका दिवाला निकला, पर कारनेगीमिलकी स्थिति हिमालयके समान अटल रही। श्रीकारनेगीकी संरक्षकता और प्रयत्नमें भला असफलताके लिये स्थान कहां?

कुछ दिनके बाद जर्मनी निवासी विलियम बार्न ट्रे जरकी देखरेखमें लोह मिलका कार्य चलने लगा। विलियम कोरा जर्मन था—अङ्गरेजी बिलकुल नहीं जानता था। शुरू शुरूमें यह कारनेगीमिलमें सामान्य कार्य करनेके लिये ही नियुक्त किया गया था, पर अपनी प्रतिभाके बलसे उसने देखते देखते उन्नति कर ली। शीघ्र ही यह अङ्गरेजी बोलनेमें पटु हो गया और ६ डालर प्रति सप्ताहपर किरानीका काम करने लगा। यह विश्राम का नाम भी नहीं जानता था, पर अपने मालिकके कामके लिए दिनरात इस प्रकार व्यस्त रहता था कि जहां देखो वहीं विलियम मौजूद है। उसे मिलमें होनेवाली प्रत्येक बातकी खबर रहती थी और उसकी नजरसे कुछ छूटने नहीं पाता था।

विलियमको रेलरोडमें कारनेगी-स्टील मिला। बड़ी उन्नति हुई। कुछ वर्षतक लगातार कामकर वह छुट्टी लेकर जर्मनी गया। वहांसे लौटकर फिर प्राणपणसे मिलकी सफलताके लिये यत्न करने लगा। प्रातःकालसे लेकर दस बजे राततक वह मिलमें मौजूद रहता था। उसकी कर्तव्यशीलतापर मुग्ध होकर श्रीकारनेगीने उसे अपनी कम्पनीका हिस्सेदार बना लिया था। मरनेके समय दरिद्र विलियम ५० हजार डालर वार्षिककी आय छोड़कर मरा था।

विलियमके सम्बन्धमें दो एक कथा अत्यन्त मनोरंजक हैं। एक दिन उसने मिलोंके सरकारी निरीक्षक कैप्टेन इवान्सके साथ दुर्व्यवहार किया। कैप्टेनने इस बातकी शिकायत श्रीकारनेगीसे की। श्रीकारनेगीने विलियमको समझाया कि गवर्नमेंटके अफसरोंके साथ भलमनसाहतका व्यवहार करना चाहिये। इसपर विलियम बोल उठा—"वह तो आकर मेरे सिगरेटोंको पी जाता है। फिर भीतर जाकर हमारे लोहेकी निन्दा करता है। ऐसे आदमियोंके बारेमें आप क्या कहते हैं? अच्छा, मैं कल उससे क्षमा मांग लूंगा।"

कैप्टेनको कह दिया गया कि विलियम क्षमा प्रार्थना करेगा। दूसरे दिन कैप्टेन इवान्सने हंसते हुए विलियमकी क्षमा-प्रार्थनाका हाल कह सुनाया। विलियमने क्षमा-प्रार्थना इन शब्दोंमें की थी—

"अच्छा कैप्टेन! मैं आशा करता हूं कि आज सवेरे तुम्हारा

आचरण ठीक होगा। तुम्हारे विरुद्ध मुझे अब कुछ नहीं कहना है कैप्टेन।" इतना कहकर उसने हाथ बढ़ाकर इवान्ससे हाथ मिलानेकी इच्छा प्रकट की। कैप्टेनने भी हँसकर हाथ मिलाया और फिर सब बखेड़ा मिट गया।

विलियमने एकबार एक लोहेके व्यवसायीके हाथ कुछ पुरानी पटरियोंको बेचा था। व्यापारीने उनको बहुत खराब पाकर चरित्रनायकसे इस बातकी शिकायत की। उसने हर्जाना भी मांगा। विलियमसे कहा गया कि वह उस व्यापारीसे मिलकर सब बात ठीक करें। विलियम उस व्यापारीके यहां गया और घूम फिरकर उसके कारखानेको अच्छी तरह देखकर जब उन पटरियोंको कहीं नहीं देखा तो उससे कहा—"अच्छा महाशय, यदि आपको मेरी पटरियां पसन्द नहीं हैं तो आप मुझे लौटा दीजिये। आपको मैं टन पीछे पांच डालर नफेमें देता हूं।" पटरियां तो काममें आ चुकी थीं, व्यवसायीसे कुछ उत्तर देते नहीं बन पड़ा। मामला यहीं ठंडा पड़ गया।

श्रीकारनेगीके प्रसिद्ध साझेदार मि॰ फिप्स मिलके व्यापारिक विभागके अध्यक्षका कार्य करते थे। जब व्यवसाय बहुत अधिक बढ़ गया तब वे इस्पात विभागमें चले आये और विलियम एबोट नामक एक नवयुवक उनके स्थानमें कार्य करने लगा। एबोटका जीवन भी विलियम बोर्न ट्रेजरके समान ही घटनामूलक था। पहले वह किरानीके कामपर नियुक्त हुआ

था। धीरे धीरे उन्नतिकर यह भी हिस्सेदार बना लिया गया और अन्तमें कम्पनीका प्रेसिडेन्ट हुआ।

पहलेपहल जब श्रीकारनेगीने इस्पातका कारखाना खोला तो इनके प्रतिद्वन्द्वियोंने इनको विशेष परवाह नहीं की। उन लोगोंको अपने व्यवसायमें बड़ी कठिनता उठानी पड़ी थी और उनका विश्वास था कि सभोको उसी प्रकारकी कठिनता उठानी पड़ी होगी। पर श्रीकारनेगीने अपने सुप्रबन्धके द्वारा जो उन्नति की थी उससे वे लोग परिचित नहीं थे। फल यह हुआ कि श्रीकारनेगीका व्यवसाय अपने प्रतिद्वन्द्वियोंके मुकाबिलेमें बढ़ चला। पहले ही मासमें उन्हें ११ हजार डालरकी बचत हुई। इन्होंने हिसाब किताब रखनेकी ऐसी अच्छी विधि निकाली थी, जिससे प्रतिदिनके लाभका हाल मालूम हो सकता था।

इस प्रकार व्यवसायमें सफलता प्राप्त करनेके बाद श्रीकार नेगीने कुछ दिन सैर करनेका इरादा किया। अपने प्रिय मित्र मि० जे० डब्ल्यू वेण्डेवोर्ट "वेण्डी" के साथ चरित्रनायकने संसार-भ्रमणके लिये प्रस्थान किया। सन् १८७८ ई०की शरद् ऋतुमें यात्रा आरम्भ हुई। यात्राका विवरण श्रीकारनेगी लिखते जाते थे। प्रारम्भमें इनका विचार भ्रमण-वृत्तान्तको प्रकाशित करनेका नहीं था—छापकर केवल मित्रोंको दिखानेका था। इन्होंने पुस्तक छपाकर मित्रोंके पास भेजी और बड़ी उत्सुकताके साथ उनकी समालोचनाकी प्रतीक्षा करने लगी।

इन्हें मित्रोंसे ग्रन्थकी बुरी समालोचनाका भय नहीं था। डर यही था कि ये लोग प्रशंसाके पुल बांध देंगे—सच्ची बातें नहीं कहेंगे। जो हो, सभी लेखक समालोचकोंसे प्रशंसा ही चाहते हैं। 'निज कवित्त केहि लाग न नीका, सरस होहि अथवा अति फीका।' फिर भी जब किसी लेखककी पहली पुस्तक ही लोगोंके सामने पहुंचती है तो उसका मन पुस्तककी प्रशंसाके लिये जिस प्रकार लालायित रहता है, उसे भुक्त भोगी ही जान सकते हैं। अस्तु, एक मित्रने परिव्रनायकको लिखा—"आपकी पुस्तकने मेरी कई घंटेकी नींद हराम कर दी। पुस्तक शुरू करके छोड़नेकी इच्छा ही नहीं हुई। आखिर दो बजे रातको पुस्तक समाप्तकर सो सका।"

सेन्ट्रल पेसिफिक रेलवेके प्रेसिडेन्ट मि० हटिंगटनने इनकी पुस्तकको पढ़नेके बाद एक दिन मुलाकात होनेपर कहा—"मैं आपको बधाई देना चाहता हूं।"

"क्यों? बात क्या है?" परिव्रनायकने पूछा।

"मैं आपकी पुस्तक अथसे इतितक पढ़ गया।"

थोकारमेरीने कहा—"यह तो सामान्य बात है। बहुतसे मित्र मेरी पुस्तकको पढ़ गये हैं।"

"जो हो! पर आपके थोड़ मित्र मेरे समान नहीं हैं। मैंने जमा खर्चकी बहीको छोड़कर कुछ वर्षोंसे एक भी पुस्तक नहीं पढ़ी थी। मुझे आपकी पुस्तक पढ़नेकी भी इच्छा नहीं थी, पर पुस्तक उठानेपर मैं उसे बिना समाप्त किये छोड़

नहीं सका। मैंने पांच वर्षके भीतर केवल आपकी पुस्तक पढ़ी है।"

इसी प्रकार प्रशंसापूर्ण समालोचना इस "दुनियांकी सैर" की हुई। पीछे तो सर्वसाधारणके लिये यह पुस्तक ग्रन्थके रूपमें छपायी गयी और समाचार पत्रोंने भी अच्छी समालोचना की। इस प्रकार श्रीकारनेगी प्रथम ग्रन्थके लेखक हुए।

इस भ्रमणसे श्रीकारनेगीके विचार बहुत बदल गये। उस समय प्रसिद्ध तत्ववेत्ता स्पेन्सर और विकाशवादके आविष्कारक मि० डारविनका यश सौरभ चारों ओर फैल रहा था। चरित्रनायकने उनके ग्रन्थोंका पूर्ण अध्ययन किया। चीन जाने पर इन्होंने 'कन्फ्यूशियस', भारतवर्षमें बौद्ध और हिन्दू धर्मके ग्रन्थोंको पढा। 'जेन्दावेस्ता' भी इन्होंने पढ़ डाला। अब इन्हें पूर्ण मानसिक शान्ति प्राप्त हुई। अशान्त मानसिक जगत्‌में शान्तिका साम्राज्य छा गया। ईसाके "स्वर्ग तुम्हारे भीतर ही है" इस वाक्यका प्रकृत अर्थ इनकी समझमें आया। इन्होंने समझा कि संसार ही हमारा कर्मक्षेत्र है और अपने कर्त्तव्यके फलसे ही हम स्वर्ग या नरकका सुख दुःख इसी जीवनमें भोगते हैं। इन्हें पता लगा कि सभी देशोंको सभी जातियोंके धर्ममें सच्ची बाते हैं। कोई धर्म अच्छा या बुरा नहीं है। देशकी स्थितिके अनुसार जहां जिस धर्मकी उत्पत्ति हुई है, वहांके निवासियोंके लिये वही ठीक है।

इस यात्राके समय श्रीकारनेगोने भिन्न भिन्न देशोंके

लोगोंकी स्थिति और मनोभावोंके अध्ययन करनेके बाद जाना कि सब अपने घरको ही सर्वश्रेष्ठ मानते हैं। सिंगापुरमें पहुंच कर इन्होंने यहांके निवासियोंको अर्द्धनग्न और बालक-बालिकाओंको आनन्द मग्न हो उछलते कूदते पाया। चरित्रनायकको देखकर लोग घेरकर खड़े हो गये। इन्होंने दुभाषियेके द्वारा उनसे कहा कि जाड़ेमें अमेरिकाकी नदियोंका जल बर्फ बन जाता है और लोगोंको उसीपर चलकर पार होना पड़ता है। उन लोगोंने उत्तर दिया—"हमलोगोंका देश बड़ा सुन्दर है। आप यहीं आकर क्यों नहीं बस जाते? हमलोगोंको तो यहां बड़ा आराम है।" सत्य है—सभीको घर प्रिय होता है। स्वर्ग भी घरसे बढ़कर नहीं है।

पञ्चदश परिच्छेद
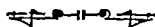
भूतलपर स्वर्ग

इसी यात्रामें श्रीकारनेगी डनफरलिनके दर्शनके लिये भी गये थे। १२वीं जुलाई सन् १८७७ ई०में इन्हें 'स्वतन्त्र नागरिक' बनाकर इनका सम्मान किया गया। इनके जीवनमें पहली बार सर्वसाधारणने इन्हें सम्मानित किया था। श्रीकारनेगी हर्षातिरेकसे विह्वल हो गये। इस अवसरपर इन्होंने 'स्वतन्त्रता' पर जो भाषण दिया था, सबने उसकी भूरि भूरि प्रशंसा की। पीछे इन्होंने अपने मामा मारिसनसे कहा कि मैंने उस समय केवल वे ही बातें कही थीं, जो मेरे हृदयमें थीं। मारिसन प्रसिद्ध वक्ता था। उसने कहा—

"तुमने ठीक ही किया था अण्ड्रा! बस, भाषण करनेके समय केवल वही बोलना चाहिये जो हृदयका भाव हो।"

सार्वजनिक भाषणमें इस नियमको चरित्रनायकने सर्वदा ध्यानमें रखा। नवयुवक वक्ताओंको इसे सर्वदा स्मरण रखना चाहिये। श्रोताओंके सामने खड़े होकर उनके सामने साधारण बातचीतकी तरह भाषण करना चाहिये। कृत्रिमता दिखानेसे ही बाधा उपस्थित होती है। बस, प्रकृतिस्थ होकर हृदयकी बात कह सुनानी चाहिये। हृदयसे निकली हुई बात हृदयतक पैठ

जाती है। प्रसिद्ध वक्ता कर्नल इङ्गरसोलसे एक दिन ग्रीकारनेगीने उनकी सफलताका रहस्य पूछा। उन्होंने कहा—

"सदैव कृत्रिमतासे दूर रहो। लोगोंके सामने साधारण बात चीतके समान भाषण करो।"

इस प्रकार संसार-भ्रमणकर ग्रीकारनेगी सन् १८८१ ई० की वसन्तऋतुमें अमेरिका लौट आये। व्यवसायसे छुट्टी लेकर सैर करनेके बादसे ही इनका स्वास्थ्य बराबर ठीक बना रहा। जो काम संसार भरकी दवासे नहीं हो सका, वह भ्रमणसे सिद्ध हुआ।

सन् १८८६ ई० में चरित्रनायकके ऊपर अनभ्र वज्रपात हुआ। जिन माताके पूज्य चरणोंके प्रतापसे इन्होंने मनुष्यताकी शिक्षा ग्रहण की थी—जो माता इनके जीवनका सर्वस्व थी—वही अपने भाग्यवान धनकुबेर पुत्रकी सफलतापर आनन्द मनाती हुई स्वर्गधामको चली गयी। इनका छोटा भाई 'टाम' भी कुछ ही दिनोंके बाद चल बसा। उस समय चरित्रनायक भी भयंकर फालज्वरसे पीड़ित थे। जिस दिन इन्हें अपने भ्राता और माताकी मृत्युकी सूचना मिली, उस दिन इनकी दशा भी अत्यन्त संकटपूर्ण हो रही थी। बचनेकी कोई आशा न होनेके कारण इन्होंने भी धैर्य्यपूर्वक उस दारुण संवादको सुना। अबतक ये लोग साथ ही रहते आये थे—फिर मरनेके समय भी साथ क्यों न दिया जाय? पर ईश्वरकी इच्छा कुछ दूसरी ही थी।

धीरे धीरे चरित्रनायक आरोग्य लाभ करने लगे। अब इन्हें अपना घर उजाड़ मालूम होने लगा। केवल आशाकी एक क्षीण रश्मि दूरसे दिखायी दे रही थी। कई वर्षोंसे श्रीकारनेगी कुमारी ह्विटफील्डसे परिचित थे। अपनी माताकी आज्ञा ले वह श्रीकारनेगीके साथ घोड़ेपर सवार होकर घूमने निकला करती थी। दोनों इसको बहुत पसन्द करते थे। और भी अनेक कुमारियोंका नाम चरित्रनायककी लिस्टपर लिखा था। धीरे धीरे सब खिसक गयीं, पर कुमारी ह्विटफील्ड दृढ़ रहीं। पहले तो कुमारी ह्विटफील्डने धनकुबेर कारनेगीसे विवाह करना अस्वीकार कर दिया था, पर जब उसने देखा कि माता और भाईकी मृत्युसे कारनेगीका संसार उजाड़ हो गया है और वह यथार्थमें चरित्रनायकका सहायक बन सकती है, तब उसने स्वीकार कर लिया। उस समय कुमारी ह्विटफील्डकी अवस्था २८ वर्षकी और कारनेगीकी अवस्था ५२ वर्षकी थी। २२ वीं अप्रैल सन् १८८७ ई० को न्यूयार्कमें दोनों विवाह-बन्धनमें बंध गये और समाजकी प्रथाके अनुसार 'हनीमून' मनानेके लिये वाइट द्वीपमें चले गये।

जङ्गली फूलोंको देखकर श्रीमती कारनेगी बहुत प्रसन्न हुई। पुस्तकोंमें श्रीमतीने इन फूलोंके बारेमें पढ़ा था—अब प्रत्यक्ष दर्शनकर श्रीमतीकी प्रसन्नताका क्या पूछना था। श्रीकारनेगी का सखा ब्लेनर वहां इनसे मिलने आया और उसके साथ किल ग्रास्टन नामक स्थानमें आकर इन्होंने ग्रीष्मकाल व्यतीत किया।

स्काटलैण्डके दृश्योंको देखकर श्रीमती कारनेगी मुग्ध हो गयी। कुछ दिनके लिये श्रीकारनेगी डनफरलिन भी गये और वहां भी खूब आनन्द प्राप्त किया। लड़कपनकी बातोंको अपनी सहधर्मिणीको बताकर वे विचित्र कुतूहल लाभ करते थे।

पश्चिमयगमें इन्हें नागरिक स्वाधीनता प्रदान की गयी। मजूरोंकी एक विशाल सभामें भी इन्होंने भाषण दिया था। मजूरोंने इन्हें प्रीति-भेंट समर्पित की थी। श्रीमती कारनेगी को भी उन लोगोंने सम्मानित किया था।

इस प्रकार आनन्द मनाकर श्रीकारनेगी अमेरिका लौट आये। सन् १८८७ ई०की ३० वीं मार्चको श्रीमती कारनेगीने एक कन्यारत्नको प्रसव किया। श्रीमतीके अनुरोधसे बालिका का नामकरण दादीके नामके अनुसार मारगेरेट किया गया। श्रीमतीके ही अनुरोधसे चरित्रनायकने स्काटलैण्डमें ग्रीष्म निवासके लिये स्कीबो कैसल खरीदा।

चरित्रनायकका अपनी सहधर्मिणीके प्रति कैसा भाव था, यह उन्हींके शब्दोंमें कहना ठीक होगा। उन्होंने अपने आत्म चरितमें लिखा है—

"मेरी पूज्य माता और सहोदर भ्राताके वियोगके कुछ मासके बाद ही श्रीमती कारनेगीने चिरसंगिनी बन मेरे जीवनको बिलकुल बदल दिया। मेरा जीवन उसके संसर्गसे इतना आनन्दपूर्ण हो गया है कि उसके बिना जीनेकी मैं कल्पना भी नहीं कर सकता। विवाह करनेके पूर्व मैं केवल

उसके ऊपरी गुणों हीको जान सका था। उस समय उसकी पवित्रता, साधुता और बुद्धिमत्ताकी गहराईका पता मैं नहीं पा सका था। इन बीस वर्षोंके अनुभवसे मैं कह सकता हूं कि वह शान्तिमयी देवी है। जहांतक उसका प्रभाव पड़ता है वहां शान्ति छा जाती है। अपने जीवनमें उसने कभी किसीके साथ झगड़ा नहीं किया। जो कोई उससे मिलते हैं, वे सन्तुष्ट होकर ही जाते हैं। धन और उच्च सामाजिक जीवनका अभिमान उसे छूतक नहीं गया है। गन्दे शब्द उसके मुंहसे निकल ही नहीं सकते। उसका परिचय केवल निर्दोष मनुष्योंके साथ है। वह दिनरात लोगोंके हित-साधनके लिये चिन्तित रहती है। उसके बिना मेरा जीवन असह्य हो जाता। इन बीस वर्षोंतक वही मेरे जीवनका आधार रही है।"

इस प्रकार सच्ची सहधर्मिणी पाकर श्रीकारनेगीके लिये यह संसार ही स्वर्गमय हो गया था। स्वामी और स्त्रीके रूपमें दो पवित्र आत्माओंके संयोगसे यथार्थमें भूतलपर स्वर्गका आविर्भाव होता है। श्रीकारनेगी इस विषयमें यथार्थमें भाग्यवान थे।

षोडश परिच्छेद

व्यवसायका सञ्चालन

इङ्गलैण्डमें घूमते समय श्रीकारनेगीने अनुभव किया था कि व्यवसायकी सफलताके लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि जिस वस्तुका उत्पादन किया जाता है, उसके कच्चे मालोंका प्रबन्ध भी उस व्यवसायीके पूर्ण अधिकारमें रहना चाहिये। प्रत्येक वस्तुके उत्पादनके लिये कच्चा माल, पूंजी, श्रम और सङ्गठनकी आवश्यकता हुआ करती है। यदि व्यवसायी इन सभी बातोंको अपने अधिकारमें रख सकें तो उनकी सफलता उनके अपने हाथमें है। श्रीकारनेगीने भी लोहेके व्यवसायमें पूर्ण सफलता प्राप्त करनेके लिये यह आवश्यक देखा कि कच्चे लोहेकी खानोंको ही खरीद लिया जाय। तदनुसार कार्य्य किया जाने लगा। टाइरन प्रदेशमें एक लोहेकी खान खरीदी गयी, पर इसमें कारनेगीकम्पनीको कुछ धोखा खाना पड़ा। ऊपर तो लोहा अच्छा निकला, पर नीचे आकर मामला बिलकुल गोलमाल था। पीछे श्रीकारनेगीने अपने रसायन शास्त्रीको बहुत सी खानोंकी परीक्षाके लिये बाहर भेजा। फल यह हुआ कि इस बार उन्हें आशातीत सफलता मिली। बहुतसी ऐसी खानोंको

चरित्रनायकने खरीदा, जिन्हें रसायन शास्त्रकी अनभिज्ञताके कारण कोई कारखानेवाला नहीं पूछता था, पर यथार्थमें उसमें प्रथम श्रेणीका लोहा पाया गया। चरित्रनायकके बड़े भाई टौमसने इस काममें अच्छी मदद की। वह पीछे इनको कम्पनी में हिस्सेदार भी हो गया।

चरित्रनायक इस प्रकार व्यवसाय-जगत्में पूर्ण सफलता लाभ कर रहे थे। एक बार बड़े भाग्यसे इनकी कम्पनी भारी हानि उठानेसे बची। पिट्सबर्गमें नेशनल ट्रस्ट नामकी एक कम्पनी थी। लोगोंके अनुरोधसे ओबारनेगीने भी उसमें २ हजार डालरके शेयर खरीद लिये थे। इन्हें इन शेयरोंके सम्बन्धमें विशेष कुछ मालूम भी नहीं था। एक बार संयोगवश चरित्रनायक पेनस्ट्रीटकी ओर घूमने निकले, यहाँ उस कम्पनीका आफिस था। इन्होंने बड़े बड़े सुनहले अक्षरोंमें कम्पनीके साइनबोर्डपर लिखा हुआ देखा—"कम्पनीके हिस्सेदार व्यक्तिगत रूपसे इसकी हानिके लिये दायी हैं।" आफिस लौटनेपर अपने बही खातोंको उलटकर देखनेसे इन्हें पता लगा कि २ हजार डालरके मूल्यके शेयर इनकी कम्पनीने भी खरीद रखे थे। इन्होंने प्रबन्धकको बुलाकर कहा—

"आप कृपाकर इस कम्पनीके शेयरोंको आज तीसरे पहर तक बेच डालिये।"

उसने कहा—"इतनी जल्दबाजीकी जरूरत नहीं, कुछ दिन और ठहरना चाहिये।"

श्रीकारनेगीने गंभीरतासे उत्तर दिया—"नहीं, इनको आज ही बेच डालना होगा।"

शेयर बेच डाले गये। कुछ ही दिनोंके बाद नैशनल ट्रस्ट कम्पनीका दिवाला निकल गया और हिस्सेदारोंको तबाह होना पड़ा। यदि श्रीकारनेगीने शेयरोंको न बेच डाला होता तो इन्हें भी कम्पनीकी हानिके लिये व्यक्तिगत रूपसे भागी बनना पड़ता और इनकी कम्पनीको भारी हानि उठानी पड़ती।

व्यवसायक्षेत्रमें कार्य करते हुए कभी व्यक्तिगत उत्तरदायित्व नहीं लेना चाहिये। किसी ऐसी कम्पनीका शेयर खरीदना तो अत्यन्त अनुचित है, जिसके हिस्सेदारोंको व्यक्तिगत रूपसे कम्पनीकी हानिका देनदार बनना पड़े। केवल दो हजार डालरके शेयरके लिये श्रीकारनेगीको लाखों डालरकी चपेटमें पड़ना पड़ता और यह शेयर भी केवल मित्रोंके अनुरोधसे केवल इसलिये खरीदे गये थे, जिसमें श्रीकारनेगीका नाम भी लिस्टमें रहे।

लोहेके स्थानमें इस्पातका व्यवहार होनेसे श्रीकारनेगीको कम्पनीने बड़ा लाभ उठाया। उस समय लौहराजका स्थान इस्पातराजने ग्रहण कर लिया था। उसी समय पिट्सबर्गके कुछ लोहेके व्यवसायी अपनी मिलोंको बेच डालना चाहते थे। श्रीकारनेगीने सब कारखानोंको खरीद लिया। अब सब कम्पनियोंको मिलाकर 'कारनेगी ब्रदर्स एण्ड को'के नामसे एक बड़ी कम्पनी खोल दी गयी। स्थान स्थानमें इसकी शाखायें खोल

चरित्रनायकको खरीदा, जिन्हें रसायन ज्ञानकी अनभिज्ञताके कारण कोई कारखानेवाला नहीं पूछता था, पर यथार्थमें उसमें प्रथम श्रेणीका लोहा पाया गया। चरित्रनायकके चचेरे भाई लौडरने इस काममें अच्छी मदद की। वह पीछे इनकी कम्पनी में हिस्सेदार भी हो गया।

चरित्रनायक इस प्रकार व्यवसाय-जगत्में पूर्ण सफलता लाभ कर रहे थे। एक बार बड़े भाग्यसे इनकी कम्पनी भारी हानि उठानेसे बची। पिट्सबर्गमें नेशनल ट्रस्ट नामकी एक कम्पनी थी। लोगोंके अनुरोधसे श्रीकारनेगीने भी उसमें २ हजार डालरके शेयर खरीद लिये थे। इन्हें इन शेयरोंके सम्बन्धमें विशेष कुछ मालूम भी नहीं था। एक बार संयोगवश चरित्रनायक पेनस्ट्रीटकी ओर घूमने निकले वहीं उस कम्पनीका आफिस था। इन्होंने बड़े बड़े सुनहले अक्षरोंमें कम्पनीके साइनबोर्डपर लिखा हुआ देखा—"कम्पनीके हिस्सेदार व्यक्तिगत रूपसे इसकी हानिके लिये दायी हैं।" आफिस लौटनेपर सबसे बही खातोंको उलटकर देखनेसे इन्हें पता लगा कि २ हजार डालरके मूल्यके शेयर इनकी कम्पनीने भी खरीद रखे थे। इन्होंने प्रबन्धकको बुलाकर कहा—

"आप कृपाकर इस कम्पनीके शेयरोंको आज तीसरे पहर तक बेच डालिये।"

उसने कहा—"इतनी जल्दबाजीकी जरूरत नहीं, कुछ दिन और ठहरना चाहिये।"

श्रीकारनेगीने गंभीरतासे उत्तर दिया—"नहीं, इनको आज ही बेच डालना होगा।"

शेयर बेच डाले गये। कुछ ही दिनोंके बाद नेशनल ट्रस्ट कम्पनीका दिवाला निकल गया और हिस्सेदारोंको तबाह होना पड़ा। यदि श्रीकारनेगीने शेयरोंको न बेच डाला होता तो इन्हें भी कम्पनीकी हानिके लिये व्यक्तिगत रूपसे भागी बनना पड़ता और इनको कम्पनीको भारी हानि उठानी पड़ती।

व्यवसायक्षेत्रमें कार्य करते हुए कभी व्यक्तिगत उत्तरदायित्व नहीं लेना चाहिये। किसी ऐसी कम्पनीका शेयर खरीदना तो अत्यन्त अनुचित है, जिसके हिस्सेदारोंको व्यक्तिगत रूपसे कम्पनीकी हानिका देनदार बनना पड़े। केवल दो हजार डालरके शेयरके लिये श्रीकारनेगीको लाखों डालरकी चपेटमें पड़ना पड़ता और यह शेयर भी केवल मित्रोंके अनुरोधसे केवल इसलिये खरीदे गये थे, जिसमें श्रीकारनेगीका नाम भी लिस्टमें रहे।

लोहेके स्थानमें इस्पातका व्यवहार होनेसे श्रीकारनेगीकी कम्पनीने बड़ा लाभ उठाया। उस समय लौहराजका स्थान इस्पातराजने ग्रहण कर लिया था। उसी समय पिट्सबर्गके कुछ लोहेके व्यवसायी अपनी मिलोंको बेच डालना चाहते थे। श्रीकारनेगीने सब कारखानोंको खरीद लिया। अब सब कम्पनियोंको मिलाकर 'कारनेगी ब्रदर्स एण्ड को'के नामसे एक बड़ी कम्पनी खोल दी गयी। स्थान स्थानमें इसकी शाखायें खोल

दी गयीं। अब तो यह कम्पनी लोहेकी खानोंके संचालनसे आरम्भकर लोहे और इस्पातकी सब प्रकारकी छोटी-बड़ी चीजोंको तैयार करनेमें समर्थ थी।

सन् १८८८ ई०से लेकर सन् १८९७ ई०तक कारनेगी-कम्पनीने किस हिसाबसे उन्नति की थी, उसका लेखा पाठकोंके लिये अवश्य ही मनोरञ्जक होगा। सन् १८८८ ई०में श्रीकारनेगीने २ करोड़ डालर अपने व्यवसायमें लगाये थे और सन् १८९७ ई०में वही बढ़कर चार करोड़ ५० लाख डालर हो गये। सन् १८८८ ई०में ६ लाख टन इस्पात तैयार होता था—दस ही वर्षोंमें वह बढ़कर २० लाख टन हो गया। पहले प्रतिदिन २००० टन माल तैयार होता था—पीछे वह ६ हजार टन दैनिक हो गया।

अमेरिका शीघ्र ही लोहेके कारबारमें संसारमें सर्वश्रेष्ठ हो जायगा। संसारभर अमेरिकामें प्रस्तुत लोहेकी चीजोंको खरीद रहा है—भविष्यमें यह प्रतिस्पर्द्धामें सबको दबा सके, यह असम्भव नहीं है। यद्यपि वहां मजूरी अत्यन्त महंगी है, पर अमेरिकावाले इस बातको अच्छी तरह जानते हैं कि सब प्रकारसे सन्तुष्ट मजूर जितना अधिक काम कर सकता है, उसका दशांश भी परिवारके भरणपोषणके लिये चिन्ताग्रस्त, सब प्रकारके आर्थिक कष्टोंको भोगता हुआ शान्ति और उत्साहहीन, जी चुरानेवाला मजूर नहीं कर सकता। अमेरिकन मजूर पूरी मजूरी लेते हैं तो पूरा काम भी कर देते हैं। भारतवर्षकी तरह यहांके मजूर अशिक्षित और कामचोर

नहीं होते और न यहांके व्यवसायी यहांवालोंकी तरह मक्खी चूस ही हैं। भारतीय व्यवसायी मजूरोंको कमसे कम मजूरी देकर अधिकसे अधिक काम लेना चाहते हैं। वे मजूरोंकी शिक्षा, स्वास्थ्योन्नति तथा आमोद प्रमोदके लिये कुछ भी करना नहीं चाहते। मजूर भी अपने भाग्यको कोसते हुए रोते कलपते दिन काटते हैं। अमेरिकन मजूर उन्नति करके राष्ट्रका अध्यक्ष बन सकता है, पर यहां तो रमुआ कहार सब दिन बरतन धोते हो बूढ़ा हो जाता है। ऐसी स्थितिमें भारतीय व्यवसायकी दुर्गति हो और भारतवासी दरिद्रताके मारे बेमौत मरा करें तो इसमें आश्चर्य ही क्या है। यहांका व्यावसायिक-जगत् ही रोगग्रस्त हो रहा है। बिना मजूरोंकी दशाके सुधारे भारतीय व्यवसायकी उन्नति असम्भव है।

अमेरिकन लौह-व्यवसायकी उन्नतिका एक कारण और है। इसके लिये उसे सर्वश्रेष्ठ Home market मौजूद है। पूंजीसे लाभ उठानेके लिये जितने मालकी खपतकी जरूरत है, उतना अमेरिका हीमें बिक जाना बिलकुल आसान है। ऐसी स्थितिमें अमेरिकन व्यवसायी बचे हुए मालको (Surplus Produce) अत्यन्त सस्ती दरमें, लागतसे भी कम दाममें, विदेशोंमें बेच सकते हैं। अमेरिकन व्यवसायी प्रायः ऐसा ही कर रहे हैं। इसीसे आप बाजारमें अमेरिकन माल प्रायः अन्य देशोंकी अपेक्षा सस्ते भावमें खरीद सकते हैं।

सन् १८६२ ई०में चरित्रनायक जिस समय स्काटलैण्डकी

सैर करने गये थे, उसी समय कारनेगी कम्पनीके इतिहासमें पहली और अन्तिमवार एक भीषण हड़ताल हुई। श्रीकारनेगी यदि अमेरिकामें मौजूद रहते तो यह दुर्घटना होने ही नहीं पाती। इनका तो आदर्श मजूरोंको सन्तुष्ट रखना था। जभी मजूर कुछ अधिक वेतनकी मांग पेश करते थे, श्रीकारनेगी बिना किसी आपत्तिके मजूरी बढ़ा दिया करते थे। मजूरोंके सन्तुष्ट रहनेसे कभी कम्पनीको वेतन-वृद्धिके कारण हानि नहीं उठानी पड़ी। पर इनकी अनुपस्थितिके कारण इनके साझेदार इस अवसरपर चूक गये। कारनेगीकी मिलोंमें नये प्रकारकी मशीनें बैठायी गयी थीं और उसके लिये मजूरोंके कार्यक्रमका ढंग भी बदल दिया गया था। इसके अनुसार जो मजूर जितना अधिक उत्पादन कर सकता था, वह उतना ही अधिक मजूरी पानेका अधिकारी होता था। शुरूमें मजूरोंने नासमझीके कारण नवीन प्रथाका विरोध किया और मालिकोंके न माननेके कारण हड़ताल कर दी। श्रीकारनेगी उस समय स्काटलैण्डकी जन्मभूमिमें अपनी सहधर्मिणीके साथ सैर कर रहे थे। मजूरोंका इनपर कैसा विश्वास और श्रद्धा थी वह इसीसे प्रकट होता है कि मजूरसंघके कार्य्यकर्ताओंने हड़ताल शुरू करनेके पहले निम्नलिखित तार इनके पास भेजा था—"दयालु स्वामी! कहिये, इस स्थितिमें आप हमलोगोंको क्या करने कहते हैं। हमलोग आपकी आज्ञाके अनुसार कार्य्य करनेके लिये तैयार हैं।"

दुःखकी बात यही हुई कि तार देर करके इन्हें मिला।

तयतक हड़तालने उग्ररूप धारण कर लिया था। चरित्रनायकके मित्रों और परिचितोंने इनके पास बहुसंख्यक सहानुभूतिके पत्र भेजे। इङ्गलैण्डके प्रधान सचिव मि० ग्लाडस्टनने निम्नलिखित मर्मका पत्र भेजा था—

परमप्रिय मि० कारनेगी

मेरी स्त्री आपके कृपापत्रके लिये आपको आन्तरिक धन्यवाद देती है। मैं खूब जानता हूं कि इस समय आप व्यावसायिक चिन्तासे ग्रस्त हैं। पर मैं यह कह देना चाहता हूं कि आपकी कम्पनीके मजूरोंके हड़ताल कर देनेपर भी कोई यह कहनेका साहस नहीं कर सकता कि कारनेगी दरिद्र और असहाय मजूरोंके पीड़क हैं। धन मनुष्यके नैतिक जीवनको नष्ट कर रहा है, पर आपके सम्बन्धमें यह बात कोई नहीं कह सकता।

भवदीय विश्वस्त—

ग्लाडस्टन

श्रीकारनेगीके सम्बन्धमें लोगोंके क्या विचार थे, उसे पाठक मि० ग्लाडस्टनके पत्रसे भलीभांति जान सकते हैं। पर अमेरिकन सर्वसाधारणकी यह धारणा हो गयी थी कि श्रीकारनेगी अमेरिका छोड़े हैं और वे ही जान-बूझकर मजूरोंको दबाना चाहते हैं। कुछ वर्षोंतक तो अच्छी जनताने इनको खूब बदनाम किया, पर सूर्य्य सर्वदा कुहरेसे आच्छन्न नहीं रह सकता। सच्ची बातें मालूम होनेपर लोगोंकी श्रद्धाभक्ति इनपर

और भी बढ़ गयी। अन्तमें मजूरोंको हारकर हड़ताल भंग करनी पड़ी, पर ओकारनेगीके प्रभावसे उनपर किसी प्रकारकी कड़ाई नहीं की गयी। इसके बाद ही नेशनल सिविल फेडरेशन नामकी मजूर और व्यवसायियोंकी एक संस्थाके अध्यक्षका पद रिक्त हुआ। लोगोंने ओकारनेगीको ही अध्यक्ष बनाना चाहा। फेडरेशनके वार्षिक अधिवेशनके समय जब इनका नाम सभापतिके पदके लिये प्रस्तावित किया गया और मजूर-नेताओंने सहर्ष प्रस्तावका समर्थन और अनुमोदन किया। तब तो चरित्र नायकके आश्चर्यका कोई ठिकाना नहीं रहा। ओकारनेगीने इस सम्मानको अस्वीकार करते हुए कहा—"आप लोगोंको शायद मालूम है कि एक बार लू लग जानेके कारण मैं धूप बर्दाश्त नहीं कर सकता। इस फेडरेशनका अध्यक्ष ऐसे मनुष्यको बनाना चाहिये जो धूप और वर्षा, सर्दी और गर्मीसे न घबराकर सर्वदा किसी भी कठिन स्थितिका सामना करनेके लिये प्रस्तुत रहे। आप लोगोंने मुझे जो सम्मान प्रदान करना चाहा था, इसके लिये मैं आप लोगोंको अनेक धन्यवाद देता हूं। मैं फेडरेशनकी कार्यकारिणी कमिटीका सदस्य बननेके लिये तैयार हूं और उस दशामें मैं आप लोगोंकी यथाशक्ति सेवाकर अपनेको कृतार्थ समझूंगा।" अन्तमें चरित्रनायककी इच्छाके अनुसार ही कार्य्य हुआ। इस अवसरपर इन्हें पता लग गया कि मजूर लोग हड़ताल होनेपर भी इन्हें कितनी श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते थे।

शीघ्र ही पिट्सबर्गके पुस्तकालयके हाथमें कारनेगी कम्पनीके

मज़ूर और उनकी स्त्रियोंकी एक सभा चरित्रनायकका स्वागत करनेके लिये हुई। श्रोकारनेगीने अपने भाषणमें मजूरोंको धन्यवाद देते हुए कहा—"व्यवसायी, मजूर और पूंजीपति, तीनों एक तिपाईके तीनों पायोंकी तरह हैं। व्यवसायके संचालनके लिये तीनोंकी एक समान आवश्यकता है।" मजूरोंने खूब करतलध्वनि की। चरित्रनायकने सबसे हाथ मिलाया। सब प्रकारका मनोमालिन्य दूर हो गया। चरित्रनायकके हृदयसे एक भारी बोझ हटा। इसके बाद भी अनेक अवसरोंपर चरित्रनायकको अपने मजूरोंके साथ विवादमें भाग लेना पड़ा था, पर सभी अवसरोंपर इन्होंने न्यायका पक्ष लिया। निम्नलिखित घटनासे श्रीकारनेगीकी दृढ़ता और न्यायप्रियताका पता चलता है।

एकबार विद्सवर्गके मजूरोंने पहलेकी शर्तके अनुसार समय पूरा होनेके पहले ही मजूरी बढ़ानेके लिये ज़िद की और कम्पनीको नोटिस दे दिया कि यदि आज चार बजेके पहले इसका उत्तर नहीं मिलेगा तो हमलोग काम बन्द कर देंगे। श्रोकारनेगीने सोचा कि यदि मजूर एकबार शर्त तोड़ डालेंगे तो फिर उनके साथ शर्त करनेकी आवश्यकता ही क्या रहेगी ? एकबार सफल होनेसे ही वे बार बार ऐसा करनेके लिये उत्साहित होते रहेंगे। चरित्रनायक मजूरोंसे मिलनेके लिये न्यूयार्कसे पिट्सबर्ग आये। कारखानेके सभी मजूरोंको बुलाया गया। कारखानेके तीन विभागमेंसे केवल एक विभागके मजूरोंने हड़ताल करनेकी

धमकी दी थी। सभी मजूर इकट्ठे हुए। चरित्रनायक सबसे बड़े प्रेमसे मिले। श्रीकारनेगी अपने मजूरोंकी बराबर इज्जत किया करते थे। धनकुबेर होनेपर भी सामान्य मजूरसे हाथ मिलानेमें इन्हें कभी आपत्ति नहीं होती थी। अस्तु। तीनों विभागोंके मजूरोंकी कमिटी अर्द्ध चन्द्राकार रूपमें बैठी। चरित्र नायक बीचमें बैठे। सबके चेहरेपर गंभीरता छा रही थी। पहले चरित्रनायकने उन दो विभागोंके मजूरोंकी कमिटीके सभापतिसे प्रश्न किया, जिन्होंने हड़ताल करनेकी धमकी नहीं दी थी। मि० मैके और मि० जानसन क्रमशः उन कमिटियोंके सभापति थे। चरित्रनायकने मि० मैकेसे प्रश्न किया—

"मि० मैके, आप लोगों और मेरी कम्पनीके बीचमें जो इकरारनामा हुआ था, उसके खतम होनेमें कुछ मास बाकी हैं या नहीं?"

मैके खरा आदमी था। चश्मा उतारकर उसने कहा—"हां श्रीमन्, हम इसे भलीभांति जानते हैं। आप धनकुबेर होनेपर भी हमलोगोंको इकरारनामा तोड़नेके लिये बाध्य नहीं कर सकते।"

श्रीकारनेगीने कहा—"मुझे तुम्हारा गर्व है! सच्चा अमेरिकन मजूर अवश्य ही यही उत्तर देगा।"

मि० जानसनसे भी चरित्रनायकने वही प्रश्न पूछा। जानसनने सोचकर उत्तर दिया—

"जब कोई इकरारनामा हस्ताक्षरके लिये मेरे सामने आता

है तो मैं उसे ध्यानपूर्वक पढ़ लेता हूं। यदि मुझे वह पसन्द नहीं आता तो मैं उसपर हस्ताक्षर ही नहीं करता। पसन्द आने पर मैं हस्ताक्षर करता हूं और हस्ताक्षर करनेपर अवश्य ही उसका पालन करता हूं।"

"एक आत्मसम्मानी अमेरिकन ऐसा ही उत्तर देगा।" श्रीकारनेगीने कहा।

अब हड़तालीदलके नेताको सम्बोधनकर धनिकनायकने यही प्रश्न पूछा। उसका नाम केली था।

केलीने उत्तर दिया—"मैं इसको ठीक ठीक नहीं कह सकता कि क्या इकरारनामा हुआ था। एक कागज हस्ताक्षरके लिये मेरे पास आया था, पर मैंने ध्यानपूर्वक पढ़े बिना ही उसपर हस्ताक्षर कर दिया था। मुझे मालूम नहीं, उसमें क्या लिखा था।"

उसी समय कारनेगी-कम्पनीके सुपरिन्टेन्डेन्ट केप्टन जोन्सने चिल्लाकर कहा—

"मि॰ केली आपको याद होगा कि मैंने आपको दो बार यह इकरारनामा पढ़कर सुनाया था और इसपर आपके साथ घंटों बहस भी हुई थी।"

श्रीकारनेगीने केप्टनको रोकते कहा—"आप चुप रहिये। मि॰केली अपना उत्तर स्वयं देंगे। मैं भी बहुतसे ऐसे कागजोंको बिना पढ़े उनपर हस्ताक्षर कर दिया करता हूं, जो मेरे वकील या साझेदार मेरे पास भेजते हैं। मि॰ केली कहते हैं कि उन्होंने बिना समझे-बूझे ही इकरारनामेपर हस्ताक्षर कर दिया था।

मैं उन्हींकी बातको ठीक मान लेता हूं। अब मि० केली, मेरे विचारसे तो सबसे अच्छा यही है कि आपने जिस इकरारनामे पर हस्ताक्षर कर दिया है, उसकी शर्तोंको कुछ महीनेतक और पालन करावें और फिर जब नये इकरारनामेपर हस्ताक्षर करने का अवसर आवे तब आप उसे खूब समझकर हस्ताक्षर करें।"

केली निरुत्तर था। श्रीकारनेगीने खड़े होकर हड़तालियों को सम्बोधन करते हुए कहा—

"सज्जनो, आप लोगोंने कम्पनीको धमकी दी है कि आप लोगोंकी शर्तें न मानी जानेसे आप लोग आज ४ बजेसे काम छोड़ देंगे। अबतक तीन भी नहीं बजे हैं। आपके लिये मेरा उत्तर तैयार है। आपकी शर्तें ना मंजूर हैं। आप मजेमें काम छोड़ सकते हैं। कारखानेमें घास उग आवे, यह मुझे मंजूर है, पर मैं आपकी धमकियोंसे डर नहीं सकता। जिस दिन मजूर लोग स्वयं अपने इकरारनामेको तोड़कर हड़ताल करेंगे, वह दिन मजूरोंके लिये भयंकर होगा। आपकी धमकीका मेरा यही उत्तर है।" सब चुपचाप बाहर गये। केलीने मजूरोंको काम करनेका आदेश दिया। हड़ताल नहीं होने पायी।

श्रीकारनेगीने इसी प्रकार बुद्धिमत्तापूर्ण आचरणसे अनेक बार हड़तालोंको रोका था और मजूरोंकी गलती दिखाकर उन्हें कार्य करनेके लिये बाध्य किया था। इन्होंने अपने "कार खानेमें जैसा काम वैसा दाम" वाली नीतिका अवलम्बनकर हड़ताल असम्भव कर दी थी। जो मजूर जितना काम करता

था, उसको अपने परिश्रमके अनुरूप ही मजूरी मिलती थी। बिना किसी गुरुतर अपराधके किसी मजूरको कामसे निकाला नहीं जाता था। व्यवसायकी शिथिलताके समय जब उत्पादन कुछ कम कर दिया जाता था, उस समय भी मजूरोंको इतनी मजूरी अवश्य दी जाती थी, जिससे वे अपना आवश्यक खर्च भलीभाँति चला सकें। पूँजीपति यदि चाहें तो मजूरोंके जीवनको अत्यन्त सुखमय बना सकते हैं।

एकबार इन्होंने मजूर-नेताओंसे पूछा—"कहिये, आप लोगोंके लाभके लिये मैं क्या कर सकता हूं?"

मजूरोंके प्रधान नेताने कहा—"मजूरोंको मासके अन्तमें वेतन मिलनेसे बड़ी असुविधा और हानि उठानी पड़ती है। उन्हें सभी चीजें बनियोंसे उधार लेकर काम चलाना पड़ता है। इसमें उन्हें दाम भी अधिक देना पड़ता है और हाथ खाली रहनेके कारण तंग भी रहना पड़ता है। यदि आप प्रति पक्षमें मजूरी दे देनेका प्रबन्ध कर दें तो मजूर लोग सभी चीजें इकट्ठी खरीदकर अपने व्यवहारके लिये रख दे सकते हैं, इस प्रकार वे शत प्रति सैकड़ातक बचा सकेंगे। उन्हें कोयलेके लिये भी बहुत अधिक दाम देना पड़ता है, इसके लिये भी आप कुछ प्रबन्ध कर दें।"

चरित्रनायकने प्रति पक्षमें मजूरी देना शुरू कर दिया। मजूरोंके सुभीतेके लिये अपने कारखानेसे ही लागतके दामपर उनके घरतक कोयला पहुंचा देनेका प्रबन्ध कर दिया। पीछे तो मजूरोंके लाभके लिये एक सहयोग-समिति खोल दी गयी, जहां

उनकी आवश्यकताके अनुकूल सभी चीजें सस्ते भावमें बेचनेका प्रबन्ध था। मजूरोंको इससे बड़ा लाभ पहुंचा। वे अब कुछ कुछ बचाने लगे। अब उस बचतको वे कहां जमा करें। उन दिनों अमेरिकामें 'सेविंगबैंक'का प्रबन्ध नहीं था। चरित्रनायक ने मजूरोंके लिये एक सेविंगबैंक खोल दिया, जिसमें उनको ६ सैकड़े सूद मिलता था। इस प्रकारके प्रबन्धसे मजूर अत्यन्त सन्तुष्ट होकर काम करने लगे। फिर कभी किसी तरहकी हड़ताल वगैरह नहीं हुई।

मजूर और मालिकोंमें जितने झगड़े होते हैं, सब किसी न किसी पक्षकी नासमझी और अदूरदर्शितासे ही उत्पन्न होते हैं। व्यवसायी मजूरोंको कम वेतन देकर अधिक काम लेना चाहते हैं और मजूर अधिकाधिक वेतन लेकर कमसे कम काम करना चाहते हैं। इसीसे हड़तालकी सृष्टि होती है। यदि सभी व्यव सायी श्रीकारनेगीके आदर्शपर मजूरोंको सब प्रकारका आराम पहुंचानेका प्रबन्धकर उनके परिश्रमके अनुरूप ही उन्हें मजूरी देनेकी व्यवस्था कर दें तो फिर हड़तालका नाम भी सुननेके लिये नहीं मिले। मजूर असहाय होते हैं—बिना काम किये उनका काम नहीं चल सकता। व्यवसायी काम बन्दकर कुछ दिन ठहर भी सकता है—अतएव व्यवसायियोंके अत्याचारसे ही अधिकांश हड़तालोंकी सृष्टि होती है। यदि व्यवसायी अपनी भलाई चाहते हों तो उन्हें कारनेगीके आदर्शपर काम करना चाहिये। इसीमें सबका कल्याण है।

सप्तदश परिच्छेद

"परोपकाराय सतां विभूतयः"

सन् १९०० ई० में चरित्रनायकने 'Gospel of wealth' नामक पुस्तक प्रकाशित की। सन् १८८६ ई० से लेकर उस समयतक चरित्रनायकने भिन्न भिन्न मासिक पत्रोंमें धनियोंके कर्त्तव्यके सम्बन्धमें जो विचार प्रकट किये थे, उन्हींका संग्रह इस ग्रन्थमें था। इसको पुस्तकके रूपमें प्रकाशित करनेके बाद धनकुबेर कारनेगीने अपना अक्षयकोष संसारके लाभके लिये दे देनेका निश्चय किया। धन कमाना बन्दकर धन दान करनेका दृढ़ संकल्प इन्होंने किया। उस समय इनकी वार्षिक आय ४ करोड़ डालर की थी। जिस कम्पनीके हाथ इन्होंने अपना कारबार बेच डाला था, उसने तो आगे चलकर वार्षिक ६ करोड़ डालरतकका लाभ उठाया। यदि थोकारनेगी की अध्यक्षतामें कार्य होता तो लाभ और भी अधिक होता, इसमें सन्देह नहीं है।

अब चरित्रनायकने परोपकारके लिये अपनी थैली खोल दी। मिलके मजूरोंकी आकस्मिक विपत्तिके समय, उनको सहायताके लिये ४ लाख डालरका दान किया। १० लाख डालर

मजूरोंके व्यवहारार्थ पुस्तकालय खोलनेके लिये दिये। इसपर मजूरोंने इन्हें निम्नलिखित अभिनन्दनपत्र दिया था—

श्रीमान् एण्ड्र कारनेगीकी सेवामें,

प्रिय महोदय !

"आपने हमारे लाभके लिये जो दान दिया है, उसके लिये हमलोग आन्तरिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं। आप हमारे प्रति जो प्रेमभाव सर्वदा प्रकाशित किया करते हैं, उसे हमलोग कभी नहीं भूल सकते।"

इसके बाद चरित्रनायकने यूरोपकी यात्रा की। इनके हिस्सेदार बड़े प्रेमसे इन्हें जहाजतक पहुंचाने आये। इनके वियोगसे सभी दुःखित थे।

यूरोपकी सैरसे लौटकर श्रीकारनेगीने धन-दान करनेमें मन लगाया। न्यूयार्कमें एक केन्द्रस्थ पुस्तकालय और उसकी ६८ शाखाओंको भिन्न भिन्न महल्लोंमें स्थापित करनेके लिये इन्होंने ६२॥ लाख डालर दिये। ब्रुकलिन नामक नगरमें भी एक केन्द्रस्थ और २० शाखा पुस्तकालय प्रतिष्ठित किये गये। डमफरलिनके पुस्तकालयको स्थापित करनेका उल्लेख पहले ही किया जा चुका है। अमेरिकाके प्रथम निवासस्थान अलगेनी नगरमें भी इन्होंने एक विशाल पुस्तकालय खोल दिया। अमेरिकन प्रजातन्त्रके प्रेसिडेण्ट मि० हैरिसनने इसके उद्घाटनका कार्य सम्पन्न

किया था। शीघ्र ही पिट्सबर्गवालोंने भी एक पुस्तकालयकी मांग पेश की। उनकी भी प्रार्थना स्वीकृत हुई। पिट्सबर्गमें एक अजायबघर, चित्रागार, औद्योगिक विद्यालय और बालिकाओंके लिये 'मारगेरेट मारिसन स्कूल' स्थापित किया गया। पिट्सबर्गमें ही इसके ऊपर लक्ष्मीजी सुप्रसन्न हुई थीं अतएव उन्होंने २ करोड़ ४० लाख डालरका दान देकर अपनी कृतज्ञता प्रकट की।

२८ वीं जनवरी सन् १९०२ ई०में वाशिङ्गटन नगरमें कारनेगीइन्स्टीटयूशन स्थापित किया गया। २ करोड़ ५० लाख डालर इसके लिये दान दिये गये। प्रेसिडेण्ट रूजवेल्ट इस सम्बन्धमें प्रधान सलाहकार और राष्ट्रसचिव जान हे उसके सभापति थे।

२८ वीं अप्रेल सन् १९०४ ई०में प्रेसिडेण्ट रूजवेल्टके विशेष परिश्रमसे यहांकी व्यवस्थापिका सभाने एक कानूनके द्वारा इस संस्थाकी स्थितिको अचल बना दिया। इसके अध्यक्ष अमेरिकाके प्रसिद्ध विद्वान् होते आते हैं। साहित्य, विज्ञान, कला कौशल तथा अन्य विभागोंमें अन्वेषण और आविष्कार की गतिको बढ़ानेके साथ साथ यह संस्था अन्य रूपमें भी संसारकी सेवा कर रही है। 'कारनेगी' नामका एक जहाज इस संस्थाकी ओरसे संसारभरके समुद्रोंमें भ्रमणकर पुराने मान चित्रोंको संशोधित करनेका महत्वपूर्ण कार्य कर रहा है। इसके भगीरथ प्रयत्नसे अनेक भ्रम दूर किये जा सके हैं और

इससे समुद्रमें जहाजोंकी यात्रा बहुत कुछ निरापद हो गयी है। अमेरिकामें यूरोपवासियोंके द्वारा आविष्कृत ज्ञानसे बहुत लाभ उठाया था। कारनेगी इन्स्टीट्यूशन इसके बदलेमें उसे और संसारको लाभ पहुंचा रहा है।

इसी संस्थाकी ओरसे कालिफोर्नियाके विलसन पर्वतपर ऊपर ५८८६ फीटकी ऊंचाईपर एक विशालकाय वेधशाला स्थापित की गयी है। इसके भी अध्यक्ष प्रसिद्ध ज्योतिर्विद्गण होते आये हैं। एकवार इसके वर्तमान अध्यक्ष मि० हेलने रोम नगरमें होनेवाली ज्योतिर्विद्या विशारदोंकी एक सभामें इस वेधशालाकी सहायतासे किये गये अपने आविष्कारोंको प्रकटकर सबको चकित कर दिया था। इस वेधशालाकी सहायतासे बहुसंख्यक ऐसे तारोंका पता लगाया गया है जो सूर्यसे भी २० गुणे बड़े हैं और जिनकी रोशनी पृथ्वीतक आनेमें ८ वर्ष लग जाते हैं। वेधशालाकी ओरसे एक ऐसा यन्त्र बनाया जा रहा है, जिससे चन्द्रमामें रहनेवाले जीव भारी स्पष्ट रूपसे देखे जा सकेंगे। अमेरिकन ज्योतिर्विद्या विशारदोंका तो यही कहना है। इसका फलाफल अभी भविष्यके गर्भमें है। कल्पना असम्भव प्रतीत होती है सही, पर हमारे सामने बहुतसी ऐसी बातें मौजूद हैं, जिन्हें लोग कपासी पुलाव मानते थे।

परिभ्रमणकने 'वीर सहायक कोष' स्थापितकर परमपरो मास्ति आनन्द प्राप्त हुआ था। इसके स्थापनकी कथा अत्यन्त ही

करुणापूर्ण है। पिट्सबर्गकी एक कोयलेकी खानमें कुछ दुर्घटना हो गयी था और पिट्सबर्ग कारखानेके अध्यक्ष मि० टेलर दुर्घटनाका समाचार सुन तत्क्षण ही घटनास्थलपर पहुंचकर पीड़ितोंको सहायता पहुंचानेकी व्यवस्था कर रहे थे। स्वयं सेवकोंके साथ मि० टेलर भी खानके भीतर मजूरोंको सहायता पहुंचाने गये, पर फिर निकल नहीं सके। खान ही उनका भी समाधिस्थल बन गयी। इस संवादको सुनकर श्रीकारनेगीका हृदय करुणासे भर आया। उन्होंने दुर्घटनाके दूसरे ही दिन एक 'वीर सहायक कोप' की प्रतिष्ठा की और उसके खर्चके लिये ५० लाख डालर दिये। इस कोपसे उन वीरोंको पुरस्कार दिया जाता है, जो अपने जीवनको सङ्कटमें डाल विपत्तिमें पड़े हुए लोगोंका उद्धार करते हैं, या किसी दुर्घटनासे आहत व्यक्ति के परिवारको सहायता की जाती है। इसकी शाखायें इङ्गलैंड, फ्रांस, जर्मनी, इटली, बेलजियम, हालैंड, नारवे, स्वीडन, स्विटजरलैंड और डेनमार्कमें खोल दी गयी हैं। जर्मनीके कैसर और इङ्गलैंडके राजा एडवर्डने स्वयं लिखकर श्रीकारनेगीको धन्य वादपत्र भेजे थे। इसकी प्रतिष्ठासे चरित्रनायकने मानव समाजका जैसा उपकार किया है, उसको शब्दोंमें लिखकर प्रकट करना कठिन है। आज सहस्त्रों परिवार इस कोपसे नियमित सहायता पाकर इसके संस्थापकको हृदयसे आशीर्वाद दे रहे हैं। वीरतापूर्ण कार्य करते हुए स्वामी या पुत्रके मारे जानेपर अब अनाथ विधवा या वृद्धा माताको अन्नके लिये भूखों नहीं

मरना पड़ता। श्रीकारनेगी अनाथोंके सहायक और वृद्धोंके पुत्रके रूपमें उनकी सहायताके लिये उपस्थित हैं। धन्य हैं श्रीकारनेगी! धनका सदुपयोग इसीको कहते हैं।

चरित्रनायकने इसके बाद अपने मित्र और 'वीर सहायक कोष' के मध्यस्थ मि० चार्ल्स टेलरके नामसे अमेरिकाके लेहिग विश्वविद्यालयमें एक 'टेलर हाल' बनवा दिया। मि० टेलरने पहले तो बड़ी आपत्ति की, पर जब श्रीकारनेगीने कहा कि यदि आप उस हालके साथ अपने नामका जोड़ाजाना नहीं चाहते तो हम भी विश्वविद्यालयका हाल बनवाना नहीं चाहते। मि० टेलर ही लेहिग विश्वविद्यालयके स्नातक थे। उन्हें बाध्य होकर श्रीकारनेगीकी बात माननी पड़ी।

विश्वविद्यालयके जो अध्यापक आजीवनपर्यन्त पवित्र शिक्षाके कार्यमें लगे रहते हैं, उन्हें प्राय: इतना कम वेतन मिलता है कि उसके लिये कुछ बचाकर रखना कठिन हो जाता है। ऐसी अवस्थामें जब वे वृद्धावस्थामें असमर्थ हो जानेपर शिक्षादानसे अवकाश ग्रहण करते हैं तो उन्हें बड़ी कठिनतासे अपने जीवनके दिन काटने पड़ते हैं। श्रीकारनेगी भला इस दृश्यको चुपचाप कब देख सकते थे। उन्होंने १ करोड़ ५० लाख डालर देकर Carnegee Endowment for the Advancement of Learning नामक एक फण्ड स्थापित किया, जिसका उद्देश्य अवकाश ग्रहण किये हुए वृद्ध अध्यापकोंको पेंशन देना था। अमेरिकाके विश्वविद्यालयोंके प्रसिद्ध प्रसिद्ध विद्वान् इस कोषके

सञ्चालक बनाये गये। इससे शिक्षादानके मार्गकी एक भारी कठिनता दूर हुई। अब विद्वानोंको अपनी वृद्धावस्थाके लिये चिन्ता करनेकी आवश्यकता नहीं रही। भगवन्, क्या भारतवर्षमें भी कोई ऐसा माईका लाल पैदा होगा, जो यहांके शिक्षकोंकी दुर्दशाग्रस्त अवस्थासे द्रवीभूत हो उन्हें किसी प्रकारकी सहायता देनेकी व्यवस्थाकर अपना जीवन सफल करेगा!

स्काटलैंडके दरिद्र विद्यार्थी कालेज और विश्वविद्यालयोंकी फीस न दे सकनेके कारण बहुत कम संख्यामें शिक्षा लाभ किया करते थे। श्रीकारनेगीके एक मित्र लार्ड शावने एक मासिकपत्रमें एक प्रबन्ध लिखकर इस ओर धनिश्रेष्ठका ध्यान आकृष्ट किया। धनिश्रेष्ठने शीघ्र ही १ करोड़ डालर इसके लिये दान करके अपने जन्मस्थानके दरिद्र विद्यार्थियोंकी शिक्षा प्राप्तिका मार्ग सरल कर दिया। बहुसंख्यक विद्यार्थी प्रति वर्ष धनिश्रेष्ठकी कृपालुतासे लाभ उठाकर सरस्वतीके मन्दिरमें प्रवेशकर अपनी सर्वाङ्गीण उन्नति करनेमें समर्थ हो रहे हैं। भारतमें क्या कभी ऐसा दिन देखनेमें आयेगा!

सन् १६०२ ई०में श्रीकारनेगी 'सेंट एण्ड्रूज विश्वविद्यालय'के लार्ड रेक्टर निर्वाचित किये गये। अवश्य ही यह घटना इनके जीवनके लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण थी। जिसने कभी किसी हाईस्कूलतकमें शिक्षा प्राप्त नहीं की थी, वही दरिद्र जुलाहेका लड़का आज अपनी प्रतिभा और अध्यवसायके बलसे एक विश्वविद्यालयका लार्ड रेक्टर बनाया गया। श्रीकारनेगीने

विश्वविद्यालके कार्यक्षेत्रमें प्रवेशकर अपने जीवनको धन्य समझा। इन्होंने अपने कार्यकालमें लार्ड रैक्टरकी हैसियतसे जो भाषण दिये थे, वे अत्यन्त पाण्डित्यपूर्ण थे। सबने इनकी भूरि भूरि प्रशंसा की थी।

एकबार स्काटलैंडमें रहते समय श्रीकारनेगीने स्काचं विश्व विद्यालयके अध्यक्षोंको सस्त्रीक स्किबोभवनमें एक सप्ताह आमोद प्रमोदमें बितानेके लिये आमन्त्रित किया था। बड़े आनन्दसे यह कार्य सम्पन्न हुआ। फिर तो प्रतिवर्ष विद्वानोंका जमघट स्किबोभवनमें होने लगा। यह क्रम श्रीकारनेगीके शेष जीवनमें बराबर जारी रहा। चरित्रनायक विद्वानोंका समुचित आदर किया करते थे और उन्हें सब प्रकारका आराम पहुंचानेमें कुछ उठा नहीं रखते थे। विद्वद्वृन्द भी उदार गृहपतिके सत्कारसे सन्तुष्ट हो अपने अपने घर लौटते थे। विश्व विद्यालयके अध्यक्षोंके परस्पर सम्मिलनसे स्काच शिक्षाकी बहुतसी समस्यायें अनायास ही हल हो जाया करती थीं। यथार्थमें श्रीकारनेगीकी प्रतिभा विलक्षण थी। आमोद प्रमोद, सभी कार्योंमें इनकी व्यवस्थासे कुछ न कुछ स्थायी कार्य अवश्य सम्पादन होता था।

इसके सिवाय श्रीकारनेगीने अमेरिकाके अनेक कालेजोंमें अपने मित्रोंके नामसे भिन्न भिन्न विषयोंके विशेष शिक्षा-दान की व्यवस्था की। इस प्रकार श्रीकारनेगीके साथ साथ उनके मित्र भी अमर हो गये। यथार्थमें सज्जनोंको संगतिसे सामान्य पुरुष भी श्रेष्ठगतिको प्राप्त होता है।

अमेरिकाके नीग्रो लोगोंके उद्धारक बुकर० टी० वाशिङ्गटनको भी श्रीकारनेगी नहीं भूले। वे 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के सिद्धान्तके अनुयायी थे। उनके लिये काले और गोरे सभी एक समान थे। वे योग्यताकी कद्र करते थे, गोरे चमड़ेकी नहीं। चरित्रनायकने श्रीबुकर० टी० वाशिङ्गटनके टस्कजी विद्यालयको ६० लाख डालर प्रदानकर उसकी स्थितिको सबल कर दिया। श्रीकारनेगी वाशिङ्गटनको बड़ी श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते थे।

श्रीकारनेगीके संगीत प्रेमका उल्लेख पूर्वके परिच्छेदमें किया जा चुका है। इन्होंने अमेरिकाके गिरजाघरोंको ७६८९ वाद्ययन्त्र प्रदान किये, जिनका दाम ६० लाख डालर है। इनका विश्वास था कि संगीतसे लोगोंका मन शान्त और प्रसन्न होता है और ईश्वरकी ओर उनका ध्यान स्थिर होता है। हमारे यहां भी सामवेद अमोलक गाया जाता है। अमेरिकन लोगोंने पहले तो इसका बड़ा विरोध किया और 'बाइबिल' से वाक्य उद्धृतकर इनको दूषणीय ठहराया। उनके बादसे श्रीकारनेगी केवल उन्हीं गिरजोंको वाद्ययन्त्र भेंट करते थे जो आधा दाम स्वयं देते थे और आधेके लिये चरित्र नायककी सहायता चाहते थे। यदि गिरजोंको वाद्ययन्त्र भेंट करना पाप है तो श्रीकारनेगीने गिरजोंको भी इस पापका भागी बनाना चाहा!

संसारमें बहुतसे ऐसे मनुष्य हैं जो सच्चरित्रतापूर्वक अपना

जीवन व्यतीत करते हुए भी पर्याप्त द्रव्य उपार्जन नहीं कर सकते या अन्य किसी कारणसे उनकी आर्थिक अवस्था हीन हो जानेके कारण वृद्धावस्थामें उन्हें अर्थाभावके कारण कष्ट पूर्ण जीवन व्यतीत करना पड़ता है। ऐसे लोगोंको सहायताके भला श्रीकारनेगी कब याद आ सकते थे। इन्होंने एक कोष प्रतिष्ठित किया, जिससे ऐसे सज्जनोंको चुपचाप सहायता दी जाती है। सम्प्रति इस कोषका वार्षिक व्यय ७॥ लाख डालर है। अनेक लोगोंने हृदय विदारक और मर्मस्पर्शी पत्र लिखकर श्रीकारनेगीको हृदयसे धन्यवाद दिया था। इन पत्रोंको श्रीकारनेगी बड़ी श्रद्धा और प्रेमकी दृष्टिसे देखा करते थे और जब कभी उनका मन उदास होता था, तब वे उन्हें पढ़कर मनको आश्वस्त करते थे।

जिस रेलवे विभागमें श्रीकारनेगीने पहलेपहल नौकरी-कर अपनी उन्नतिका पथ प्रशस्त किया था, उसके कर्मचारियों को भी आप नहीं भूल सके। पिट्सबर्ग डिविजनके कर्मचारियोंकी विपदमें सहायता देनेके लिये चरित्रनायकने 'Rail road Pension Fund' कायम किया। अब तो यह फण्ड पेन्सिलवेनिया रेलवे कम्पनीके कर्मचारियोंको भी सहायता दिया करता है।

श्रीकारनेगी शान्तिप्रेमी थे। इनके जीवनके परिचयसे ही पाठकोंको पता लग गया होगा कि वे लड़ाई-झगड़ेसे कितने दूर रहते थे। व्यवसायसे अवसर ग्रहण करनेपर चरित्रनायकका

ध्यान विश्वशान्तिकी ओर आकृष्ट हुआ। इनका विचार था कि कमसे कम अङ्गरेजी बोलनेवाले देशोंमें परस्पर कभी युद्ध न हो। श्रीकारनेगी इङ्गलैण्ड और अमेरिकाको मिलाकर एक Re-united states या British American union स्थापित करनेके पक्षमें थे। इङ्गलैण्डमें घूमते समय चरित्रनायक इङ्गलैण्डकी शान्तिसभा (The Peace society of Great Britain) के अधिवेशनोंमें बराबर भाग लिया करते थे। मजूर मेम्बरोंके तत्कालीन नेता और 'नोबल पुरस्कार' के पानेवाले मि० क्रेमरने विश्वशान्तिकी चेष्टा करनेके लिये एक पार्लमेंटरी संघ स्थापित किया था। चरित्रनायक उसमें भी भाग लेते थे। मि० क्रेमर भी एक अद्भुत स्वार्थत्यागी पुरुष थे। १ लाख २० हजार रुपयेका 'नोबल पुरस्कार' पाकर उन्होंने अपने खर्चके लिये केवल १५ हजार रुपया रखा और बाकी रुपया 'शान्ति संस्थापक समिति' को दान कर दिया। ऐसे स्वार्थत्यागी पुत्रोंको पाकर माता वसुन्धरा अपनेको अवश्य ही धन्य समझती होगी, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

उसी समय हेगमें संसारभरके मुख्य मुख्य राष्ट्रोंके प्रतिनिधियोंकी एक कान्फरेन्स फौजी खर्च घटानेके प्रश्नपर विचार करनेके लिये हुई थी। उस कान्फरेन्सने अन्तराष्ट्रीय झगड़ोंका निपटारा करनेके लिये एक पञ्चायतको स्थापित किया। इस सफलतासे प्रसन्न होकर चरित्रनायकने हेगमें एक 'शान्ति मन्दिर' स्थापित करनेका विचार प्रकट किया। उस सरकारने

भी श्रीकारनेगीसे इस सम्बन्धमें लिखा-पढ़ी की और अन्तमें चरित्रनायक ने १५ लाख डालर उपरोक्त मन्दिरकी प्रतिष्ठाके लिये दिये। श्रीकारनेगीके हृदयमें इस 'शान्ति मन्दिर' का महत्व गिरजाघरोंसे कहीं अधिक था।

श्रीकारनेगीने सन् १६०८ ई० में न्यूयार्ककी शान्ति सभाके अध्यक्षका पद अलंकृत किया था। सन् १६१० ई० में चरित्र नायकने अन्तर्राष्ट्रीय शान्तिका उद्योग करनेके लिये १०००००० डालरका दानकर Carnegee Endowment for International Peace की प्रतिष्ठा की।

अब तो श्रीकारनेगीपर संसारके सभी प्रसिद्ध राष्ट्रोंने अपनी सम्मानसूचक उपाधियोंकी वर्षाकर उनको सम्मानित किया। फ्रेंच सरकारने इन्हें Knight commander of the Legion of Honor की उपाधि दी। इङ्गलैण्ड और डेनमार्कने भी अपने राष्ट्रकी सर्वश्रेष्ठ उपाधियोंसे इन्हें सम्मानितकर स्वयं अपनी सम्मान-रक्षा की। २१ अमेरिकन राष्ट्रोंने श्रीकारनेगीको स्वर्णपदक प्रदान किये। असंख्य यूनिवर्सिटियों और कालेजोंने इन्हें डाक्टरकी डिग्री देकर अपनेको कृतार्थ समझा। श्रीकारनेगी १६० सभा समितियोंके मान्य सदस्य थे।

सबसे पवित्र दान—जिसने इन्हें स्वर्गोपम सुख प्रदान किया था—डनफर्मलिन नगरको 'पिटेनक्रिफ ग्लेन' नामक उपत्यकामें रम्य उद्यान बनवा देना था। इसकी कथा अत्यन्त मर्मस्पर्शी है। डनफर्मलिन नगर अनेक दिनोंसे यहांके प्रसिद्ध गिरजा और

राज्यप्रासादको अपने अधिकारमें लानेकी चेष्टा करता था, पर उस स्थानका जमींदार इस कार्यमें बाधक था। चरित्रनायक के मामा मारिसमने इसके लिये गोरोंका आन्दोलन शुरू किया था। इनके चचा ओवर और मामा मारिसन भी इस आन्दोलनको बढ़ाते गये। जमींदारने इनके मामाके ऊपर विद्रोह फैलानेकी नालिश ठोंक दी। मुकद्दमा बहुत दिनोंतक चला, अन्तमें हाईकोर्टसे मारिसनकी ही जीत हुई। अन्तमें चिढ़कर जमींदारने आज्ञा दे दी कि मारिसन खानदानका कोई भी व्यक्ति इसके भीतर घुसने न पावे। उपत्यकाकी प्राकृतिक शोभा परम रमणीय थी। डनफरलिन निवासी उसमें प्रायः सैर करने आया करते थे। अपने मामा और मारिसन-वंशके सभी लोगोंके इस प्रकार प्रकृतिकी गोदमें विहार करनेके सुखसे वंचित कर दिये जानेका चरित्रनायकको बड़ा दुःख हुआ। इन्होंने उस उपत्यकाको ही किसी प्रकार खरीद लेनेका दृढ़ संकल्प किया और अन्तमें अवसर आ ही गया। जमींदार ऋण ग्रस्त हो रहा था। बिना अपनी जमींदारीको बेचे ऋण भारसे मुक्त होना उसके लिये असम्भव था। श्रीकारनेगीने उसे पूरा दाम देकर उस उपत्यकाको खरीद लिया और उसमें अत्यन्त रमणीक उद्यान बनवाकर उसे डनफरलिन नगर निवासियोंको भेंट कर दिया। जिस मारिसनके वंशजके लिये उस उपत्यका में प्रवेश करनेकी भी मनाही थी, उसीके वंशमें उत्पन्न चरित्र-नायकने उसको खरीदकर अपनी जन्मभूमिके लोगोंके सैर करने

और दिल बहलावके लिये उसे दान कर दिया। श्रीकारनेगीको इस दानसे जितना संतोष मिला, उतना किसी कार्यसे नहीं मिला था। इसके काममें स्वर्गदूत यह कहता हुआ मालूम हुआ कि "कारनेगी! तुम्हारा जीवन व्यर्थ नहीं गया है।" श्रीकारनेगी इस घटनाको अपने जीवनमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण समझते थे।

श्रीकारनेगीके मित्रों और प्रशंसकोंने बहुसंख्यक मूर्तियों को प्रतिष्ठाकर इनके जीवनको अमर कर दिया है। श्रीकारनेगीको कोई पुत्र नहीं हुआ—केवल एक कन्या हुई—पर जब तक सूर्य्य चन्द्र प्रतिष्ठित रहेंगे, तबतक इनकी कीर्ति इस वसुन्धरापर विराजमान रहेगी।

श्रीकारनेगीने अपने अन्तिम जीवनमें संसारके नामी प्रसिद्ध पुरुषोंके सत्संगसे लाभ उठाया। प्रसिद्ध कवि और लेखक माथ्यू आर्नेल्डपर श्रीकारनेगीकी बड़ी श्रद्धा थी। आर्नेल्ड भी विलक्षण पुरुष थे। धर्मके सम्बन्धमें अपने स्वतन्त्र विचार के कारण वे आक्सफोर्ड विश्वविद्यालयके सर्वोच्च पदपर प्रतिष्ठित नहीं हो सके, पर विचार-स्वातन्त्र्यके लिये अपने सर्वस्वकी आहुति करना ही उनकी विशेषता थी। इस कारण उनके धर्म पिता बिशप केबल और मि० ग्लाडस्टन भी सर्वदा अप्रसन्न रहा करते थे, पर इन्होंने अपनी दृढ़ताको कभी नहीं छोड़ा।

मि० ग्लाडस्टनसे भी चरित्रनायककी बड़ी घनिष्ठता थी।

पूर्वपरिच्छेदके पाठसे पाठकोंको पता लगा होगा कि मि० ग्लाड स्टन इनको किस दृष्टिसे देखते थे। लार्ड रोज़बरी भी इनके विश्वस्त मित्रोंमेंसे थे। लार्ड एलगिनसे भी इनकी मैत्री थी। वे ब्रूसके वंशमें उत्पन्न हुए थे, उनकी नसोंमें स्काच-रक्त प्रवाहित होता था—अतएव श्रीकारनेगीके साथ उनकी प्रगाढ़ मैत्रीका होना स्वाभाविक था। एलगिन चरित्रवान और कर्मठ पुरुष थे। भूतपूर्व भारतसचिव स्वर्गीय मि० मार्ले भी चरित्रनायकके अन्य तम मित्रोंमेंसे थे। उनके सत्संगमें चरित्रनायकका बहुत समय व्यतीत हुआ करता था। प्रसिद्ध दार्शनिक हर्बर्टस्पेन्सरको चरित्रनायक अत्यन्त श्रद्धा और आदरके भावसे देखा करते थे। श्रीकारनेगी उन्हें अपना दार्शनिक गुरु समझते थे। सन् १८८२ ई०में मि०स्पेन्सरके साथ इन्होंने लिवरपूलसे न्यूयार्कतक की यात्रा की थी। लार्ड मार्लेने चरित्रनायकका परिचय मि० स्पेन्सरसे करा दिया था। फिर तो चरित्रनायकने अपनी सज्जता और बुद्धिमत्तासे दार्शनिक स्पेन्सरको अपना चिरमित्र बना लिया।

अमेरिकाके जितने अध्यक्ष श्रीकारनेगीके ऐश्वर्य्यमय दिनोंमें हुए थे, सबके साथ इनकी घनिष्टता थी। प्रेसिडेन्ट हेरिसन, प्रसिद्ध राष्ट्रसचिव ब्लान हे, प्रेसिडेन्ट लिङ्कन, सभी कारनेगीको सम्मानकी दृष्टिसे देखा करते थे।

यूरोपके भिन्न भिन्न राष्ट्रोंके सम्राटोंसे भी चरित्रनायककी घनिष्टता थी। सम्राट एडवर्ड और जर्मन सम्राट कैसर इनसे

करनेके लिये बाध्य होना पड़ा। महायुद्धकी खबर पाकर भी कारनेगी अत्यन्त दुःखित हुए थे। उन्होंने अपने आत्मचरितके अन्तिम पृष्ठपर लिखा है—

"आज मैं यह नया परिवर्तन देख रहा हूं। संसार युद्धके नशेसे उथल पुथल हो रहा है। मनुष्य जानवरोंकी तरह एक दूसरेका वध कर रहे हैं, पर मैं निराश नहीं हो सकता। मुझे दिखायी देता है कि कोई एक ऐसा शासक संसारके रंगमंचपर अवतीर्ण होगा, जो संसारमें शांति स्थापितकर अपना नाम अमर कर जायगा। जिस महापुरुषने पनामा कैनेलके झगड़ेमें अपने राष्ट्रका मुख उज्ज्वल किया था, वही विलसन आज अमेरिकाके राष्ट्रपतिका स्थान सुशोभित कर रहा है। प्रतिभाशालियोंके लिये कुछ भी असम्भव नहीं है। प्रेसिडन्ट विलसनके कार्योंको ध्यानसे देखते रहिये। उनकी नसोंमें भी स्काच रक्त प्रवाहित हो रहा है।"

श्रीकारनेगीके अन्तिम उद्गार यही थे। राष्ट्रपति विलसनके सम्बन्धमें उन्होंने जो आशा की थी वह पूरी नहीं हुई। विलसनने तो अपने जानते कुछ उठा नहीं रखा, पर इंगलैण्ड, फ्रान्स और इटलीके फन्देमें फंस जानेके कारण वे भी कुछ नहीं कर सके। उनके १४ सिद्धान्त केवल कागजपर ही लिखे रह गये। कुछ दिनोंके लिये संसारके छोटे छोटे राष्ट्रोंमें कुछ हलचल इससे अवश्य मची, पर फिर यह मामला ठंढा पड़ गया। भारतवर्ष भी विलसनके सिद्धान्तोंको बड़ी उत्सुकतासे देखता था, पर

शायद मार्लेकी शैतानी चालने सब गुड़ गोबर कर दिया। भारतको 'रिफार्म' के लड्डू मिले हैं—जिनके खानेवाले और न खानेवाले दोनों पछता रहे हैं।

श्रीकारनेगीने सन् १९१९ ई० में परमधामकी यात्रा की। आज श्रीकारनेगी जीवित नहीं हैं, पर उनका नाम विश्वविख्यात हो रहा है। सत्य है—कीर्तिर्यस्य सजीवति।

अष्टादश परिच्छेद

चरित्र-समीक्षा

Lives of great men all remind us,
We can make our lives sublime

'महाजनो येन गत सपन्था

समाज और शासन-व्यवस्थाके अन्यायपूर्ण विधानके कारण आज संसारमें मनुष्योंकी स्थितिमें विकराळ विभिन्नता दिखायी पड़ती है। कोई तो पैदा होते ही सोनेके झूलोंमें झूलता है और किसीको भूमिष्ट होनेके बाद प्रथम ढकनेके लिय एक चिथड़ा भी नसीब नहीं होता। उपयुक्त पुष्टिकर खाद्य और स्वास्थ्यकर रहन सहनके अभावसे आज संसारके भिन्न भिन्न देशोंमें विशेषकर भारतवर्षमें जो दरिद्र नारायणके विलखते लाखोंको रोते कलपते अकाल हीमें कालके विकराल गालमें जाना पड़ता है। इसको देखकर किस सहृदयका हृदय विदीर्ण नहीं हो जाता। निर्धन मनुष्योंके बालकोंको इस प्रतिद्वन्द्वितापूर्ण संसारमें विजय प्राप्त करनेके लिये योग्य-बननेके मार्गमें कितनी कठिनाइयोंको झेलना पड़ता है। इसका ज्वलन्त उदाहरण हमारे चरित्रनायकका ही अनुकरणीय चरित्र है। पर एक बात विचित्र अवश्य है। "ईश्वरकी कृपासे

अथवा समाजकी वर्त्तमान अवस्थाके कारण जो लोग सब प्रकारके सुख साधनोंसे घिरे रहते हैं—शारीरिक मानसिक और आर्थिक उन्नति करनेके लिये जिनके मार्गमें किसी तरहका रोड़ा नहीं रहता ऐसे भाग्यवान लोगोंको भी दरिद्र कुलोत्पन्न नरवीर जीवन-युद्धमें नीचा दिखा देते हैं। संसारमें प्रायः जितने महापुरुष हुए हैं, उनमें अधिकांशने अपने जन्मसे झोपड़ोंको ही पवित्र किया था। लक्ष्मीपात्र श्रीमानोंने भी संसारके रङ्गमञ्चपर अपनी श्रेष्ठता प्रतिपादित की है। हमारे प्रताप और बुद्धदेव राज वंशमें ही उत्पन्न हुए थे, पर शायद वे भगवान कृष्णके शब्दोंमें पूर्वजन्ममें योगभ्रष्ट होनेके कारण ही धनियोंके घरमें उत्पन्न हुए थे। *अतएव पूर्व संस्कारकी प्रबलताके कारण ऐश्वर्य्यने उनके जीवनकी सफलताके मार्गमें बाधा न पहुंचाकर सहायता ही पहुंचायी। अस्तु।*

श्रीकारनेगीके चरित्रकी विशेषता उनके दरिद्र, पर धार्मिक माता पिताके घरमें उत्पन्न होनेमें है। एक दरिद्र जुलाहेके लड़के होकर और किसी प्रकारकी स्कूली शिक्षा नहीं पाकर भी उन्होंने केवल दृढ़ अध्यवसाय और चरित्र बलके कारण जैसी सफलता प्राप्त की, उसको जानकर किस चरित्रवान और उद्योगी बालकका हृदय आनन्द और उत्साहसे पूर्ण नहीं हो जायगा? चरितनायकका जीवन अध्यवसायी और परिश्रमशील नवयुवकोंको पुकार पुकारकर कह रहा है—"नवयुवको! इस जीवन युद्धमें तुम आकस्मिक आपदाओं और कठिनाइयोंसे मत घब

जाओ। ईश्वर और आत्मामें पूर्ण विश्वास रखकर सब प्रकारकी विपत्तियोंको उपेक्षाकी दृष्टिसे देखते हुए पूर्ण उत्साहके साथ अपने कर्तव्य पालनमें लग जाओ। परिश्रमसे मत डरो। किसी भी परिश्रमके कामको नीच दृष्टिसे मत देखो। जो लोग ईमानदारीके साथ अपना उदर पोषण करते हैं, वे उन अभागोंसे सब प्रकार श्रेष्ठ हैं, जिनको अपने पापी पेटकी क्षुधा ज्वाला शान्त करनेके लिये और अपनी विषयवासनाओंकी तृप्तिके लिये निरोह प्राणियोंको सताना पड़ता है—दूसरोंको धोखा देना और ठगना पड़ता है। अपना आदर्श उच्चसे उच्च रखो और दिनरात उसीके साधनमें लग जाओ। संसारमें कोई भी कार्य असंभव नहीं है। जो काम औरोंने कर दिखाया है, वह तुम भी कर सकते हो। तुममें उसी परमपिताके तेजका निवास है, जिसके अपूर्व सृष्टि कौशलसे संसारके सभी कार्य्य सुचारु रूपसे सम्पन्न हो रहे हैं। तुम अपनेको नीच समझकर हताश मत हो जाओ। दृढ़ अध्यवसायपूर्वक अपने कर्त्तव्य-पालनमें लग जाओ। कुछ परवाह नहीं, यदि तुम इस समय अवनतिके गहरे गन्दकमें पड़े हो। कमर कस लो और एक छलांग मारकर ऊपर उठ जाओ। फिर तो तुम्हारे लिये रास्ता साफ है।"

गुलामीकी कालिमापूर्ण टीकासे कलंकित भारतवासियोंके लिये श्रीवाशिंगटनका चरित्र सभी दृष्टियोंसे अध्ययन करने योग्य है। अङ्गरेजी शिक्षाके पीछे अपना स्वास्थ्य और धन स्वाहा करनेवाले नवयुवक मध्य श्रेणीके निराशापूर्ण गृहस्थ,

असफल व्यवसायी, गुरुपनका अभिमान करनेवाले धर्मध्वजी साधु और पुजारी, प्लाटफार्मपर चिल्लानेवाले राजनीतिक नेता और धनमदसे मतवाले बड़ी बड़ी तोंदोंवाले भारतीय धनी, सभी कारनेगीके जीवनसे यथेष्ठ शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। कारनेगीने अपना जीवन एक जुलाहेके कारखानेमें नली भरनेके कार्य्यसे आरम्भ किया था। भारतमें लाखों जुलाहेके बच्चे कारनेगीके समान कच्ची उमरमें ही अपने पेटके लिये कमाने लग जाते हैं, पर उनमेंसे कितने कारनेगी बन सके हैं? भारतके तारघरोंमें लाखों नवयुवक दिनरात बाइसिकलपर चक्कर लगाया करते हैं, पर कितनोंने कारनेगीके समान उन्नतिके अवसरको अपनाया है। आज कितने तारबाबू क्रमशः उन्नति करते करते लखपती भी बन सके हैं? यह अवश्य है कि राजनैतिक पराधीनताके कारण भारतवासियोंकी दृष्टि उतनी ऊपर नहीं उठती, जितनी स्वाधीन देशोंके निवासियोंकी होती है। यहांके नवयुवक पढ़ लिखकर यातो डिप्टीगिरीके लिये लालायित रहते हैं या वकील बनकर अपने भाइयोंसे रुपये ऐंठनेमें ही अपनी उन्नति की पराकाष्ठा समझते हैं। यहांके व्यवसायी विदेशी वस्तुओं को अपने देश-भाइयोंके घर घर पहुंचा केवल दलालीका जूठन चाटनेमें अपने उद्योगकी इतिश्री समझते हैं अथवा जिनको भगवानने भी दो पैसा दिया है, वे शेयरमारकेटमें फाटके पाजीकर दिनरात लखपती बननेका स्वप्न देखा करते हैं। यहांके अधिकांश धनी तो बस कुबेरके भण्डारीमात्र हैं। उनका धन

अपने देशवासियोंके कामके लिये नहीं है—वह केवल गौरांग महा प्रभुओंकी पूजा अर्चनाके लिये, 'रायबहादुर' और 'सर' बननेके हेतु खर्च करनेके लिये तथा आत्म-नाशक द्रव्योंका क्रय करनेके लिये है। भारतमें धनिकोंकी कमी नहीं है—बहुतसे करोड़पति जैसे खाली हाथ आये थे, वैसे ही खाली हाथ लौट जाते हैं, पर अपने दरिद्र और असहाय भारतवासियोंके नामपर उनसे एक पैसा भी कम नहीं किया जाता। आज यदि भारतके कुभार रुपयेवाले गरीबोंपर अत्याचार करनेके बदले अपनी थैली उनके कष्ट और अभावको दूर करनेमें लगाते तो रोना किस बातका था? आज यदि लक्ष्मीपुत्र अपने खजानों को मुक्तहस्तसे भारतीय राष्ट्रके लाभके लिये समर्पित कर दें तो राष्ट्रीय सम्पत्तिका प्रश्न अविलम्ब हल हो सकता है। श्रीकार-नेगीने अपने जीवनमें प्रत्यक्ष दिखला दिया है कि मनुष्य अपने परिश्रमद्वारा हीनावस्थासे किस प्रकार उन्नतिके शिखरपर आरूढ़ हो सकता है, किस प्रकार वह देश और संसारके उपयोगी व्यापारोंके द्वारा धनोपार्जन करता हुआ अरबपति बन सकता है और फिर किस प्रकार अपने संचित धनको स्वदेश, स्वधर्म और संसारके उपकारके लिये मुक्तहस्त हो दान दे सकता है।

केवल धन कमाना ही मनुष्य जीवनका लक्ष्य नहीं है। धनोपार्जन अवश्य करना चाहिये, पर इसके लिये अपनी आत्माका बलिदान करनेकी आवश्यकता नहीं है। धन तो जीवन-यात्रा सुखमय बनानेका एक उपयोगी साधनमात्र

है। श्रीकारनेगीने इस लक्ष्यको सर्वदा ध्यानमें रखा था। पर दरिद्र परिवारमें जन्म ग्रहण करनेके कारण श्रीकारनेगीके लिये द्रव्योपार्जन करना अत्यन्त आवश्यक कर्त्तव्य हो गया था, पर वे उतना ही उपार्जन करना अपना कर्त्तव्य समझते थे, जितनेसे उनकी जीवन-यात्रा भलीभाँति संपादित हो सके। किसी समय मासिक २५ डालर उपार्जन करना ही वे अपने परिवारके व्यय निर्वाहके लिये यथेष्ट समझते थे। इसके बाद भाग्य लक्ष्मीके सुप्रसन्न होनेपर जब वाणिज्यव्यवसायमें करोड़ोंकी सम्पत्ति लाभ कर ली थी और उनकी वार्षिक आय १० लाख रुपयसे ऊपर हो चुकी थी, उस समय उन्होंने जो स्मरणीय विचार लिख छोड़े थे, वे प्रत्येक आत्मोन्नतिके अभिलाषी मनुष्यके अध्ययनके योग्य हैं।

श्रीकारनेगीने लिखा था—"*अभी मैं तैंतीस ही वर्षका हूं*, पर मेरी आय ५० हजार डालर वार्षिककी हो गयी है। अब मैं दो वर्षतक केवल वही कार्य्य करूंगा, जिससे मेरी इतनी आय निश्चित हो जाय। इसके बाद मैं अधिक धन कमानेका नाम भी नहीं लूंगा। अपने खर्चके बाद मैं शेष आय अच्छे कार्योंमें व्यय किया करूंगा। दूसरोंको *व्यवसायक्षेत्रमें सफलता प्रदान* किया करूंगा। आक्सफोर्डमें आकर पूर्ण शिक्षा प्राप्त करूंगा।

शिक्षाकी उन्नति और दरिद्रोंकी अवस्था सुधारनेकी ओर मेरा विशेष ध्यान रहेगा। केवल धनोपार्जन करना मनुष्य जीवनका सबसे निकृष्ट आदर्श है। इसमें मनुष्य जीवनकी

शक्तियोंका जैसा अपव्यय होता है, वैसा किसीमें नहीं होता। मुझे ऐसे आदर्शोंको ध्यानमें रखना होगा, जिससे मेरा चरित्र उन्नत हो। यदि मैं बहुत अधिक दिनोंतक धनोपार्जनके लिये चिन्तित बना रहूंगा तो मेरा सुधार असम्भव हो जायगा।"

कैसे दिव्य विचार हैं। एक महान् आत्माके हृदयके सच्चे उद्गार हैं। इन वाक्योंको चरित्रनायकने केवल अपने मार्ग प्रदर्शनके लिये लिख छोड़ा था—लोगोंकी वाहवाही लूटनेके लिये नहीं। इसीसे श्रीकारनेगीके हृदयकी महानताका परिचय प्राप्त होता है। यद्यपि ३५ वर्षकी अवस्थामें चरित्रनायकने धनोपार्जन से हाथ नहीं खींच लिया और यदि उन्होंने ३२ वर्षतक अपनी पूरी शक्ति धन सञ्चय करनेकी ओर ही लगायी, पर उनके दानोंकी विस्तृत तालिका देखनेसे किसी सहृदयको पता लग सकता है कि उन्होंने जो कुछ किया मानव जगतके लाभके लिये ही किया। १ लाखकी वार्षिक आयवाले श्रीकारनेगी अपने धन-दानसे जनताका उतना हितसाधन नहीं कर सकते, जितना अरबपति कारनेगीने कर दिखाया। पर इतना तो अवश्य कहा जायगा कि अपने आवश्यक खर्चोंके बाद जो कुछ भी सम्पत्ति इन्होंने अपने अध्यवसायके कारण उपार्जित की, सब संसारके हितके लिये अर्पित कर दी। मन, वचन और कर्मकी एकता इसीको कहते हैं। यदि "मनस्यकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम्' सच्चे महात्माओंका लक्षण है तो श्रीकारनेगी, यथार्थमें महात्मा थे।

शिक्षाकी उन्नति और वृद्धि तथा असहायोंकी सहायताके लिये श्रीकारनेगीने जो कुछ किया, उसका पूर्ण उल्लेख गत परिच्छेदमें विस्तारपूर्वक किया जा चुका है। भारतके श्रीमानों को चरितनायकसे यह शिक्षा अवश्य ग्रहण करनी चाहिये। पूर्व जन्मके सुकर्मोंसे हो अथवा समाज और राष्ट्रके अन्यायपूर्ण विधानोंके कारण हो या अपने परिश्रमके कारण हो—जो लक्ष्मीके पात्र हैं—जिनपर चञ्चला रमाने अपनी कृपा-दृष्टि फेर रखी है, उन्हें अब आंखें खोलकर अपने अभागे भाइयोंके लिये भी कुछ कर जाना चाहिये। आज भारतवर्षमें धनके अभावसे सैकड़ों लोक हितकर कार्य रुके पड़े हैं। क्या अनाथ स्त्रियों और बच्चोंकी खबर लेनेवाला यहां कोई है? कलकत्तेकी सड़कोंपर घूमते हुए सैकड़ों अनाथ बालकोंकी दुर्दशाग्रस्त अवस्थाका हृदयद्रावक दृश्य देखकर किसका कलेजा मुंहमें नहीं आ जाता! अपने दुधमुंहे बच्चोंको गोदमें लेकर अभागिनी माताओंका बिलख बिलखकर "कोई एक रोटी दे दे बाबा"की आवाज सुनकर किसका पत्थरका कलेजा नहीं पसीज उठता—पर यहां किसने लखपतियोंने अपनी थैली इन अनाथों की रक्षाके लिये खोल दी है। यह अवश्य है कि ये अनाथ बिलकुल भूखे नहीं रह जाते, पर ईश्वरीय सृष्टिके निवासी इन अभागे जीवोंका केवल पेटकी ज्वाला शान्त करनेके लिये दिनभर बिलखते रहना कैसा भयङ्कर दृश्य है? क्या किसी भारतीय धनकुबेरके कानोंतक हमारी यह आवाज पहुंच सकेगी?

और भी अनेक लोकहितकर कार्योंकी ओर लक्ष्मीपात्रोंका ध्यान आकृष्ट किया जा सकता है। भारतके प्राय: सभी बड़े बड़े नगरोंमें विशेषकर कलकत्तेकी सड़कोंपर सर्वत्र गलित कुष्ठसे पीड़ित असहाय आबाल-वृद्ध-वनिताको देखकर लोग नाक भौं सिकोड़ते हैं। कोई कोई सहृदय उनकी दुर्दशापर दयार्द्रचित हो उन्हें अधेला पैसा दे भी दिया करते हैं, पर क्या इसीसे उन अभागे जीवोंका जीवन सुखमय हो जाता है ? अपने पूर्वजन्मके दोषसे अथवा कुष्ठपीड़ित माता पिताके अनाचारसे ईश्वरीय सृष्टिके इन असहाय जीवोंको जो भयङ्कर यातना झेलनी पड़ती है—क्या इससे उनका उद्धार करनेका कोई उपाय नहीं है ? आज ही एक भारतव्यापी सङ्घटन कुष्ठपीड़ितोंकी चिकित्सा तथा उनके भरण-पोषणकी यथेष्ट व्यवस्थाके लिये हो सकता है, पर इसके लिये पर्याप्त धन चाहिये। क्या भारत का कोई कारनेगी इस महान् पुण्यकार्यके लिये अपनी थैली खोलनेके लिये तैयार है ? ऐसे कार्यके करनेसे बढ़कर धनका सदुपयोग दूसरा नहीं हो सकता है। इससे उन अभागे जीवोंका भी कल्याण होगा और उनकी छूतसे दूसरे मनुष्योंकी भी रक्षा हो सकेगी। समाजमें गलित कुष्ठके प्रचारको रोकनेका भी यही एक साधन है। हमें पूर्ण आशा है कि लोग इसपर ध्यान देंगे।

श्रीकारनेगीके आदर्शपर भारतमें भी 'वीर-सहायक कोष' 'शिक्षक-सहायक कोष' 'दरिद्र विद्यार्थी-कोष' 'अनाथ विधवा सहायक कोष' आदिकी प्रतिष्ठा की जा सकती है। इससे

शिक्षाकी उन्नति और दरिद्र तथा असहायोंकी सहायताके लिये श्रीकारनेगीने जो कुछ किया, उसका पूर्ण उल्लेख गत परिच्छेदमें विस्तारपूर्वक किया जा चुका है। भारतके श्रीमानों को धनिकनायकसे यह शिक्षा अवश्य ग्रहण करनी चाहिये। पूर्व जन्मके सुकर्मसे हो अथवा समाज और राष्ट्रके अन्यायपूर्ण विधानोंके कारण हो या अपने परिश्रमके कारण हो—जो लक्ष्मीके पात्र हैं—जिनपर चञ्चला रमाने अपनी कृपा-दृष्टि फेर रखी है, उन्हें अब आँखें खोलकर अपने अभागे भाइयोंके लिये भी कुछ कर जाना चाहिये। आज भारतवर्षमें धनके अभावसे सैकड़ों लोक हितकर कार्य रुके पड़े हैं। क्या अनाथ स्त्रियों और बच्चोंकी खबर लेनेवाला यहां कोई है? कलकत्तेकी सड़कोंपर घूमते हुए सैकड़ों अनाथ बालकोंकी दुर्दशाग्रस्त अवस्थाका हृदयद्रावक दृश्य देखकर किसका कलेजा मुंहमें नहीं आ जाता? अपने दुधमुंहे बच्चोंको गोदमें लेकर अभागिनी माताओंका बिलख बिलखकर "कोई एक रोटी दे दे बाबा" की आवाज सुनकर किसका पत्थरका कलेजा नहीं पसीज उठता—पर यहां कितने लखपतियोंने अपनी थैली इन अनाथों की रक्षाके लिये खोल दी है। यह अवश्य है कि ये अनाथ बिलकुल भूखे नहीं रह जाते, पर ईश्वरीय सृष्टिके निवासी इन अभागे जीवोंका केवल पेटकी ज्वाला शान्त करनेके लिये दिनभर बिलबिलाते रहना कैसा भयङ्कर दृश्य है? क्या किसी भारतीय धनकुबेरके कानोंतक हमारी यह आवाज पहुंच सकेगी?

और भी अनेक लोकहितकर कार्यों की ओर लक्ष्मीपात्रोंका ध्यान आकृष्ट किया जा सकता है। भारतके प्रायः सभी बड़े बड़े नगरोंमें विशेषकर कलकत्तेकी सड़कोंपर सर्वत्र गलित कुष्ठसे पीड़ित असहाय आबाल-वृद्ध-वनिताको देखकर लोग नाक भौं सिकोड़ते हैं। कोई कोई सहृदय उनकी दुर्दशापर दयार्द्रवित हो उन्हें अधेला पैसा दे भी दिया करते हैं, पर क्या इसीसे उन अभागे जीवोंका जीवन सुखमय हो जाता है? अपने पूर्वजन्मके दोषसे अथवा कुष्ठपीड़ित माता पिताके अनाचारसे ईश्वरीय सृष्टिके इन असहाय जीवोंको जो भयङ्कर यातना झेलनी पड़ती है—क्या इससे उनका उद्धार करनेका कोई उपाय नहीं है? आज ही एक भारतव्यापी सङ्गठन कुष्ठपीड़ितोंकी चिकित्सा तथा उनके भरण-पोषणकी यथेष्ट व्यवस्थाके लिये हो सकता है, पर इसके लिये पर्याप्त धन चाहिये। क्या भारत का कोई कारनेगी इस महान् पुण्यकार्यके लिये अपनी थैली खोलनेके लिये तैयार है? ऐसे कार्यके करनेसे बढ़कर धनका सदुपयोग दूसरा नहीं हो सकता है। इससे उन अभागे जीवोंका भी कल्याण होगा और उनकी छूतसे दूसरे मनुष्योंकी भी रक्षा हो सकेगी। समाजमें गलित कुष्ठके प्रचारको रोकनेका भी यही एक साधन है। हमें पूर्ण आशा है कि लोग इसपर ध्यान देंगे।

श्रीकारनेगीके आदर्शपर भारतमें भी 'वीर-सहायक कोष' 'शिक्षक सहायक कोष' 'दरिद्र विद्यार्थी-कोष' 'अनाथ विधवा सहायक कोष' आदिकी प्रतिष्ठा की जा सकती है। इससे

असंख्य दुर्दशाग्रस्त भारतवासियोंका जीवन सुखमय हो सकेगा। एक ऐसे कोषकी भी आवश्यकता है, जो मध्यवित्त गृहस्थोंको दुर्दशाके समय सहायता प्रदान कर सके। क्या हमारी पुकार भारतीय धनियोंके हृदयको दयार्द्रवित करनेमें समर्थ हो सकेगी?

श्रीकारनेगी "वसुधैव कुटुम्बकम्" के आदर्शको माननेवाले थे। इन्होंने लोकहितकर जो कुछ भी कार्य किये, उन्हें किसी देश विशेषकी सीमाके भीतर परिमित नहीं रखा। चरित्रनायक संसारको सुखी देखना चाहते थे और इसके लिये विश्वव्यापी शान्तिको आवश्यक समझते थे। अन्तर्राष्ट्रीय शान्तिके उद्योगके लिये १ करोड़ डालरका दान ही इस बातका ज्वलन्त प्रमाण है। 'हेग शान्ति मन्दिर' की प्रतिष्ठा भी इनके शान्तिप्रेमको चिर दिनोंतक संसारके राष्ट्रोंके सामने घोषित करती रहेगी। भूतपूर्व कैसरसे चरित्रनायकको बड़ी आशा थी, पर गत यूरोपीय महायुद्धने उनकी आशालतापर हिमपात कर दिया। कैसरके बाद विलसनकी ओर इनकी दृष्टि आकृष्ट हुई थी, पर यूरोपके कूट राजनीतिज्ञोंने किस प्रकार विलसनके प्रस्तावोंको रद्दीकी टोकरीमें डाल दिया, यह किसीसे छिपा नहीं है। चरित्रनायकका विश्वास था कि शीघ्र ही संसारके रङ्गमञ्चपर एक ऐसे महान् पुरुषका आविर्भाव होगा जो संसारमें शान्ति स्थापितकर अपना नाम अमर कर जायगा। इस सम्बन्धमें इस लेखकका आन्तरिक विश्वास है कि जगद्गुरु भारतवर्ष ही

संसारको शान्तिका पाठ पढ़ा सकता है। भौतिक सम्पत्तासे मदोन्मत्त और पशुबलकी श्रेष्ठतापर विश्वास रखनेवाले यूरोपीय या अमेरिकन राष्ट्रोंके लिये इस प्रश्नको हल करना अत्यन्त कठिन है। यह कार्य आध्यात्मिक बलपर विश्वास और भरोसा करनेवाले भारतवर्षके लिये ही सम्भव है। भारतवर्षने इसका आदर्श भी संसारके सामने प्रदर्शित करना आरम्भ कर दिया है। महात्मा गान्धीद्वारा प्रवर्तित भारतीय स्वतन्त्रताके युद्धने संसारको इस सम्बन्धमें कुछ कुछ आश्वासित अवश्य कर दिया है। बिना किसीका रक्त बहाये शत्रुओंके प्रति द्वेष-बुद्धि नहीं रखकर उन्हें प्रेमके बलसे अपने वशमें लाना और उन्हें अन्याय के मार्गसे हटाना यही हमारे असहयोग आन्दोलनका अमोघास्त्र है। भारत आज इस अपूर्व शस्त्रके द्वारा विदेशियोंके शासन रूपी मायाजालको दूर कर रहा है। सारा संसार आज टकटकी लगाकर भारतीय स्वतन्त्रताके युद्धको देख रहा है। सफलता अब निश्चित दिखायी पड़ रही है। फिर स्वतन्त्र भारतके अध्यक्षकी हैसियतसे महात्मा गान्धी संसारको अपनी मधुर ध्वनिमें क्या यह आश्वासन नहीं दे सकेंगे कि—हे संसारके राष्ट्रो! आपसमें पशुओंकी तरह मत लड़ो। विचारशील पुरुषोंके समान परस्पर प्रेम बन्धन रखने हीसे तुम्हारा कल्याण है। विश्वव्यापी शान्तिसे ही इस जगतकी सर्वाङ्गीण उन्नति हो सकती है और संसार स्वर्ग बन सकता है। अस्तु।